बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर परिनिर्वाण विशेषांक

वर्ष : 12 अंक : 12 दिसम्बर 2014 ₹ 20

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

चैत्य भूमि, दादर मुम्बई

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर का परिनिर्वाणोपरांत 7 दिसम्बर 1956 को अंतिम संस्कार किया गया

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित बाबासाहेब के 59वें महापरिनिर्वाण दिवस पर 6 दिसम्बर, 2014 को संसद भवन के प्रांगण में स्थित बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर की प्रतिमा पर पुष्पांजलि अर्पित करने के बाद राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी, प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी, उपराष्ट्रपति श्री हामिद अंसारी, केन्द्रीय मंत्री श्री रामविलास पासवान एवं अन्य

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

वर्ष : 12 ★ अंक : 12 ★ दिसम्बर 2014 ★ कुल पृष्ठ : 72

सम्पादक
सुधीर हिलसायन

सम्पादक मंडल
चन्द्रवली
प्रो. शैलेन्द्रकुमार शर्मा
डॉ. प्रभु चौधरी

सम्पादकीय कार्यालय
सामाजिक न्याय संदेश
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
15 **जनपथ, नई दिल्ली**-110001
सम्पादकीय सम्पर्क 011-23320588
सब्सक्रिप्शन सम्पर्क 011-23357625
मोबाईल : 07503210124
फैक्स : 011-23320582
ई.मेल : hilsayans@gmail.com
editorsnsp@gmail.com
वेबसाईट: www.ambedkarfoundation.nic.in
(सामाजिक न्याय संदेश उपर्युक्त वेबसाईट पर उपलब्ध है)

व्यापार व्यवस्थापक
जगदीश प्रसाद

प्रकाशक व मुद्रक **डॉ. देवेन्द्र कुमार धोदावत,** निदेशक (डॉ.अ.प्र.) द्वारा डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान (सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार) के लिए इंडिया ऑफसेट प्रेस, ए-1, मायापुरी इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-I, नई दिल्ली 110064 से मुद्रित तथा 15 जनपथ, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित व **सुधीर हिलसायन,** सम्पादक (डॉ.अ.प्र.) द्वारा सम्पादित।

सामाजिक न्याय संदेश में प्रकाशित लेखों/रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। प्रकाशित लेखों /रचनाओं में दिए गए तथ्य संबंधी विवादों का पूर्ण दायित्व लेखकों /रचनाकारों का है। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय-वस्तु के लिए भी सामाजिक न्याय संदेश उत्तरदायी नहीं है। समस्त कानूनी मामलों का निपटारा केवल दिल्ली/नई दिल्ली के क्षेत्र एवं न्यायालयों के अधीन होगा।

RNI No. : DELHIN/2002/9036

इस अंक में

❖ सम्पादकीय/चैत्य भूमि, दादर मुम्बई	सुधीर हिलसायन	3
❖ पुस्तक अंश/गोलमेज सम्मेलन में डॉ. अम्बेडकर		4–6
❖ विशेष लेख/ डॉ. अम्बेडकर द्वारा शिक्षा के प्रसार हेतु किए गए सतत् प्रयास	डॉ. धर्मकीर्ति	7–18
❖ डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जीवन काल, रचनाएं और परिस्थितियां	प्रो. सुषमा यादव	19–27
❖ उदारीकरण के युग में उच्च शिक्षा में दलितों की भागीदारी	डॉ. सन्त सरन	28–32
❖ ओमप्रकाश बाल्मीकि की कहानियों में दलित चेतना	माली विठोबा	33–34
❖ संगीत कला पारखी डॉ. अम्बेडकर	शान्ति स्वरूप बौद्ध	35–37
❖ नारी विमर्श : विविध आयाम	डॉ. दविंदर कौर होरा	38
❖ रूढ़ियों के निहितार्थ	तेजपाल सिंह 'तेज'	39–40
❖ उपन्यास अंश/अछूत	मुल्क राज आनन्द	41–49
❖ सामाजिक परिवर्तन पर डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण	कु. सुमति	50–53
❖ पुस्तक अंश/डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर– जीवन चरित	धनंजय कीर	54–66
❖ गज़ल/सामाजिक न्याय	दीपक कुमार	67–68

ग्राहक सदस्यता शुल्क : वार्षिक ₹ 100, द्विवार्षिक : ₹ 180, त्रैवार्षिक : ₹ 250
डिमांड ड्राफ्ट/मनीऑर्डर ***डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन,*** *15 जनपथ, नई दिल्ली-110001 के नाम भेजें। चेक स्वीकार नहीं किए जाएंगे।*

सम्पादक के नाम पत्र

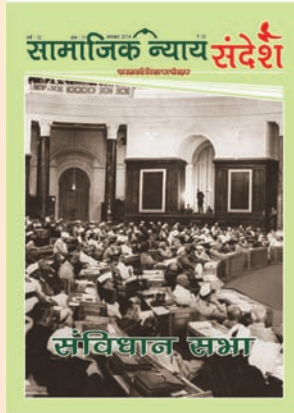

शिक्षित होने के साथ-साथ जानकारी भी

सम्पादक महोदय,

आज के युग में शिक्षित होने के साथ-साथ कुछ अधिक जानकारी और भी होनी चाहिए। मनुष्य शिक्षित तो हो रहा है। लेकिन किसी न किसी कारण खुद को व्यस्त रख कर अपने ही लोगों से दूर होता जा रहा है। ''सामाजिक न्याय संदेश'' पत्रिका में जो विचार बाबासाहेब के हैं, एवं कुछ लेखकों के हैं हमें पता चलता है कि हमें और इस भारत वर्ष को आज भी बहुत परिश्रम की जरूरत है। और यह बात सभी को बताने के लिए सबसे आसान तरीका है। सामाजिक न्याय संदेश पत्रिका द्वारा लोगों को जोड़ा जा सकता है एवं विचारों और योजनाओं को जानने के लिए भी इससे आसान और बेहतर तरीका कोई नहीं है।

मेरी आप सभी सदस्यों पाठकों से प्रार्थना है कि इस पत्रिका के सदस्य अधिक से अधिक बनवायें!

जतिन
बुलन्दशहर, उत्तर प्रदेश

पत्रिका का जीवन पर प्रभाव

सम्पादक महोदय,

सामाजिक न्याय संदेश पत्रिका में जो शब्द लिखे जाते हैं, जो चित्र दर्शाये जाते हैं। उसका प्रभाव मनुष्य से जुड़े हुए व्यवहार में बदलाव लाता है। ''सामाजिक न्याय संदेश'' जो पत्रिका है, विचारों के साथ-साथ सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय (भारत सरकार) की योजनाएं भी दर्शाती है। जिस तरह कठोर परिश्रम के साथ इस पत्रिका को निकाला जाता है एवं लोगों तक पहुंचाया जाता है, मैं सम्पादक जी का आभार व्यक्त करता हूं।

लोगों से आशा करता हूं, कि पूरे भारत वर्ष के साथ-साथ हम सबको मिलजुल कर इसे बाहर के लोगों तक भी पहुंचाना चाहिए।

कुमारी तान्या, S/o सुजीत सिंह
देहरादून

शिक्षा बहुसंख्यक छात्रों के लिए अन्तिम पड़ाव

सम्पादक महोदय,

माध्यमिक शिक्षा बहुसंख्यक छात्रों के लिए अन्तिम पड़ाव है। इसलिए स्कूली शिक्षा के अंत में प्रत्येक छात्र को स्वतंत्र रूप से विभिन्न व्यवसायों में प्रवेश करने के लिए सक्षम होना चाहिए। छात्र को सामाजिक, राजनीतिक, औद्योगिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में माध्यमिक विद्यालयों में होने वाले विशेष समारोहों में नेतृत्व को संभालने के लिए सक्षम बनाना चाहिए। सामाजिक न्याय संदेश पत्रिका में जो शिक्षा को लेकर दर्शाया गया है। बहुत ही बेतर तरीके से दर्शाया गया है। हमें इस पत्रिका से बहुत कुछ प्राप्त होता है। इसलिए हम सम्पादक जी से निवेदन करते हैं कि इस पत्रिका को बन्द न होने दें।

राज आर्यन S/o राजेन्द्र कुमार
गोकुलपुर शाहदरा, दिल्ली

भारत सरकार द्वारा योजनाएं

सम्पादक महोदय,

सम्पादक जी पत्रिका में मैंने पढ़ा और जाना कि किस प्रकार से भारत सरकार, आर्थिक सहायता करने में हमारी मदद करती है। यह पढ़कर मुझे बहुत अच्छा लगा कि जो जानकारी प्राप्त करने के लिए हमें इधर से उधर भटकना पड़ता था। लेकिन आपके द्वारा भेजी गयी सामाजिक न्याय संदेश पत्रिका को पाकर मैं बहुत खुश हुआ। इसके लिए मैं आपको नमन करता हूं। और जिस तरह से आप जनता के साथ चलकर जनता को शिक्षित एवं विकास की ओर ले जा रहे हैं मैं सदैव आपके साथ हूं।

रोहित कुमार
साहेबगंज, बिहार

सम्पादकीय

चैत्य भूमि, दादर मुम्बई

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर का जीवनचर्या अत्यधिक व्यस्त रहा है। समय को वह बहुत मूल्यवान समझते थे। समय का वह सदुपयोग करते रहे। वह क्रियावान दूरदर्शी युगपुरुष थे। उन्होंने जीवन में आराम-विश्राम न चाहा, न उन्हें मिला। रक्तचाप और मधुमेह की बीमारी से उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था। चलने में उन्हें कष्ट होता था। लाठी का सहारा लेकर चलते थे। परन्तु उनमें अविश्रान्त परिश्रम करने की शक्ति थी। जीवन के उत्साह से वह भरपूर थे, जब दलितों, वंचितों, उपेक्षितों के विकास की जिम्मेदारी का बोझ उन्होंने उठाया था। कहा था - **''आज मेरे ऊपर जितनी जिम्मेदारी है, उतनी संसार में किसी पर नहीं है, अगर मैं ज्यादा साल जीवित रहा, तो वह सब कर दिखाऊंगा।''**

डॉ. अम्बेडकर की शारीरिक स्थिति धूम फिर कर काम करने लायक नहीं थी, परन्तु फिर भी वह 1956 के विश्व बौद्ध सम्मेलन में शामिल होने के लिए एक बौद्ध नेता के रूप के रूप में नेपाल गए। वहां उनका **बौद्ध धम्म और कम्युनिज्म** पर भाषण हुआ। जिसमें उन्होंने कहा था कि **'यदि हम हिंसात्मक क्रान्ति के बिना साम्यवाद की स्थापना करना चाहते हैं, तो उसके लिए एकमात्र उपाय बौद्ध 'धम्म' की स्थापना ही है।'** नेपाल से लौटकर वह दिल्ली में राज्यसभा में उपस्थित होते रहे। उनके मस्तिष्क में बौद्ध धम्म प्रचार संबंधी विचार उफनते रहे। मन में कई योजनाएं थी। परिश्रमशीलता के वह आदर्श थे। उनका उत्साह अदम्य था।

वर्षों पहले डॉ. अम्बेडकर ने **भगवान बुद्ध और उनका धम्म** नामक ग्रंथ लिखना शुरू किया था। लिखना शुरू करते, संतोष नहीं होता तो, काट देते थे, फिर लिखते थे, फिर काट देते थे। इस बीच में उनके कई ग्रंथ प्रकाशित हुए, परन्तु 'भगवान बुद्ध और उनका धम्म' की पाण्डुलिपि में लगातार कांट-छांट होती रही। आखिरकार ग्रंथ पूरा हुआ। बुधवार 5 दिसम्बर 1956 की रात को **'भगवान बुद्ध और उनका धम्म'** की भूमिका लिखने के बाद बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर हमेशा-हमेशा के लिए चिरनिद्रा सो गए। यहां उल्लेखनीय है कि चिरनिद्रा में हमेशा-हमेशा के लिए सोने के पूर्व बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर ने रचनाओं की एक बड़ी दुनिया जो आज 'बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय' के रूप में हमारे सामने विद्यमान है, जिसके तहत बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर द्वारा लिखे गए लेखों, दिए गए भाषणों व अप्रकाशित रचनाओं, आदि को हिन्दी सहित विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रकाशित किया गया है, मौजूद है। वो भले ही सो गए हों लेकिन उनका वाङ्मय उनके सोये हुए लोगों को जगाने का काम इस कदर कर रही है जैसे वो अपने अनुयायियों के लिए जीवित ही हैं।

गुरूवार 6 दिसम्बर को सवेरे 6 बजे जब कोई चाय लेकर उनके बेडरूम में पहुंचा तब पता चला कि अब बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर हमेशा-हमेशा के लिए सो गए हैं। रात को किस समय उनका देहान्त हुआ, यह कोई जान न सका। जीवन भर अन्याय तथा अत्याचार के विरुद्ध सतत् संघर्ष करते हुए विद्रोह की आवाज बुलंद करने वाले बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर अपनी देह का अवसान करके राग और द्वेष से नाता तोड़कर बिना किसी तरह की आवाज़-आहट किए, चुपचाप ही चल दिए थे। बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर दलितों, वंचितों, उपेक्षितों, महिलाओं, मजदूरों के लिए जीवन पर्यंत लड़ने वाले ऐसे महानायक हुए हैं, जिनकी अंतिम यात्रा जब बम्बई के शांताक्रूज विमान स्थल से राजगृह के लिए प्रस्थान किया था, तो रास्ते में दोनों तरफ लाखों स्त्री-पुरुष आंखों में आंसू और हाथों में पुष्प लिए बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अंतिम दर्शन के लिए खड़े थे। जब उनका पार्थिव शरीर सुबह 5 बजे राजगृह पहुंचा वहां भी लाखों की संख्या में डॉ. अम्बेडकर के अनुयायी एकत्रित थे। जब शुक्रवार 7 दिसम्बर 1956 को 2 बजे बाबासाहेब की परिनिर्वाण यात्रा राजगृह से शुरू हुई, 3 मील की दूरी देर शाम को शिवाजी पार्क की चौपाटी पर पहुंची। यहां यह उल्लेखनीय है कि उनके चट्टाननुमा व्यक्तिव का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि उनकी परिनिर्वाण यात्रा में शामिल हुई भीड़ का रिकार्ड उस महानगर में या यह कहा जाए कि पूरे देश में अब तक टूट नहीं पाया, तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं है। जिस जगह पर उनका अंतिम संस्कार किया गया वह स्थल चैत्य भूमि के नाम से विख्यात है, जो दादर के समुद्र तट पर स्थित है। उनके अनुयायी प्रत्येक वर्ष परिनिर्वाण दिवस के अवसर पर लाखों की संख्या में पहुंचकर वहां अपनी श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

सुधीर हिलसायन

(सुधीर हिलसायन)

पुस्तक अंश: बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय खंड-5

गोलमेज सम्मेलन में डॉ. अम्बेडकर

अल्पसंख्यक समिति

श्री गांधी: प्रधानमंत्री जी और मित्रो! विभिन्न वर्ग के प्रतिनिधियों में और उनके साथ अनौपचारिक बातचीत के द्वारा सांप्रदायिक समस्या का सर्वसम्मत हल निकालने की कोशिश में अपनी असफसला की घोषणा मुझे बड़े खेद और दैन्य के साथ करनी पड़ रही है। प्रधानमंत्री जी! मैं आपसे और अन्य सहयोगियों से माफी मांगता हूं कि एक हफ्ते का मूल्यवान समय बेकार चला गया। मुझे संतोष सिर्फ इस बात में है कि जब मैंने इस बातचीत को कराने का दायित्व लिया था, तब मुझे मालूम था कि सफलता की कोई आशा नहीं है। मुझे इस बात का भी संतोष है कि मैंने हल निकालने के लिए हर संभव कोशिश की। लेकिन अगर मैं यह कहूं कि बातचीत का नाकामयाब होना हमारे लिए शर्म की बात है, तो इससे पूरी सच्चाई व्यक्त नहीं होती। हममें से प्राय: सभी लोग उस दल या वर्ग के चुने हुए प्रतिनिधि नहीं हैं, जिनके हम प्रतिनिधि कहे जाते हैं। हम यहां सरकार द्वारा नामजद होने की वजह से हैं। हम लोग ऐसे व्यक्ति नहीं हैं, सर्वसम्मत हल पाने के लिए जिनकी यहां पर होने की भारी जरूरत थी। इसके अलावा, कृपया मुझे यह कहने की अनुमति दें कि अभी अल्पसंख्यक समिति की बैठकें बुलाने का कोई उचित समय नहीं था। यह असलियत भी नहीं है, क्योंकि हम यह निश्चित रीति से नहीं जानते थे कि इस बातचीत के बाद हमें क्या मिलने वाला है। अगर हम निश्चित रूप से यह जानते होते कि जो कुछ हम चाहते हैं, हमें मिल जाएगा तब हम बातचीत को कलह की टोकरी में डालने से पहले दो बार अवश्य सोचते। यह ऐसा ही था कि मानों हमें बताया गया हो। इस बातचीत से किसी निष्कर्ष पर पहुंचना मौजूदा प्रतिनिधि द्वारा सांप्रदायिक समस्या का सर्वसम्मत हल निकालने की योग्यता पर निर्भर करता है। यह समाधान स्वराज के संविधान का मुकुट तो बन सकता हैं, उसकी नींव नहीं बन सकता। ऐसा इसलिए हो गया है कि हमारे मतभेद स्थायी हो गए हैं और अगर वह पैदा नहीं हुए हैं तो इसकी वजह विदेशी हुकूमत है। मुझे इस बात में तनिक भी शक नहीं कि सांप्रदायिक मतभेदों का हिमशैल स्वतंत्रता के सूरज का ताप पाकर पिघल जाएगा।

मैं इसलिए यह सुझाव देने की धृष्टता कर रहा हूं कि अल्पसंख्यक समिति को अनिश्चित काल तक के लिए स्थगित कर दिया जाए और संविधान के मूल-भूत सिद्धांतों को जितनी जल्दी हो सके, उतनी जल्दी तय कर दिया जाए। इस बीच सांप्रदायिक समस्या का अनौपचारिक रूप से कोई वास्तविक समाधान ढूंढने का काम जारी रहेगा और जारी रहना चाहिए। इस कारण संविधान के बनाने के काम को रूकने देना नहीं चाहिए। हमें इस तरफ से ध्यान हटा लेना चाहिए और संरचना के मुख्य भाग के निर्माण पर सारा ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

आखिरी बात यह है कि इस विचार-विमर्श में मेरे भाग लेने की सिर्फ एक ही वजह है कि मैं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रतिनिधि हूं। मुझे इसकी स्थिति स्पष्ट कर देनी चाहिए। आपको जो कुछ दिखाई देता

है, खासतौर से इंग्लैंड में, उसके उल्टे कांग्रेस सारे देश का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती है। यह निश्चित रूप से लाखों गूंगे लोगों का प्रतिनिधि होने का भी दावा करती है, जिनमें ढेर सारे अस्पृश्य शामिल हैं, जिन्हें दलित कहने के बजाय कुचला ज्यादा गया है और वे लोग भी शामिल हैं, जो एक तरह से बहुत ही अभागे और उपेक्षित हैं और जिन्हें पिछड़ा वर्ग कहा जाता है।

ऐसा कहा गया लगता है कि विधान-मंडल में अस्पृश्यों का कोई भी प्रतिनिधित्व दिए जाने के खिलाफ हूं। यह असलियत से उल्टी बात है। मैंने जो कुछ कहा और जिसे मैं दुहरा रहा हूं, वह यह है कि मैं आपका विशेष प्रतिनिधित्व होने के खिलाफ हूं। मैं यह अच्छी तरह मानता हूं कि इससे उन्हें कोई लाभ नहीं होगा, उल्टे ज्यादा नुकसान ही होगा। लेकिन कांग्रेस वयस्क मताधिकार के लिए कृत संकल्प है। इसलिए उनमें से लाखों लोगों के नाम मतदाताओं की सूची में आ जाएंगे। अस्पृश्यता की भावना तेजी से खत्म होती जा रही है। ऐसी स्थिति में यह असंभव सा लगता है कि इन मतदाताओं के द्वारा नामजद व्यक्तियों का दूसरे लोगों के द्वारा बायकाट किया जाएगा, लेकिन इन व्यक्तियों के लिए विधान-मंडलों में चुनकर आने की अपेक्षा सामाजिक और धार्मिक उत्पीड़न से सुरक्षा की अधिक आवश्यकता है। हमारे आचार-विचार से जो अक्सर कानून से ज्यादा शक्तिशाली हैं, उन्हें इतना गिरा दिया है कि हर समझदार हिन्दू को लज्जा का अनुभव करना चाहिए और इसके लिए पश्चाताप करना चाहिए। इसलिए मैं कठोर से कठोर कानून चाहता हूं, जिसके अधीन इस प्रकार के आचार-विचार अपराध घोषित किए जा सकें, जो श्रेष्ठ कहे जाने वाले वर्ग के लोग मेरे देश के इन निवासियों पर कर रहे हैं। ईश्वर का धन्यवाद, हिन्दुओं का विवेक जाग गया है, अस्पृश्यता की भावना अब शीघ्र ही हमारे इतिहास के एक कलंक का अवशेष बनकर रह जाएगी।

डॉ॰ अम्बेडकर: प्रधानमंत्री जी! पिछली रात जब हम अनौपचारिक समिति की बैठक के समाप्त होने के बाद एक-दूसरे से विदा हुए थे, तब हम असफलता की भावना के साथ एक-दूसरे से विदा हुए थे। लेकिन हम सब एक बात पर सहमत थे कि हममें से कोई भी कोई भाषण या ऐसा टिप्पणी नहीं करेगा, जिससे उत्तेजना पैदा हो। लेकिन मुझे यह देखकर दु:ख हुआ कि श्री गांधी ने इस समझौते को भंग किया है। क्षमा कीजिए, मुझे भी बोलने का मौका मिलना चाहिए। उन्होंने शुरूआत अनौपचारिक समिति की असफलता के कारणों को जो उनके विचार से थे, बताते हुए की। अब मेरे भी कारण हैं, जो मेरे विचार से किसी समझौते पर अनौपचारिक बैठक के न पहुंचने के पीछे थे। लेकिन इन कारणों की इस समय मैं व्याख्या नहीं करना चाहता। मुझे दो बातों से दुख हुआ है। पहली बात है कि अपने प्रस्ताव तक अर्थात अल्पसंख्यक समिति की बैठक अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर देनी चाहिए, अपने को सीमित रखने के बजाय, उन्होंने विभिन्न समुदायों के प्रतिनिधियों पर छींटाकशी करनी शुरू कर दी, जो इस बैठक में बैठे हुए थे। उन्होंने कहा कि ये प्रतिनिधि सरकार के नामजद लोग हैं और अपने-अपने समुदाय के दृष्टिकोण को व्यक्त नहीं कर रहे हैं, जिसके कि वे प्रतिनिधि हैं। हम सरकार के नामजद लोग हैं, इस आरोप का खंडन तो नहीं कर सकते, लेकिन मैं अपने बारे में बता रहा हूं कि मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि अगर भारत के दलित वर्ग के लोगों को इस समिति के लिए प्रतिनिधि चुनने का मौका दिया गया, तब मुझे यही स्थान मिलेगा। मैं इसलिए कहता हं कि चाहे मैं नामजद होऊँ या नहीं, मैं पूरी तरह से अपने समुदाय का प्रतिनिधि हूं। किसी को इस बारे में कोई भ्रम नहीं होना चाहिए।

श्री गांधी हमेशा से यह दावा करते आ रहे हैं कि कांग्रेस दलित वर्ग के लिए है और कांग्रेस दलित वर्गों का उससे ज्यादा प्रतिनिधित्व करती है, जितना मैं व मेरे साथी कर सकते हैं। इस दावे के बारे में, मैं इतना ही कह सकता हूं कि यह भी एक ऐसा दावा है, जो गैर जिम्मेदार लोग करते या किया करते हैं, हालांकि जो लोग इनसे संबंधित हैं, वे इन दावों को लगातार अस्वीकार करते रहे हैं।

मेरे पास यहां टेलीग्राम है, जो मुझे अभी-अभी मिला है। यह ऐसी जगह से आया है, जहां मैं कभी नहीं गया हूं। यह ऐसे व्यक्ति ने भेजा है, जिसे मैंने कभी नहीं देखा। यह अध्यक्ष, दलित वर्ग संघ, कुमाऊं, अलमोड़ा, ने भेजा है। यह जगह शायद संयुक्त प्रांत में है। इस तार में कहा गया है:

यह सभा कांग्रेस आंदोलन में जो इस देश के भीतर और बाहर चलाया जा रहा है, अविश्वास व्यक्त करती है और कांग्रेस के कार्यकर्ताओं द्वारा अपनाए गए उपायों की निन्दा करती है।

मैं आगे नहीं पढ़ना चाहता। लेकिन मैं यह कह सकता हूं (और मेरा ख्याल है कि जब श्री गांधी अपनी स्थिति पर ध्यान देंगे, तब उन्हें सच्चाई का पता चल जाएगा) कि कांग्रेस में ऐसे लोग हो सकते हैं, जिनकी दलित वर्गों के प्रति सहानुभूति हो। लेकिन दलित वर्ग के लोग कांग्रेस में नहीं हैं। यह एक तथ्य है, जिसके लिए मैं प्रमाण प्रस्तुत करना चाहता हूं। मैं इन विवादास्पद मुद्दों में नहीं पड़ना चाहता। ये कुछ हद तक मुख्य समस्या से बाहर की बात लगती हैं। श्री गांधी ने इस समिति के सम्मुख, जो मुख्य प्रस्ताव रखा, वह यह कि अल्पसंख्यक समिति को अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया जाना चाहिए। इस प्रस्ताव के बारे में माननीय मोहम्मद शफी ने, जो दृष्टिकोण अपनाया, उससे मैं पूरी तरह

सहमत हूं। लेकिन मैं इस प्रस्ताव पर अपनी सहमति नहीं दे सकता। मुझे ऐसा लगता है कि अब दो ही विकल्प हैं- या तो यह कि अल्पसंख्यक समिति इस समस्या को सुलझाने और किसी संतोषप्रद हल, अगर यह संभव है, तो उसे ढूंढने के लिए अपने प्रयत्न जारी रखे और अगर यह संभव न हो, तब ब्रिटिश सरकार इस समस्या को खुद हल करने का दायित्व स्वीकार करे। हम इस समस्या को तीसरे पक्ष के विवेचन के लिए छोड़ने के लिए सहमति नहीं दे सकते, जिसमें उत्तरादायित्व की वही भावना हो, जैसी कि ब्रिटिश सरकार में उत्तरदायित्व की भावना होनी चाहिए।

प्रधानमंत्री जी! मुझे एक बात स्पष्ट कर देने की अनुमति दीजिए। दलित वर्ग इसके लिए उत्सुक नहीं है, शोर नही मचा रहा है, उसने कोई आंदोलन नहीं छेड़ रखा है कि ब्रिटिश लोगों से सत्ता तुरंत भारतीयों को सौंपी जानी चाहिए। ब्रिटिश लोगों के खिलाफ उनकी अपनी शिकायतें हैं और मैं समझता हूं कि मैंने उनकी भावनाओं को स्पष्ट करने के लिए यह यथेष्ट रूप से व्यक्त भी कर दिया है कि हमारी ये शिकायतें वास्तविक हैं। लेकिन सच बात यह है कि दलित वर्गो के लोग राजनीतिक सत्ता का हस्तांतरण किए जाने के लिए उत्सुक नहीं हैं उनकी स्थिति साफ शब्दों में यदि बताई जाए, तो यह है कि हम सत्ता का हस्तांतरण नहीं चाहते। लेकिन अगर ब्रिटिश सरकार इन शक्तियों को दबाने में असमर्थ है, जो देश में सत्ता के हस्तांतरण के लिए हो-हल्ला मचाए हुए हैं-और हम जानते हैं कि दलित वर्गो के लोग इन शक्तियों का मुकाबला करने की स्थिति में नहीं हैं-तब हमारा निवेदन है कि अगर आप यह हस्तांतरण करते हैं, तब इस हस्तांतरण के साथ ऐसी शर्त और ऐसा प्रावधान होना चाहिए कि सत्ता किसी गुट, किसी अल्पतंत्र, कुछ लोगों के वर्ग के हाथों में नहीं आ जाएगी, वो चाहे मुसलमान हो या हिन्दू, बल्कि इसका समाधान ऐसा होगा कि इस सत्ता में सारे समदायों की अपने-अपने अनुपात के अनुसार साझेदारी होगी। इसलिए, मेरी समझ में यह नहीं आ रहा कि जब तक मुझे यह पता न चल जाए कि मेरी या मेरे समुदाय की स्थिति क्या है, तब तक मैं इस संघीय संरचना समिति के विचार-विमर्श में किस प्रकार कोई दायित्वपूर्ण भाग ले सकता हूं।

श्री गांधी : अस्पृश्य कहे जाने वाले लोगों के बारे में एक बात और है। मैं अन्य अल्पसंख्यकों के द्वारा उठाए गए दावों को समझ सकता हूं, लेकिन अस्पृश्य लोगों की तरफ से किए जाने वाले दावे रह जाते हैं, जिनकी सभी बेरहमी के साथ उपेक्षा करते आए हैं। इसका मतलब है कि हमने उन्हें हमेशा के लिए बदनसीब बना दिया है। मैं अस्पृश्यों के जीने के अधिकार को नहीं छीनूंगा, चाहे यह भारत के लिए आजादी हासिल करने की शर्त ही क्यों न हो। मैं खुद को असंख्य अस्पृष्यों का नुमाइंदा कहता हूं। यहां मैं सिर्फ कांग्रेस की ओर से ही नहीं, बल्कि अपनी ओर से बोलता हूं और मेरा दावा है कि अगर अस्पृश्यों का मत लिया जाएगा, तब उनके सबसे ज्यादा मत मेरे पक्ष में होंगे और मैं देश में एक कोने से दूसरे कोने तक यह बताने का काम करूंगा कि अस्पृश्यता के इस कलंक को पृथक निर्वाचन पद्धति और पृथक आरक्षण से दूर नहीं किया जा सकता, जो उनके लिए नहीं, बल्कि कट्टर हिन्दुओं के लिए शर्म की बात है।

मै। चाहता हूं कि यह समिति और सारी दुनिया इस बात को समझे कि आज हिन्दू सुधारवादियों की एक जमात है, जो अस्पृश्यता के इस कलंक को मिटाने के लिए कृत संकल्प है। हम अपने कागजों में जनसंख्या के आंकड़ों में अस्पृश्यों को एक पृथक वर्ग के रूप में ही नहीं चाहते। सिख हमेशा सिख के रूप में रहें, इसी तरह मुसलमान और यूरोपियन भी। क्या अस्पृश्य हमेशा अस्पृश्य रहेंगे? अगर अस्पृश्यता रहेगी, तब मुझे डर है कि कहीं हिन्दुत्व न खत्म हो जाए। इसलिए मैं डॉ॰ अम्बेडकर के प्रति और उनकी इच्छा के प्रति कि अस्पृश्यों का उद्धार हो और उनकी योग्यता के प्रति पूरे आदर के साथ अत्यंत विनम्रतापूर्वक यह कहना चाहता हूं कि उन्होंने जिन अत्याचारों को झेला है और उन्हें जो कड़वे अनुभव हुए हैं, उनके इस निर्णय की पृष्ठिभूमि में यही काम कर रहे हैं। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है। लेकिन अगर मैं यह सब न कहूं तब मैं अस्पृश्यों के हितों के प्रति निष्ठावान नहीं रहूंगा, जो मुझे अपनी जिंदगी से भी ज्यादा प्यारे हैं, अगर मैं कुछ न बोलूं कि मैं सारे संसार के स्वामित्व के लिए भी उनके अधिकारों के साथ कोई सौदेबाजी नहीं करूंगा। मैं यह बात पूरे उत्तरदायित्व के साथ कह रहा हूं और मैं यह कहता हूं कि जब डॉ॰ अम्बेडकर भारत के सारे अस्पृश्य की बात कहते हैं, तब उनका यह कहना उचित नहीं है कि उनके वही एक मात्र प्रतिनिधि हैं। ऐसा कहने अथवा करने से हिन्दुत्व बंट जाता है, ऐसा करने से मुझे कोई खुशी नहीं होगी। अगर अस्पृश्य लोग इस्लाम या ईसाई धर्म स्वीकार कर लेते हैं, तब मैं कर भी क्या सकता हूं। मुझे यह सब बर्दाश्त करना होगा। लेकिन अगर गांवों में घर बंट सकते हैं, तब ऐसा हिन्दुत्व किस काम का? मैं इसे सहन नहीं कर सकता। जो लोग अस्पृश्यों के लिए राजनीतिक अधिकार की बातें करते हैं, वे लोग अपने भारत को नहीं समझते, वे यह नहीं समझते कि आज भारतीय समाज की स्थिति कैसी है। इसलिए मैं अपने पूरे जोर के साथ कहना चाहता हूं कि अगर इसकी मुखालफत मुझे अकेले ही करनी पड़ी, तब मैं सारी जिंदगी इसकी मुखालफत करता रहूंगा। ■

(शेष अगले अंक में)

डॉ. अम्बेडकर द्वारा शिक्षा के प्रसार हेतु किए गए सतत् प्रयास

■ डॉ. धर्मकीर्ति

डॉ. अम्बेडकर को बाल्यावस्था से लेकर युवावस्था तक शिक्षा प्राप्त करने में अनेक कठिनाइयों और समाज में व्याप्त अमानवीय अस्पृश्यता का कटु अनुभव करना पड़ा था। महार होने के कारण अध्यापकों और छात्रों के द्वारा अस्पृश्यता का व्यवहार करने के कारण बालक भीमराव के व्यक्तित्व को झकझोर कर रख दिया था। विद्यालयों और समाज में विपरीत परिस्थितियों के होते हुए भी उनके पिता भीमराव को अच्छी से अच्छी शिक्षा प्रदान करना चाहते थे।

उनके पिता की यह प्रबल इच्छा थी कि भीमराव संस्कृत भाषा का अध्ययन करे, क्योंकि उनकी यह मान्यता थी कि संस्कृत भाषा ही एक ऐसी भाषा है, जिसमें उच्च कोटि का आध्यात्मिक ज्ञान, नैतिकता और धार्मिक मान्यताएं भरी पड़ी हैं और संस्कृत भाषा के अध्ययन से ही मनुष्य के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास संभव हो सकता है। उनकी यह भी धारणा थी कि इससे समाज में सम्मान बढ़ता है और मन तेजस्वी होता है। वह चाहते थे कि उनके बच्चे संस्कृत पढ़ें, बुद्धिमान हों और पण्डित के रूप में उन्हें प्रसिद्धि प्राप्त हो। उन्होंने यह निर्णय किया कि उनका सबसे बड़ा पुत्र आनंदराव संस्कृत भाषा का अध्ययन करे। किन्तु सतारा के माध्यमिक स्कूल में संस्कृत के अध्यापक ने उन्हें संस्कृत पढ़ाने से इन्कार करते हुए कहा, 'मैं महार के बच्चों को संस्कृत नहीं पढ़ाऊंगा। संस्कृत अध्ययन का अर्थ है, वेद-पठन की कुंजी। शूद्रों और अति-शूद्रों के लिए वेदाध्ययन करना बड़ा अपराध है।'[1] शिक्षा प्राप्त करते

समय इस प्रकार की अमानवीय बातें उनके चेतन एवं अचेतन मन में घर कर गई थीं। वह सर्वदा इस चिंतन-मनन में लगे रहते थे कि भारत के शूद्रों और अस्पृश्यों को किस प्रकार इस पाशविक एवं नारकीय जीवन से छुटकारा प्राप्त हो सके।

जनवरी 1913 में भीमराव अम्बेडकर के द्वारा बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली गई। गुरुवर कृष्णाजी कैल्युस्कर की सिफारिश पर महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ के द्वारा उन्हें अमरीका में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रवृत्ति स्वीकार कर दी गई और भीमराव अम्बेडकर ने 20 जुलाई, 1913 को अमरीका के प्रसिद्ध शहर न्यूयार्क में स्थित विश्व प्रसिद्ध कोलंबिया विश्वविद्यालय की राज्यशास्त्र शाखा में प्रवेश ले लिया। यहां पर अठारह घंटे प्रतिदिन अध्ययन करके कठोर परिश्रम करते हुए, 15 मई, 1915 को उन्होंने 'एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड फाइनेन्स ऑफ ईस्ट इण्डिया कम्पनी' नामक विषय पर एम.ए. की उपाधि के लिए शोध-प्रबंध प्रस्तुत किया और 2 जून, 1915 को एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली।

युवक भीमराव अम्बेडकर को भारत में व्याप्त जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता ने मानसिक स्तर पर इतना आतंकित एवं परेशान कर रखा था कि वह दिन-रात इस समस्या का स्थायी समाधान करके शूद्रों और अस्पृश्यों को अस्पृश्यता के नारकीय जीवन से छुटकारा दिलाना चाहते थे। सैन्य विज्ञान का यह सिद्धांत होता है कि यदि आप अपने शत्रु से युद्ध करके उसे परास्त करना चाहते हैं, तो पहले यह ज्ञात करना पड़ेगा कि शत्रु के शस्त्रागार में कौन-कौन से और किस प्रकार के हथियार हैं? उसी अवस्था में आप शत्रु से युद्ध करने के लिए सक्षम हो सकेंगे और उसके बाद ही आप उसे परास्त करने की कल्पना कर सकते हैं। इसके लिए भीमराव अम्बेडकर ने भारत

में वर्ण–व्यवस्था, जातिवाद और अस्पृस्यता संबंधी उपलब्ध साहित्य का गंभीर अध्ययन किया और उन्होंने यह कार्य कोलम्बिया विश्वविद्यालय में भी जारी रखा। 9 मई, 1916 को इसी विश्वविद्यालय में 'कास्ट्स इन इण्डिया–देअर मैकेनिज़्म जैनिसिस एण्ड डवलपमेंट'[2] नामक शीर्षक पर एक शोध निबंध लिखा, जिसे कोलंबिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. ए.ए. गोल्डनवेअर के द्वारा आयोजित मानववंशशास्त्र (anthropology) विषय के छात्रों एवं शोधकर्ताओं के समक्ष विचार–गोष्ठी में प्रस्तुत किया था, जिसकी भूरि–भूरि प्रशंसा हुई। बाद में यह लेख डॉ. अम्बेडकर की कृतियों में सर्वप्रथम पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ था।

जिस प्रकार जूते पहनने वाला व्यक्ति जानता है कि उसके पैर में जूता कहां काट रहा है, उसी प्रकार डॉ. अम्बेडकर इस बात को भली–भांति जानते थे कि शूद्रों, अतिशूद्रों और अस्पृश्यों का कल्याण बिना शिक्षा के सम्भव नहीं है। इसके लिए वह जीवन भर प्रयत्न करते रहे थे। डॉ. अम्बेडकर 17 अगस्त, 1917 को अमरीका से भारत वापिस आए थे। 21 मार्च, 1920 के दिन मानगांव कोल्हापुर में उनका स्वागत हुआ था। उस अवसर पर शाहूजी महाराज कोल्हापुर के राजा ने कहा था, 'अब मुझे विश्वास हो गया है कि आप लोगों को आपका संरक्षक मिल गया है। मेरा मन कह रहा है कि ये आपकी दासता की बेड़ियों को तोड़ेंगे। ये एक दिन बड़े नेता बनेंगे और न केवल आपका, बल्कि सारे देश का उद्धार करेंगे।'[3]

डॉ. अम्बेडकर के मानवीय दृष्टिकोण से प्रभावित होकर दामोदर हॉल बम्बई में एक विशाल सभा का आयोजन किया गया, जिसमें काफी सुधारवादी हिन्दू और पारसी उपस्थित हुए थे। इस सभा में एक प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किया गया कि अस्पृश्यों को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और शैक्षिक उन्नति के लिए एक केन्द्रिय संगठन की स्थापना की जाए। उस प्रस्ताव के अनुसार 20 जुलाई, 1924 के दिन 'बहिष्कृत हितकारणी सभा' की स्थापना की गई। उसके निम्नलिखित उद्देश्य थे–

1. अस्पृश्यों, दलितों और पिछड़े वर्गों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए छात्रावास और इस कार्य के लिए योग्य और उचित प्रकार से साधनों को जुटाना।
2. उद्योग और कृषि स्कूलों की स्थापनाओं के द्वारा अस्पृश्यों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना और उन्नति करना।
3. सभी स्थानों में अस्पृश्यों पर होने वाले अत्याचारों और अत्याचारों के इतिहास को लिपिबद्ध करना और जनता की जानकारी के लिए उसे प्रकाशित करना। शोषितों, दलितों और अस्पृश्यों की शिकायतों को सुनना और उनके दूर करने के उपायों को सुझाना।

'बहिष्कृत हितकारणी सभा' की जिस कार्य–योजना का निर्माण किया गया था, उसका प्रत्यक्ष एवं परोक्ष उद्देश्य शोषितों, दलितों और अस्पृश्यों में शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना था, जिससे वे जागरूक बनकर अपनी उन्नति एवं विकास कर सकें। 'इन विचारों के साथ बाबासाहेब के मन में एक अन्तर्द्वन्द्व चल रहा था। वे जानते थे कि हिन्दू हमारा कभी उद्धार नहीं करेगा, हमें स्वयं ही संघर्ष करना होगा। इंग्लैंड से दुबारा वापिस आने के बाद, उन्होंने स्वयं सम्मान के लिए संघर्ष प्रारंभ किया था। उन्होंने घोषणा की थी, कि सम्मानपूर्वक जीना हर सबका जन्मसिद्ध अधिकार है। उसे वे जन–बल के साथ प्रभावकारी बनाना चाहते हैं, उसके लिए वे शिक्षा के महत्त्व को मानते थे।'[4]

डॉ. अम्बेडकर को बहिष्कृत हितकारिणी सभा के कार्य–कलापों पर विश्वास नहीं था। इसलिए उन्होंने निष्कर्ष प्राप्त किया था कि उन्हें जो कुछ भी करना है स्वयं ही करना है। उन्होंने शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए शिक्षा समितियों का गठन करना आवश्यक समझा और स्वयं उन्होंने इसी उद्देश्य की प्राप्ति के हेतु सोलापुर, महाराष्ट्र में 8 जनवरी, 1925 को अस्पृश्य छात्रों के लिए छात्रावास की स्थापना की। इसी सभा की ओर से अपने विद्यार्थियों के लिए कपड़ों, पुस्तकों, भोजन और निवास का प्रबंध किया गया था। इस छात्रावास के खर्च के लिए नगर पालिका सोलापुर से 210 रुपये का अनुदान दिया गया था। डॉ. अम्बेडकर के द्वारा छात्रावास खोलने की बात को इसलिए प्राथमिकता दी गई थी कि घर में पढ़ने के स्थान का अभाव होने के कारण वे स्वयं पार्क में जाकर अध्ययन करते थे। उस समय सभी दलितों, शोषितों और अस्पृश्यों के निवास के लिए समुचित स्थान नहीं थे, उस अवस्था में इन वर्गों के छात्रों के लिए छात्रावासों में ही उपयुक्त स्थान हो सकता था। इसी विचार से प्रेरित होकर डॉ. अम्बेडकर ने दलितों, शोषितों और अस्पृश्यों के छात्रों के लिए पहले छात्रावासों की स्थापना की।

सन् 1926 में डॉ. अम्बेडकर को विधानसभा में मनोनीत किया गया। उस समय उन्होंने बम्बई सरकार (उस समय बम्बई एक प्रांत था) को बाध्य किया था कि सम्पूर्ण महाराष्ट्र में अस्पृश्य छात्रों के लिए निशुल्क छात्रावासों की व्यवस्था की जाए। सरकार ने उनके परामर्श को स्वीकार करके कई सरकारी छात्रावास खोले। जिनमें अस्पृश्य छात्रों को निशुल्क निवास आदि की व्यवस्था सरकार की ओर से की जाती थी। इसके साथ ही साथ स्वयंसेवी संस्थाओं (N.G.Os.) के द्वारा स्थापित और संचालित छात्रावासों को अनुदान दिए जाते थे।

इस पुस्तक के आरंभ में, यह बताया जा चुका है कि डॉ. अम्बेडकर क्रिकेट के कुशल खिलाड़ी की भांति अनुकूल गेंद आने पर छक्का जड़ दिया करते थे। यहां पर मैं प्रबुद्ध पाठकों की जानकारी के लिए एक महत्त्वपूर्ण और चिरस्मरणीय घटना का

जिक्र करना चाहूंगा, जिसमें उन्होंने किस प्रकार शोषित, दलित और अस्पृश्य वर्गों के छात्रों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए अंग्रेजी सरकार से सिफारिश करके विदेश भिजवाया था। घटना उस समय की है जब डॉ. अम्बेडकर वायसराय लिनलिथगो के मंत्रीमण्डल में मनोनीत सदस्य थे। किस प्रकार उन्होंने स्थिति को दलितों और अस्पृश्यों में उच्च शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिए प्रयोग किया, यह प्रशंसनीय और आश्चर्यजनक बात है।

एक दिन डॉ. अम्बेडकर ने भारत के वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो को इस आशय का स्मृति-पत्र दिया, जिसमें अकाट्य तर्क दिया गया था कि सरकार बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय और अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी को प्रतिवर्ष तीन-तीन लाख रुपये अनुदान के रूप में देती है। उतनी ही धनराशि अस्पृश्यों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए दी जानी चाहिए। इस तर्क को सुनकर वायसराय लिनलिथगो अनुदान देने के लिए तैयार हो गए। लेकिन अस्पृश्यों के हिन्दुओं और मुसलमानों की भांति कोई विश्वविद्यालय नहीं थे। इसलिए इस धनराशि को अस्पृश्यों की प्राथमिक शिक्षा पर व्यय करने का सुझाव वायसराय के द्वारा प्रस्तुत किया गया। यह जानकर डॉ. अम्बेडकर स्वयं लॉर्ड लिनलिथगो से मिलने गए और उनसे कहा, 'प्राइमरी स्कूलों की व्यवस्था म्यूनिसिपल बोर्ड और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड करते हैं। इस धन को प्राइमरी शिक्षा पर व्यय करने की आवश्यकता नहीं है। इस धनराशि को अस्पृश्यों की उच्च शिक्षा पर व्यय करने की आवश्यकता है।'[5]

लॉर्ड लिनलिथगो ने डॉ. अम्बेडकर के इस तर्क को मानकर उस धनराशि को मैट्रिक और मैट्रिकोत्तर शिक्षा पर व्यय करने की सहमति प्रदान कर दी। इस सहमति के समय डॉ. अम्बेडकर ने वायसराय से कहा था, 'क्या मैं पांच सौ गेजुएटों के बराबर नहीं हूं?' वायसराय ने उत्तर दिया, 'निस्संदेह आप हैं।' अपने विचार को पुनः व्यक्त करते और अपनी बात को जारी रखते हुए टिप्पणी की, 'महामहिम जी! तब फिर आप क्लर्कों की फौज क्यों बना रहे हैं? मेरे जैसे योग्य व्यक्ति क्यों नहीं तैयार करते? अस्पृश्य बालकों को ऊंची शिक्षा पाने के लिए विदेश में शिक्षा प्राप्त करने के लिए इस धन राशि को व्यय करें। जिससे इनको ऊंची शिक्षा मिलेगी ही और साथ ही साथ उनके विचार करने और रहन-सहन का ढंग भी बदल जाएगा। बाहर विदेशों में समानता का व्यवहार उनमें आत्मसम्मान भी पैदा करेगा। यदि मैं स्वयं ऊंची शिक्षा पाए हुए नहीं होता, तो मुझे केन्द्रीय मंत्रीमण्डल में मनोनीत नहीं किया जाता। मैं चाहता हूं कि मेरे समाज में मेरे जैसे शिक्षित व्यक्ति हों।'[6] डॉ. अम्बेडकर नहीं चाहते थे कि अस्पृश्य वर्ग के युवक भारत की मनुवादी व्यवस्था में ही पढ़कर कुएं के मेंढ़क बनकर ही रह जाएं। लॉर्ड लिनलिथगो डॉ. अम्बेडकर की बातों से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने वह अनुदान विदेशों के विश्वविद्यालयों में योग्य अस्पृश्य छात्रों को शिक्षा पाने के लिए व्यय करना स्वीकार किया। 'डॉ. अम्बेडकर के प्रयत्न के फलस्वरूप 16 छात्रों को इंग्लैंड, अमरीका, जर्मनी आदि देशों में उच्च शिक्षा पाने के लिए भेजा गया। यह उनकी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी।[7] लेकिन दुर्भाग्य की बात यह हुई कि भारत के स्वतंत्र होने और अंग्रेजी सरकार के द्वारा कांग्रेस को सत्ता स्थानान्तरित करने के उपरांत भारत के प्रथम वायसराय राजगोपालाचारी के बनाए जाने पर उन्होंने इस योजना को ही बन्द कर दिया था। इससे कांग्रेस का दलित विरोधी होना सिद्ध होता है।

इस निर्णय के पूर्व लॉर्ड लिनलिथगो ने एक सुझाव और दिया था, जो आंशिक तौर पर प्रासंगिक है, जिसका प्रसंग देना मैं आवश्यक समझता हूं। वह सुझाव यह था कि उस धनराशि को हरिजन सेवक संघ को दे दिया जाए, तो ए.वी. ठक्कर बापा उसका सदुपयोग अस्पृश्यों की उन्नति एवं विकास के लिए करेंगे। इस पर अपनी टिप्पणी देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने उत्तर दिया कि हरिजन सेवक संघ का उद्देश्य अस्पृश्यों में उच्च शिक्षा का प्रचार-प्रसार करना नहीं है। उनका कार्य केवल अछूत बच्चों को अपने आश्रम में रखकर जूते बनाना, चमड़ा रंगना (चमड़े का पकाना), आदर्श भंगी का कार्य करना, कपड़ा बुनना, टोकरी बनाना आदि सिखाकर अस्पृश्यता को सदा-सदा के लिए कायम रखना और उनको उनके पुश्तैनी धंधों में कुशल बनाना था, न कि कॉलेजों और विदेशी विश्वविद्यालयों में अस्पृश्यों को ऊंची शिक्षा दिलाकर उनको शासन-प्रशासन में सेवा (नौकरी) करने के योग्य बनाना। इसलिए कथित अनुदान को देश में एम.ए. और विदेशों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए ही व्यय करना चाहिए। इस विषय पर लॉर्ड लिनलिथगो ने और भी सोच-विचार करने की बात कही थी।

इस बात का पहले में संदर्भ दे आया हूं कि जनवरी, 1925 में सोलापुर में बहिष्कृत हितकारिणी सभा के द्वारा एक छात्रावास आरंभ किया गया था। सोलापुर नगरपालिका के पार्षद माननीय जीवाप्पा सुभाना काम्बली को छात्रावास का पर्यवेक्षक नियुक्त किया गया था। उन्होंने बड़ी रुचि एवं अभिरुचि के साथ इस कार्य को सम्पादित किया था। सभा के द्वारा छात्रों का खाना, कपड़े, पुस्तकें आदि की पूरी व्यवस्था की जाती थी। सभी छात्रों ने एक हस्तलिखित पत्रिका आरंभ भी की थी। सभा ने निर्धन छात्रों को सहायता प्रदान करने के लिए पारितोषिक देना भी आरंभ किया था। युवकों और प्रौढ़ अस्पृश्यों के सुधार के लिए सभा ने रात्रिकालीन पाठशाला और बाचनालय आरंभ किए। बम्बई के दलितों के लिए हॉकी-क्लब की स्थापना की गई, जिससे उनमें स्वास्थ संबंधी रुचि उत्पन्न हुई। जो युवक शराब, जुआ और व्यर्थ के हानिकारक व्यसनों में अपना समय, शक्ति और धन नष्ट करते थे, उन्हें नई दशा और दिशा मिली। यथार्थ

में समाज-सुधार की दृष्टि से यह आंदोलन अत्यन्त सार्थक और उपयोगी प्रमाणित हुआ।

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा 20 जुलाई, 1924 को 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' के गठन के समय एक महत्त्वपूर्ण सूत्र दिया था, और वह यह था, 'शिक्षित बनो, संघर्ष करो और संगठित हो', जो आज शोषितों, दलितों और पिछड़ों के संघर्ष के लिए उपयोगी सूत्र बना हुआ है। 19 और 20 मार्च, 1927 को इस सभा द्वारा महाड चवदार तालाब पर यह बड़े सत्याग्रह का आयोजन किया गया था। डॉ. अम्बेडकर के द्वारा चवदार तालाब का पानी ग्रहण किया गया था और उनके अनेक सत्याग्रही अनुयायियों ने उनका अनुकरण करते हुए पानी ग्रहण किया। इस प्रकार अस्पृश्यों के लिए समानता स्थापना के लिए संघर्ष का बिगुल बजाकर घोषणा कर दी।

महाड़ में दूसरे दिन 20 मार्च, 1927 को सुबह 9.00 बजे अधिवेशन का आरंभ हुआ, जिसमें अनेक प्रस्तावों पर चर्चा हुई। बहिष्कृत वर्ग की विभिन्न समस्याओं पर खुलकर प्रकाश डाला गया। डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में जो प्रस्ताव पारित किए गए, उनमें से क्रम संख्या 5 अनिवार्य शिक्षा आरंभ की जाए और प्रस्ताव 6 के अन्तर्गत छात्रावासों की स्थापना की जाए। इन दोनों ही प्रस्तावों को साकार रूप प्रदान करने के लिए डॉ. अम्बेडकर जीवन भर संघर्ष करते रहे थे। डॉ. अम्बेडकर द्वारा सन् 1928 में अस्पृश्य एवं दलित छात्रों के लिए दो छात्रावास प्रारंभ किए गए थे। उसी वर्ष उन्होंने रजिस्टर्ड डिप्रेस्ड क्लासेस एजूकेशन सोसाइटी की स्थापना की थी। उन्होंने प्रत्येक जिला-स्वयं सेवक को मार्ग-दर्शन और परामर्श प्रदान किया कि प्रत्येक जिले में अस्पृश्य समाज के छात्रों को मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त करने में आसानी के लिए छात्रावासों की स्थापना करें और उनमें छात्रों को मुक्त आवास और भोजन आदि की सुविधा प्रदान की जाए, ताकि गरीब छात्रों को शिक्षा प्राप्त करने में आसानी हो सके। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक जिले में कार्यकर्त्ताओं के स्कूल और छात्रावास चलने लगे हैं। यह मात्र डॉ. अम्बेडकर के सफल शैक्षिक-मार्ग-दर्शन का परिणाम है।

डॉ. अम्बेडकर अपने युग के स्वयं उच्च शिक्षा प्राप्त, महानतम शिक्षाविद्, श्रेष्ठ, अतुलनीय एवं उत्कृष्ट विद्वान थे। शिक्षा का महत्त्व जानकर ही उन्होंने दलितों के लिए सार्वभौमिक शिक्षा प्राप्त करने का स्वप्न देखा था। उन्होंने जीवन का सबसे बड़ा यह निष्कर्ष प्राप्त किया था कि अस्पृश्यों के उद्धार के लिए शिक्षा ही एक सशक्त माध्यम है। सामाजिक परिवर्तन का एक मात्र साधन शिक्षा है। शिक्षा का लाभ प्रत्येक अस्पृश्य के घर पहुंचना चाहिए, इस प्रकार वह सोचते थे। इसलिए वह सामाजिक और राजनीतिक कार्यों के साथ-साथ शैक्षिक साध्यों को प्राप्त करने के लिए जीवन भर प्रयत्नशील रहे।

डॉ. अम्बेडकर अपनी शिक्षण-संस्थाओं को पुत्रवत् प्रेम करते थे। सिद्धार्थ कॉलेज के प्रथम वर्ष के सत्रावसान के अवसर पर उन्होंने अपने भाषण में कहा था, 'आपके प्राचार्य महोदय ने अभी बताया कि हमारा सिद्धार्थ कॉलेज बाल्यावस्था में है। इसलिए आपने मुझे व्याख्यान देने के लिए अवसर प्रदान किया है। इसका लाभ लेते हुए मैं 'हमारी कॉलेज परंपरा' इस विषय पर प्रवचन दूंगा। अपने प्रवचन को प्रारंभ करने के पूर्व मुझे आजकल के विद्यार्थियों से दो शब्द कहने हैं।'[8] डॉ. अम्बेडकर ने सिद्धार्थ कॉलेज का नाम भगवान् बुद्ध के युवावस्था के नाम पर किस लिए रखा, इस पर प्रकाश डालते हुए वह कहते हैं, 'अपने महाविद्यालय का नाम सिद्धार्थ कॉलेज है। यह नाम क्यों रखा गया है? मैंने किसी करोड़पति से कहा होता, तो वह कॉलेज के लिए लाखों रुपये का अनुदान सहर्ष दे देता। वैसा करने से मुझे उस करोड़पति के नाम पर इस कॉलेज का नाम रखना पड़ता, मैंने वैसा नहीं किया। इस कॉलेज को 'सिद्धार्थ कॉलेज' ही नाम देने का निश्चय किया। यह बुद्ध का पहला नाम है। यह आप जानते हैं कि यह कॉलेज अभी बाल्यावस्था में है। इसे केवल नौ माह हुए हैं। लेकिन इस बात से यह कल्पना न करें कि इसका कोई उद्देश्य नहीं है। विशिष्ट उद्देश्य से ही इस कॉलेज का नाम 'सिद्धार्थ कॉलेज' रखा गया है।'[9] इसके उपरांत डॉ. अम्बेडकर के द्वारा ब्रह्मजाल सूत्त में दिए गए उपदेश को संक्षिप्त में कहा और बुद्ध के द्वारा अज्ञान और ज्ञान का अंतर बताया है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य अज्ञान को समाप्त करके ज्ञान एवं सत्य का प्रचार करना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर को शिक्षा प्राप्ति के समस्त गुणों और उनके द्वारा लाभ प्राप्ति का तार्किक, दार्शनिक और व्यावहारिक निष्कर्ष प्राप्त हो चुका था, इसलिए इस संदर्भ में उन्होंने एक बार कहा, 'शिक्षा ही एक ऐसी कुंजी है, जिससे ज्ञान का ताला खुल सकता है। इसका आंकलन बाबासाहेब को बाल्यावस्था से ही हो गया था कि शिक्षा ही सामाजिक परिवर्तन का माध्यम है। ...अतएव दलित वर्ग का विकास शिक्षा के विकास के बिना संभव नहीं हो सकता। यह जानकर जब-जब भी वे दलित वर्ग को ज्ञानोपदेश देते थे, तब-तब उन्होंने अपने भाषणों में 'शिक्षा के महत्त्व' पर प्रकाश आवश्य डाला। बालकों और बालिकाओं की शिक्षा पर अधिक से अधिक ध्यान देने का आग्रह किया।'[10] इसका तात्पर्य यह है कि दलितों, शोषितों, अस्पृश्यों और पिछड़ों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करना उनके जीवन का सर्वोच्च साध्य था।

यहां पर एक बात बताना और आवश्यक है कि डॉ. अम्बेडकर ने छात्रावास और महाविद्यालय के निर्माण के लिए अनुचित साधनों से धन कमाने वाले अपराधियों, पूंजीपतियों और फिल्म स्टारों से चंदा कभी नहीं लिया था। इसका एक महत्त्वपूर्ण प्रसंग देना आवश्यक समझता हूं। डॉ. अम्बेडकर के द्वारा औरंगाबाद में

मिलिन्द कॉलेज का निर्माण कार्य कराया जा रहा था। उसकी प्रगति देखने के लिए वे औरंगाबाद गए हुए थे। 'औरंगाबाद के कुछ प्रसंग स्मरणीय है। एक बार प्रसिद्ध फिल्मी कलाकार दिलीप कुमार अपनी बहन के साथ अजंता-एलोरा गुफाओं के भ्रमण हेतु औरंगाबाद गए थे, उनका निवास उसी होटल में था, जिसमें बाबासाहेब ठहरे हुए थे। इसकी खबर मिलते ही कुछ मित्रगण दिलीप कुमार से मिलने पहुंचे। पहले उन्होंने सोचा कि दिलीप कुमार को बाबासाहेब से मिलवा दें, ताकि वे कुछ दान दे सकें।'[11]

यह बात जब बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर को मालूम हुई, तो वे क्रोधित होकर बोले, 'मुझे किसी अभिनेता से दान नहीं चाहिए, न ही किसी उद्योगपति या व्यापारी से। मैं अपनी संस्थाओं का नाम ऐसे लोगों पर नहीं रखूंगा। इसलिए मैंने सिद्धार्थ और मिलिन्द के नाम पर कालेजों का नाम रखा है, क्योंकि छात्र और अध्यापक इन धर्मवेत्ताओं से कुछ सीख सकें।'[12] दिलीप कुमार को बाबासाहेब के व्यक्तित्व और महानता का पता था। इसलिए प्रतिक्रिया स्वरूप उन्होंने कहा, 'बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर मेरे पिता के समान हैं। मैं उनके विचारों का आदर करता हूं।'[13]

डॉ. अम्बेडकर की शिक्षण-संस्थाओं के बारे में बड़ी महत्त्वपूर्ण टिप्पणी है, वे कहते हैं, 'राजनीति के समतुल्य ही महत्त्वपूर्ण शिक्षण-संस्थाओं की जरूरत है। किसी भी समाज की उन्नति उस समाज के बुद्धिमान, मेधावी और उत्साही युवकों पर निर्भर करती है। इस दिशा में गत कुछ वर्षों से मैंने अपना लक्ष्य राजनीति से शिक्षण संस्थाओं की ओर केन्द्रित किया है। बम्बई में सिद्धार्थ कॉलेज शुरू किया। वहां 2400 विद्यार्थी अध्ययन कर रहे हैं। उनमें से 190 विद्यार्थी अपने हैं। उनके लिए मैं 21,000 रुपये खर्च कर रहा हूं। मेरा ध्यान अब शिक्षा पर है। शीघ्र ही औरंगाबाद जाकर कॉलेज खोलने का विचार कर रहा हूं। यह सब 'नामदेव' की शादी पाडुरंग द्वारा कराने के समान है।'[14]

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा स्थापित संस्थाओं में शिक्षा, एक उद्देश्य

शूद्रों, अतिशूद्रों और अस्पृश्यों पर मनुवादियों के द्वारा किए जाने वाले अत्याचारों, शोषण, उत्पीड़न, अन्याय जैसे अमानवीय एवं पाशविक व्यवहार को समाप्त करने और समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और सामाजिक न्याय की स्थापना करके उनके सर्वांगीण विकास और उत्थान के लिए कई सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना की थी, जिनके उद्देश्यों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार पर विशेष बल दिया गया था। उन संस्थाओं का संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है।

1. बहिष्कृत हितकारिणी सभा

इस सभा की स्थापना 20 जुलाई, 1924 को की गई थी और यह एक रजिस्टर्ड संस्था थी। इस सभा के उद्देश्य और लक्ष्य इस प्रकार थे-

1. छात्रावास या अन्य साधन, जो आवश्यक हों, प्रारंभ कर शोषित वर्ग (डिप्रेस्ड क्लास) में शिक्षा का प्रसार करना।
2. ग्रंथालय (पुस्तकालय), सामाजिक केन्द्र या वर्ग या अभ्यास केन्द्र आरंभ करते हुए शोषित वर्ग (डिप्रेस्ड क्लास) में संस्कृति का प्रसार करना।
3. औद्योगिक और कृषि-विद्यालय आरंभ कर शोषित वर्ग (डिप्रेस्ड क्लास) की आर्थिक स्थिति में सुधार करना।
4. शोषित वर्ग (डिप्रेस्ड क्लास) की समस्या का प्रतिनिधित्व करना।
5. शोषित वर्ग (डिप्रेस्ड क्लास) की जागृति, सामाजिक उत्थान या आर्थिक विकास के लिए कार्यरत, क्लब, एसोसिएशन या कोई आंदोलन हो तो उसकी मदद करना या ऐसा संगठन बनाना।

उपरोक्त बहिष्कृत हितकारिणी सभा के 5 उद्देश्यों में से तीन उद्देश्य स्पष्ट रूप से शिक्षा के विकास के साध्य हैं। अंतिम दो उद्देश्य भी अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षा की ओर इशारा करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि डॉ. अम्बेडकर के जीवन का सर्वोच्च साध्य दलितों, शोषितों और अस्पृश्यों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करना था।

2. ऑल इण्डिया शैड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन

इस संस्था की स्थापना 19 जुलाई, 1942 को हुई थी। यह संस्था अर्द्ध सामाजिक और अर्द्ध राजनीतिक थी। इस फैडरेशन के निम्नलिखित उद्देश्य और लक्ष्य थे, जिनमें शिक्षा को प्रधानता दी गई थी, वे इस प्रकार थे-

1. भारत की अनुसूचित जातियों को संगठित करना, उन्हें शिक्षित करना, उनकी सामाजिक और राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना तथा उन्हें उनका उत्थान करने हेतु प्रोत्साहित करना।
2. उनके लिए समानता के अवसर सुरक्षित करना और उसके द्वारा अन्य नागरिकों के साथ जीवन के समस्त व्यवहार में समानता प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाना।
3. किसान, भूमिहीन मजदूर, कारखानों के मजदूर और अन्य मजदूरों को संगठित करना।
4. स्कूल आरंभ कर उन्हें कला और शिल्प की शिक्षा देने हेतु कार्यवाही करना।
5. अनुसूचित जातियों की नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति हेतु गतिविधियां आरंभ करना।
6. भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों पर हुए अन्याय और अत्याचारों की समस्त घटनाओं के अभिलेख (ब्यौरा) रखना।

इस संस्था का पहले और पांचवें बिन्दु पर दिए गए उद्देश्य एवं लक्ष्य स्पष्ट रूप से शिक्षा के विकास की बात करते हैं।

साथ ही साथ पांचवां बिन्दु का उद्देश्य अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षा के बढ़ाने की ओर इशारा करता है, जब आदमी शिक्षित होगा, उसी अवस्था में अन्याय और अत्याचारों का ब्यौरा रख सकता है।

3. पीपुल्स एजुकेशन सोसाइटी

इस संस्था की स्थापना विशुद्ध रूप से शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए 8 जुलाई, 1945 को की गई थी। इसके समस्त लक्ष्य एवं उद्देश्य की शिक्षा की सुविधाएं प्रदान करने से संबंधित हैं, जिनका क्रमशः ब्यौरा इस प्रकार है–

1. माध्यमिक, महाविद्यालय, तकनीक, भौतिक आदि शैक्षणिक सुविधाएं उपलब्ध कराना।
2. महाराष्ट्र में उचित स्थानों पर या देश के अन्य स्थानों पर हाई स्कूल, महाविद्यालय, विहार, छात्रावास, ग्रंथालय (पुस्तकालय), खेल के मैदान, बौद्ध संस्था जैसी शैक्षणिक तथा बौद्ध धर्म के संघ स्थापित करना, चलाना या उनकी मदद करना।
3. गरीब तथा बौद्ध लोगों को शैक्षणिक सुविधाएं उपलब्ध कराना।
4. अनुसूचित जातियों से धर्मान्तरित बौद्ध और अनुसूचित जाति के लोगों में शिक्षा विषयक रुचि पैदा करके उन्हें मजबूत करना तथा उन्हें उच्च शिक्षा हेतु विशेष सुविधाएं, छात्रवृत्ति एवं छूट उपलब्ध कराना।
5. विज्ञान, बौद्ध साहित्य और अन्य साहित्य को प्रोत्साहित करना तथा धर्म के तुलनात्मक अध्ययन हेतु आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराना।
6. संस्था (सोसाइटी) के लिए संपत्ति को क्रय या लीज पर लेना या अन्य तरीके से अर्जन करना तथा संस्था (सोसाइटी) के धन का समय-समय पर तय करने के अनुसार विनियोजन करना।
7. संस्था के उपयोग हेतु भवन, विहार इत्यादि का निर्माण, रख-रखाव, पुनर्निर्माण, सुधार एवं परिवर्तन कराना।
8. संस्था की किसी संपत्ति का विक्रय, सुधार, विकास, हस्तांतरण, लीज पर देना या बनाना।
9. बौद्धों की संस्था या संस्था द्वारा संचालित इन्स्टीट्यूट का, संस्था के उद्देश्य और लक्ष्य के अग्रिम विकास के दृष्टिकोण से, उसे सहयोग करना या संस्था के साथ संलग्न करना।
10. संस्था के लक्ष्यों और उद्देश्यों की पूर्ति हेतु 'सिक्यूरिटी' के साथ या उसके बिना संग्रह करना।
11. भारत के किसी भी राज्य में संस्था का पंजीकरण या मान्यता प्राप्त करना।
12. उपरोक्त लक्ष्य और उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रारंभिक या सहायक हो, ऐसे समस्त विधायिकी कार्य करना।

उपरोक्त शिक्षा संस्था के समस्त लक्ष्य एवं उद्देश्य स्पष्ट एवं सुस्पष्ट हैं, इसलिए उनकी अधिक व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इस संस्था का निर्माण ही दलितों, शोषितों और बौद्धों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए ही किया गया था।

पिपल्स एजूकेशन सोसाइटी के द्वारा महाराष्ट्र में चलाई जा रही शिक्षण-संस्थाओं का संक्षिप्त ब्यौरा इस प्रकार है–

मुंबई में

1. सिद्धार्थ कॉलेज ऑफ आर्ट्स, साइंस और कामर्स, मुंबई फोर्ट।
2. सिद्धार्थ कॉलेज ऑफ कॉमर्स और इकॉनोमिक्स, मुंबई फोर्ट।
3. सिद्धार्थ कॉलेज ऑफ लॉ, मुंबई फोर्ट।
4. डॉ. अम्बेडकर कॉलेज ऑफ कामर्स और इकोनोमिक्स, वडाला।
5. डॉ. अम्बेडकर कॉलेज ऑफ लॉ, वडाला।
6. सिद्धार्थ नाइट हाई स्कूल।
7. PES's सैकण्ड्री स्कूल एण्ड जूनियर कॉलेज, नई मुंबई।
8. PES's प्राइमरी मराठी स्कूल, नई मुंबई।
9. PES's सैन्ट्रल स्कूल, नई मुंबई।
10. सिद्धार्थ विहार हॉस्टल, वडाला।

औरंगाबाद

1. मिलिन्द कॉलेज ऑफ आर्ट्स, नागसेन वन।
2. मिलिन्द कॉलेज ऑफ साइंस, नागसेन वन।
3. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कॉलेज ऑफ आर्ट्स एण्ड कॉमर्स, नागसेन वन।
4. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कॉलेज ऑफ लॉ, नागसेन वन।
5. PES's कॉलेज ऑफ फिज़ीकल एजूकेशन, नागसेन वन।
6. PES's कॉलेज ऑफ इन्जीनियरिंग, नागसेन वन।
7. मिलिन्द मल्टीपरपज़ हाई स्कूल, नागसेन वन।
8. मिलिन्द प्री-प्राईमरी एण्ड प्राईमरी इंग्लिश स्कूल, नागसेन वन।
9. मॉन्टेसरी रामाबाई अम्बेडकर हाई स्कूल, सीआईडीसीओ (CIDCO)

महाड

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कॉलेज ऑफ आर्ट्स, साइंस एण्ड कॉमर्स।
2. सूबेदार सवाद्कर विद्यार्थी आश्रम।

पूना

1. डॉ. अम्बेडकर कॉलेज ऑफ आर्ट्स एण्ड कॉमर्स, येरवदा।
2. PES's इंग्लिश मीडियम स्कूल, येरवदा।

पण्डरपुर

1. सन्त गाडगे महाराज चोखामेला विद्यार्थी वसतीगृह (छात्रावास)।
2. गौतम विद्यालय।

नांदेड़

1. नागसेन विद्यालय प्राथमिक शाला।
2. नागसेन हाईस्कूल एण्ड जूनियर कॉलेज।

बंगलुरू

1. पीपुल्स एजुकेशन सोसाइटीज़ नागसेन विद्यालय।
2. बुद्धिस्ट सेमिनरी
3. दि बुद्धिस्ट सोसाइटी ऑफ इण्डिया (भारतीय बौद्ध महासभा)

इस संस्था की स्थापना 8 मई, 1955 को की गई थी। इस संस्था के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. भारत में बौद्ध धर्म का प्रसार करना।
2. बौद्धों की पूजा के लिए बुद्ध-विहारों का निर्माण करना।
3. धार्मिक तथा वैज्ञानिक विषयों के लिए स्कूल और महाविद्यालयों की स्थापना करना।
4. अनाथालय, अस्पताल या मदद केन्द्रों की स्थापना करना।
5. बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए धर्म-प्रचारक तैयार करने हेतु बुद्धिस्ट सैमीनारों का आयोजन करना।
6. समस्त धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करना।
7. सामान्य जनता को बौद्ध धर्म के सही रूप को समझाने हेतु बौद्ध साहित्य के प्रकाशन का कार्य करना तथा फेंलेट आदि जारी करना।
8. यदि आवश्यक हो, तो धर्मोपदेशकों (प्रीस्ट) का नया संघ बनाना।
9. प्रकाशन का कार्य करने हेतु मुद्रणालय की स्थापना करना।
10. भारत के बौद्धों की गतिविधियों में एकरूपता (uniformity) तथा मित्रता स्थापित करने के लिए सम्मेलन का आयोजन करना।

5. रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इण्डिया

यह विशुद्ध रूप से एक राजनीतिक संस्था है, जिसकी स्थापना 30 सितम्बर, 1956 को की गई थी। जब डॉ. अम्बेडकर ने भारत के संविधान के लागू होने के उपरांत सन् 1952 में संसद का आम चुनाव 'आल इण्डिया शैड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन' के बैनर तले लड़ा, तो उन्हें अपने प्रतिद्वन्द्वी कांग्रेस के प्रत्याशी, दूध का व्यापार करने वाले दूधिए साक्षर से थोड़े अधिक पढ़े व्यक्ति काजरोलकर से 14374 मतों से पराजित होना पड़ा। इसी प्रकार डॉ. अम्बेडकर मई 1954 में महाराष्ट्र के भंडारा में कांग्रेस के ही प्रत्याशी और जो उनके ही छात्रावास में रहकर पढ़े बोरकर से उपचुनाव में 8381 मतों से पराजित हो गए। ये दोनों ही अप्रत्याशित घटनाएं कांग्रेसियों के कुचक्र, अदूरदर्शिता और षड्यंत्रों के फलस्वरूप घटीं, जिन्होंने भारतीय लोकतंत्र का चेहरा काला कर दिया था। जिस महान विद्वान डॉ. अम्बेडकर से कठोर परिश्रम कराकर भारतीय संविधान का निर्माण कराया था, जिसकी विश्व में भूरि-भूरि प्रशंसा हुई थी, उसी अम्बेडकर को मनुवादी कांग्रेसियों ने परास्त करा दिया। यहां पर कांग्रेसियों पर कहावत अवश्य लागू होती है कि 'दो टेक की हांडी तो जाती है, लेकिन कुत्ते की जाति पहचान ली जाती है।' हां! कांग्रेस की महानता इसमें होती कि डॉ. अम्बेडकर जैसे अद्वितीय, अतुलनीय और विधान-निर्माता को संसद में निर्विरोध चुनकर लाती और उनकीविद्वता एवं अनुभव का लाभ उठाती, जिससे राष्ट्र लाभान्वित होता। लेकिन कांग्रेसियों ने प्रमाणित कर दिया कि 'कुत्ते की पूंछ छह महीने फूंकनी में रही, निकाली तो टेड़ी की टेड़ी।' खेद इस बात का है कि आज भी कांग्रेस मनुवाद से पिण्ड नहीं छुड़ा पाई है।

डॉ. अम्बेडकर ने देखा कि उन्होंने पहले दो चुनाव 'ऑल इण्डिया शैड्यूल्ड कास्ट्स फैडरेशन' के बैनर तले लड़े थे, इसलिए उन्हें अनुसूचित जातियों के ही वोट ही मिल पाए। डॉ. अम्बेडकर ने 'ऑल इण्डिया शैड्यूल्ड कास्ट्स फैडरेशन' को समाप्त कर और नए राजनीतिक दल का व्यापक आधार बनाने के लिए 'रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इण्डिया' की स्थापना की, जिससे इस पार्टी से मुसलमान, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि धर्मावलम्बी और सभी जातियां एवं पिछड़े वर्ग के लोग जुड़ सकें। साथ ही साथ इसका क्षेत्र केवल महाराष्ट्र ही नहीं, बल्कि पूरे भारत को बनाया जा सके।

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा 'रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इण्डिया' का विधान बनाने के पूर्व भारतीय संविधान की उद्देशिका का संदर्भ दे दिया जाए, तो अत्यन्त उपयुक्त होगा। भारतीय संविधान की उद्देशिका कहती है–

'हम भारत के लोग भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, पंथ निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को–

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर, समता प्राप्त करने के लिए, तथा उन सब में, व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए।

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत् 2006 विक्रमी) के एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

संविधान की उद्देशिका (preamble) में निर्धारित किए गए लक्ष्य और उद्देश्य जैसे कि न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारा इसको वास्तविक रूप में लागू करवाना रिपब्लिकन पार्टी का लक्ष्य और उद्देश्य होगा।

पार्टी के इस उद्देश्य होने से जननीति के संबंध में पार्टी का दृष्टिकोण निम्नलिखित के अनुसार होगा।

1. वह समस्त भारतीयों को केवल समान ही नहीं मानेगी, बल्कि समानता के हकदार होने से जहां समानता का अस्तित्व नहीं है, वहां उसे स्थापित

करेगी और जहां उसे नकारा गया है, वहां उसका समर्थन करेगी।

2. वह प्रत्येक भारतीय को एक सम्पूर्ण इकाई मानकर तथा उसे अपने अनुसार अपना विकास करने का अधिकार है तथा राज्य इस हेतु केवल साधन मात्र होगा।
3. अन्य भारतीयों की तथा राज्य के हितों की रक्षा आवश्यकता से उपजी मर्यादाओं में रहते हुए, वह प्रत्येक भारतीय की धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक स्वतंत्रता का यत्न करेगी।
4. जिसे पूर्व में कोई अवसर ही नहीं दिया गया, उन्हें जिसको अवसर दिया गया था, उनसे प्राथमिकता देने के प्रावधान के रहते हुए, वह प्रत्येक भारतीयों के अवसर को समानता के अधिकार का समर्थन करेगी।
5. प्रत्येक भारतीय को भय और भूख से स्वतंत्र रखने के उत्तरदायित्व से राज्य को सदैव जागरूक रखेगी।
6. वह समानता, स्वतंत्रता और भाईचारा बनाए रखने हेतु आग्रह करेगी तथा व्यक्ति का व्यक्ति द्वारा, वर्ग का वर्ग द्वारा और राष्ट्र का राष्ट्र द्वारा हो रहे दमन और शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए प्रयासरत रहेगी।
7. व्यक्ति के हित में और लोगों के हित में संसदीय प्रणाली शासन सर्वोत्कृष्ट स्वरूप होने से उसके समर्थन में रहेगी।

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा स्थापित रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इण्डिया भारतीय लोकतंत्र के मूल्यों की समर्थक रही है, जिसका प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तात्पर्य यह है कि वह निरपेक्ष रूप से शिक्षा के प्रचार-प्रसार की दिलोजान से समर्थक रही है, उसी स्थिति में तो लोकतंत्रीय मूल्यों की और नागरिक, समाज एवं देश आगे बढ़ सकता है और लोकतंत्र के मूल्यों का आधार केवल मात्र शिक्षा है।

6. ऑल इण्डिया शैड्यूल्ड कास्ट्स स्टूडेन्ट्स फैडरेशन

डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में 'ऑल इण्डिया शैड्यूल्ड कास्ट्स स्टूडेंट्स फेडरेशन' की स्थापना की गई, जिसके निम्नलिखित लक्ष्य एवं उद्देश्य थे–

1. भारत के अनुसूचित जातियों के विद्यार्थियों को संगठित करना।
2. उनमें सामूहिक भावना का विकास करना तथा उनमें जातीय चेतना की भावना को अत्यधिक महत्त्व देने वाली समस्त गतिविधियों को त्यागना।
3. भारत में अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के हितों का संरक्षण करना।
4. नैतिक और बौद्धिक शिक्षा से प्रेरित कर तथा वर्तमान समय की सांस्कृतिक और राजनीतिक आंदोलन के सम्पर्क में लाकर उनमें सांस्कृतिक वातावरण तैयार करना।
5. अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों का अरोग्य तथा शारीरिक गठन को मजबूत करने के लिए भौतिक संस्कृति को प्रेरित करना।
6. अनुसूचित जाति के लोगों का हित रक्षण करना।
7. अनुसूचित जाति के लोगों का तथा देश के कल्याण हेतु अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की गतिविधियों से जोड़ना।
8. अनुसूचित जातियों के आंदोलन के समर्थन में जनमत तैयार करना।

7. समता सैनिक दल की स्थापना

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा समाज में शिक्षा एवं साक्षरता के प्रचार-प्रसार हेतु और दलितों पर होने वाले शोषण, उत्पीड़न और गुलामी से मुक्ति दिलाने के लिए समता सैनिक दल की स्थापना की।

(i) सैनिक की शपथ

'मैं अनुसूचित जाति का सदस्य समता सैनिक दल का पद प्राप्त कर गम्भीरता पूर्ण शपथ लेता हूं कि मैं अपने वर्ग के शोषण, दमन और गुलामी से मुक्ति के महान कार्य के लिए एक सम्मानित, शूर, अनुशासित और प्रतिबद्ध योद्धा बनूंगा।'

(ii) लक्ष्य और उद्देश्य

वंश, धर्म, जाति, लिंग और वर्ग पर आधारित असमानता को समाप्त करना तथा अनुसूचित जातियों के समस्त सदस्यों की स्वतंत्रता और समानता के आधार पर समाज-निर्माण और संघर्ष करने के हेतु अनुसूचित जातियों के समस्त सदस्यों को संगठित करने का प्रयास समता सैनिक दल का लक्ष्य और उद्देश्य है।

(iii) उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए

1. समता सैनिक दल, अनुसूचित जातियों के युवाओं को एकत्रित कर इस बैनर के अन्तर्गत संगठित करेगा।
2. अनुसूचित जातियों के विशेषकर युवाओं में स्व-सम्मान, स्व-विश्वास एवं स्व-समर्पण की भावना उनके मन में पैदा करने के लिए समस्त सामाजिक, सांस्कृतिक और अन्य गतिविधियों को समता सैनिक दल बढ़ावा देगा।
3. समता सैनिक दल ऐसे संगठन तथा आंदोलन को सहयोग प्रदान करेगा, जो उसके लक्ष्य और उद्देश्यों की पूर्ति में सहयोग करेगा।

समता सैनिक दल का समता स्थापित करने का कार्य महत्त्वपूर्ण कार्य होगा और उसमें शिक्षा आवश्यक भूमिका का निर्वाह करेगी। इसलिए शिक्षा को समता सैनिक दल की कार्य-योजना महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

(iv) शिक्षा की कार्य-योजना

1. शारीरिक, बौद्धिक तथा सैनिक तीनों प्रकार की शिक्षा समता सैनिक दल द्वारा दी जाएगी।
2. शिक्षा कैंप, पाठशाला, क्लब, कक्षा, व्याख्यान, चर्चा, समिति, वाचनालय तथा समय-समय पर योग्य समझे

जाने वाले अन्य कार्य का संगठन सैनिक दल करेगा।

3. भारत के सभी प्रांतों में तथा सम्भव होने पर उन राज्यों में समता सैनिक दल की शाखाएं स्थापित की जाएंगी। प्रत्येक प्रांतीय शाखा जिला समिति का संगठन बनाएगी तथा जिला समिति अपने-अपने शहर तथा गांवों में स्थानीय समिति बनाएंगी।

(अ) शिक्षा संबंधी नियमित कार्य

सोमवार – नैतिक शिक्षा (Moral Education)

मंगलवार – खेल एवं शारीरिक शिक्षा (Sports and Physical Education)

बुधवार – सैनिक शिक्षा (Military Education)

गुरुवार – खेल तथा शारीरिक शिक्षा

शुक्रवार – प्रथम-उपचार (First Aid)

शनिवार – सैनिक शिक्षा (Military Education)

रविवार – राजकीय एवं सामाजिक शिक्षा (Governance and Social Education)

समता सैनिक दल का दूसरा अधिवेशन

यद्यपि अखिल भारतीय समता सैनिक दल का प्रथम सम्मेलन नागपुर में हुआ और अन्य सम्मेलन बाद होते रहे हैं, लेकिन दूसरे सम्मेलन का महत्त्व इसलिए है कि यह महाराष्ट्र की भूमि के बाहर 30 जनवरी, 1944 को कानपुर, संयुक्त प्रांत (वर्तमान का उत्तर प्रदेश) में हुआ था। इस सम्मेलन में छह प्रस्ताव पारित किए गए, जिसमें तीसरा प्रस्ताव शिक्षा से संबंधित इस प्रकार था–

प्रस्ताव क्रमांक-3

'अखिल भारतीय दलित वर्ग फैडरेशन सभी घटकों से अपने-अपने स्वयं सेवकों को आवश्यक शिक्षा देने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र तथा छावनियां स्थापित करने की यह अधिवेशन विनती करता है।'

8. दि दिल्ली शैड्यूल्ड कास्ट्स वैलफेअर एसोसिएशन, दिल्ली

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-55 पर, अपने नेतृत्व और निर्देशन में एक भवन का निर्माण किया गया, उनके श्रद्धालुओं और भक्तों के द्वारा उसका नाम अम्बेडकर भवन ही रख दिया गया। उत्तर भारत की अनुसूचित जातियों के कल्याण, उनकी दिन-प्रति-दिन आने वाली समस्याओं के समाधान, शिक्षा के प्रचार-प्रसार और विकास के लिए 'दि दिल्ली शैड्यूल्ड कास्ट्स वैलफेअर एसोसिएशन (रजिस्टर्ड) नामक संस्था की स्थापना की गई है। इस संस्था का रजिस्ट्रेशन नं. 5-280/1946-47, दिनांक 07 जून, 1946 है। इस संस्था के प्रथम अध्यक्ष रावबहादुर एन. शिवराज, एम.एल.ए. थे और उनका व्यवसाय बैरिस्टर का था।

इस संस्था की नियमावली में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने का भी विशेष उल्लेख किया गया है।

9. पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा शिक्षा के प्रसार में योगदान

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा विदेशों में शिक्षा प्राप्त करने के समय यह अनुभव प्राप्त किया गया था कि पत्र-पत्रिकाएं और शिक्षा में उच्चकोटि का सकारात्मक सह-संबंध (high positive correlation) होता है और वे शिक्षा के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करती हैं। इसी बात से प्रेरित होकर उन्होंने निम्नलिखित पत्रिकाओं का प्रकाशन आरंभ किया था–

1. 31 जनवरी, 1920 'मूकनायक साप्ताहिक' का प्रकाशन आरंभ।
2. 3 अप्रैल, 1927 को 'बहिष्कृत भारत' पाक्षिक पत्रिका का आरंभ।
3. 29 जून, 1928 को 'समता' मासिक पत्रिका का आरंभ।

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा उपरोक्त पत्रिकाओं के प्रकाशन से प्रभावित होकर उनके अनुयायियों ने इस प्रकाशवान मार्ग का अनुशीलन आरंभ कर दिया गया है। आज डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों के द्वारा दिल्ली में ही लगभग पचास पत्रिकाएं प्रकाशित की जा रही हैं। यदि सम्पूर्ण भारत का हिसाब लगाया जाए, तो इनकी संख्या एक हजार से भी अधिक हो सकती है।

आज से लगभग 90 वर्ष पूर्व सन् 1924 में डॉ. अम्बेडकर के द्वारा 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की गई थी। इस सभा के मुख्य चार उद्देश्य थे। जिनमें प्रथम उद्देश्य शूद्रों, दलितों, शोषितों एवं अस्पृश्यों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करना और छात्रों के लिए छात्रावासों की स्थापना और तीसरा उद्देश्य अस्पृश्यों को सुसंस्कृत और सभ्य जीवन व्यतीत करने के लिए पुस्तकालयों, सामाजिक केन्द्रों और अध्ययन केन्द्रों की स्थापना करना था। उस समय के अनुसार उनके इस प्रयास को अणु-व्रत की भांति वट-वृक्ष का बीजारोपण अथवा आग की छोटी सी चिनगारी कहा जा सकता है।

आज तक भारत में डॉ. अम्बेडकर की भांति युग-दृष्टा, युग-प्रवर्तक और महानतम शिक्षाविद् पैदा नहीं हुआ, जिसने शूद्रों, अस्पृश्यों और नारी जाति के लिए समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और सामाजिक न्याय के साथ-साथ शिक्षा-प्राप्ति के सभी द्वार खोल दिए हों। वट-बीज ऑलपिन के ऊपर भाग सरसों के दाने से भी छोटा होता है, डॉ. अम्बेडकर ने उसका बीजारोपण करके, उसकी देखभाल और संरक्षण किया कि आज वह विशाल वट-वृक्ष का रूप धारण कर गया है।

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा भारत में शताब्दियों से व्याप्त अज्ञान और अविद्या को समाप्त करने के लिए वह छोटी सी चिनगारी लगाई थी, जो आज ज्ञान और शिक्षा का पुंज बनकर पूरे भारत को आलोकित कर रही है। वैदिक मान्यताओं ने समस्त शूद्रों, दासों, अस्पृश्यों और स्त्रियों

को शिक्षा प्राप्त करने और मानवाधिकारों से वंचित कर रखा था। आज डॉ. अम्बेडकर के अथक प्रयास से समस्त दलित, शोषित, अस्पृश्य, पिछड़ा वर्ग और स्त्री जाति बिना किसी भेदभाव और रुकावट के शिक्षा प्राप्त करके वैदिक मान्यताओं के सीने पर बैठकर मटर की दाल दल रहे हैं। इसका सम्पूर्ण श्रेय मात्र बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर को ही दिया जा सकता है। जिस देश में वेद के सुनने पर ही तेल गरम करके और रांगा पिघला कर शूद्र के कान में डालने का प्रावधान था और 'ढ़ोल गंवार शूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी' का सवर्ण बड़े गर्व से आचरण और उच्चारण करते थे, आज डॉ. अम्बेडकर के द्वारा संविधान का निर्माण करके सभी अमानवीय और पाशविक मान्यताओं पर पानी फेर दिया। उसका परिणाम यह हुआ कि भारत के प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति पद पर क्रमशः इन्दिरा गांधी और प्रतिभा पाटिल विराजमान हुईं।

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा दलितों, शोषितों, अनुसूचित जातियों और अस्पृश्यों की शिक्षा हेतु जो चिनगारी लगाई गई थी, उसके परिणाम आज देखने को मिल रहे हैं। जिन महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में इन जातियों के युवकों और युवतियों को मात्र चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी, जैसे चपरासी, फराश और सफाई कर्मचारी के पद पर मात्र ही रखा जाता था, आज इन जातियों के लोग चांसलर, वाइस चांसलर, प्रोफेसर, एसोसिएट प्रोफेसर और असिस्टेन्ट प्रोफेसरों के पदों पर कार्य कर रहे हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय का ही उदाहरण लिया जाए, तो अनुमानतः कहा जा सकता है कि आज इस विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लगभग 1350 व्यक्ति शिक्षण का कार्य कर रहे हैं। अब इनकी नियुक्ति के नियमों में परिवर्तन की घोषणा की जा चुकी है। उसके उपरांत इस संख्या में आशातीत वृद्धि होना निश्चित है। इस स्थिति का सम्पूर्ण श्रेय डॉ. अम्बेडकर के अथक प्रयासों को ही जाता है।

नगला भवानी सिंह, आगरा, उत्तर प्रदेश में उत्पन्न बाबू करन सिंह केन डॉ. अम्बेडकर के समकालीन और जाटव जाति के सदस्य थे। वह अपने नाम के पीछे बी.ए. की उपाधि लिखकर स्वयं को गौरवान्वित करते थे। उस समय उत्तर प्रदेश में दलित जातियों में वह पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने बी.ए. की उपाधि प्राप्त की थी। उनके उपरांत गत शताब्दी के लगभग 50वें दशक में उपा. मिठ्ठन लाल, निवासी नाई की मण्डी, आगरा और मान. रेवती प्रसाद, औलिया रोड, आगरा ने भी बी.ए. की उपाधियां प्राप्त की थीं। इस कारण ये दोनों भी व्यक्ति अपने नाम के पीछे बी.ए. लिखकर गौरवान्वित होते थे। आगरा के जाटवों के लिए यह बड़े सम्मान और गौरव की बात थी कि उनकी जाति में तीन व्यक्ति बी.ए. की उपाधियां प्राप्त हैं।

आज आगरा उत्तर भारत के अम्बेडकरी आंदोलन के अनुयायियों में बी.ए. की उपाधि प्राप्त करना मामूली सी बात है। वहां पर घर-घर में एम.ए., एम.एससी., एम.कॉम., एलएल.बी., बी.एड., एम.एड. और शिक्षा के सर्वोच्च उपाधियां पीएच.डी. एवं डी.लिट्. प्राप्त कर चुके हैं और कुछ शोधकर्त्ता इन उपाधियों को प्राप्त करने के लिए शोधकार्य में लगे हुए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त डॉ. अमर सिंह मौर्य, नाई की मण्डी, आगरा में पैदा हुए थे। वे अपनी विद्वता का लोहा अमरीका, कनाडा, यूरोप, एशिया आदि के देशों के बौद्ध विद्वानों को मनवा चुके थे। कानून के विद्वान एडवोकेट करतार सिंह भारती अपने परिश्रम एवं ईमानदारी से अत्यंत लोकप्रियता प्राप्त कर चुके हैं और आज आगरा में वह उच्चकोटि के समाज-सेवक हैं। आगरा की इस शैक्षिक स्थिति का एक मात्र श्रेय डॉ. अम्बेडकर को ही जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि आगरा के दलित, शोषित और अस्पृश्यों के निमंत्रण पर डॉ. अम्बेडकर दो बार आगरा गए थे, जिसमें पहली बार सन् 1946 में और दूसरी बार सन् 1956 में। सन् 1946 में सुभाष पार्क और 1956 में राम लीला के मैदान में उनका भव्य स्वागत और उनके ओजस्वी एवं क्रांतिकारी भाषण हुए थे, जिसमें शिक्षा के प्रचार-प्रसार के साथ, संगठित रहने और संघर्ष करने का आह्वान किया था।

शिक्षा के प्रचार-प्रसार का सकारात्मक प्रभाव यह पड़ा कि दलित, शोषित और अस्पृश्य जातियों के युवक और युवतियां अखिल भारतीय स्तर की सेवाओं, जैसे आई.ए.एस., आई.पी.एस., आई.आर.एस., आई.एफ.एस. और प्रादेशिक सेवाओं के साथ-साथ न्यायिक सेवाओं में आने आरंभ हो गए, जिससे उनके सामाजिक, शैक्षिक एवं आर्थिक स्तर के विकास एवं दृढ़ता में उच्चकोटि का प्रभाव पड़ा और यह सब डॉ. अम्बेडकर के द्वारा प्रतिपादित शैक्षिक मार्ग उस पर आरूढ़ होने का फल है।■

संदर्भः-

1. धनंजय कीर, अनु. गजानन सुर्वे, डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन-चरित, पृ. 19 (1996), नई दिल्ली
2. यह पुस्तक सम्यक प्रकाशन द्वारा प्रकाशित है
3. शंकरानंद शास्त्री, युग पुरुष बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर, पृ. 112 (1990), नई दिल्ली
4. वही, पृ. 115
5. वही, पृ. 121
6. वही
7. वही
8. डॉ. म.ला. शहारे और डॉ. नलिनी अनिल, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर की संघर्ष-यात्रा एवं संदेश, पृ. 283 (2009), नई दिल्ली
9. वही
10. वही, पृ. 288
11. वही, पृ. 289
12. वही
13. वही
14. वही, पृ. 319

(लेखक जाने माने सामाजिक-दार्शनिक चिंतक है इन्होंने तकरीबन 80 पुस्तकें लिखी हैं)

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय (भारत सरकार की योजनाएं)

मद्यपान एवं नशीली दवा दुरूपयोग निवारण तथा समाज रक्षा सेवाओं के लिए स्वैच्छिक संगठनों को सहायता की योजना

इस योजना के दो घटक हैं-

I. मद्यपान और नशीली दवा दुरूपयोग निवारण के लिए स्वैच्छिक संगठनों को सहायता

II. समाज रक्षा के क्षेत्र में वित्तीय सहायता

I. मद्यपान और नशीली दवा दुरूपयोग निवारण के लिए स्वैच्छिक संगठनों को सहायता

उद्देश्य

मद्यमान एवं नशीली दवा दुरूपयोग निवारण योजना के उद्देश्य इस प्रकार हैं:-

(i) व्यक्ति, परिवार तथा समग्र रूप से समाज पर मादक द्रव्यों तथा नशीली दवाओं का क्या कुप्रभाव पड़ता है, उसके बारे में लोगों में जागरूकता पैदा करना तथा शिक्षित करना।

(ii) व्यक्तियों की पहचान, प्रेरणा, परामर्श, नशामुक्ति, संपूर्ण स्वास्थ्य लाभ के लिए देखभाल तथा पुनर्वास हेतु समुदाय आधारित सेवाओं की समस्त रेंज उपलब्ध कराना।

(iii) व्यक्ति परिवार तथा समग्र रूप से समाज में मादक द्रव्यों और एल्कोहल पर निर्भरता के दुष्परिणामों को कम करना।

(iv) उपर्युक्त उद्देश्यों को सुदृढ़ करने के लिए अनुसंधान प्रलेखीकरण और संगत सूचना के संग्रहण को बढ़ावा देना।

(v) उन कार्यकलापों का समर्थन करना जो इस क्षेत्र में सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अधिदेश के समनुरूप है।

पात्र संगठन/संस्थाएं

इस योजना के अंतर्गत सहायता हेतु निम्नलिखित संगठन/संस्थाएं आदि पात्र होंगे:

(i) सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) अथवा राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों के किसी प्रासंगिक अधिनियम अथवा साक्षरता, वैज्ञानिक और पूर्व सोसाइटियों के पंजीकरण संबंधी राज्य के किसी नियम के तहत पंजीकृत सोसाइटी, अथवा

(ii) कुछ समय के लिए प्रवृत्त किसी नियम के तहत पंजीकृत लोक न्यास, अथवा

(iii) कम्पनी अधिनियम, 1958 की धारा 25 के अंतर्गत स्थापित कंपनी, अथवा

(iv) पंचायती राज संस्थाओं, शहरी स्थानीय निकाय, राज्य/केन्द्र सरकार द्वारा वित्तपोषित अथवा संचालित संगठन/संस्था अथवा स्थानीय निकाय; अथवा

(v) विश्वविद्यालय, समाज कार्य विद्यालय, अन्य प्रतिष्ठित शैक्षिक संस्थाएं, नेहरू युवा केन्द्र सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा अनुमोदित ऐसे अन्य सुप्रतिष्ठित संगठन/संस्थान।

वित्त पोषण पैटर्न

इस योजना के अंतर्गत, जागरूकता सह नशा मुक्ति कैम्प तथा कार्य स्थल निवारण कार्यक्रम आदि आयोजित करने के लिए व्यसनियों के लिए समेकित पुनर्वास केन्द्र (आईआरसीए), क्षेत्रीय संसाधन एवं प्रशिक्षण केन्द्र (आरआरटीसी) की स्थापना के

लिए स्वैच्छिक संगठनों तथा अन्य पात्र एजेंसियों को अनुमोदित व्यय के 90% तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। पूर्वोत्तर राज्यों, सिक्किम तथा जम्मू और कश्मीर के मामले में कुल अनुमत व्यय के 95% तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। शेष का वहन कार्यान्वयन एजेंसी द्वारा किया जाना होता है। नशामुक्ति कैम्पों का आयोजन के केवल मौजूदा आईआरसीए द्वारा किया जाता है।

आईआरसीए तथा आरआरटीसी के कार्य

इस योजना के अंतर्गत आईआरसीए तथा आरआरटीसी के निर्धारित कार्य इस प्रकार हैं–

(क) व्यसनियों के लिए समेकित पुनर्वास केन्द्रः– यह केन्द्र व्यसनियों के पुनर्वास के लिए संयुक्त/समेकित सेवाएं प्रदान करते हैं। एक आईआइसीए का मुख्य कार्य व्यसनियों का परामर्श, उपचार तथा पुनर्वास है। सामान्यतः आईआरसीए निम्नलिखित सेवाएं प्रदान करता है:–

- ✓ निवारात्मक शिक्षा तथा जागरूकता सृजन
- ✓ प्रेरणात्मक परामर्श के लिए व्यसनियों की पहचान
- ✓ नशामुक्ति तथा व्यक्ति का संपूर्ण स्वास्थ्य लाभ
- ✓ रेफरेल सेवाएं
- ✓ उपचार पश्चात् देखभाल तथा फोलोअप
- ✓ सह निर्भरता तथा पुनर्वास के लिए परिवारों को देखभाल तथा समर्थन

(ख) क्षेत्रीय संसाधन तथा प्रशिक्षण केन्द्र–उपचार, पुनर्वास, प्रशिक्षण तथा अनुसंधान के क्षेत्र में लंबे अनुभव और विशेषज्ञता वाले गैर–सरकारी संगठनों को देश के विभिन्न क्षेत्रों के लिए **क्षेत्रीय संसाधन तथा प्रशिक्षण केन्द्र** के रूप में नामित किया गया है। मांग में कमी के विभिन्न पहलुओं पर राष्ट्रीय नशीली दवा दुरूपयोग केन्द्र की क्षेत्रीय प्रशिक्षण यूनिटों के रूप में सेवा प्रदान करते है। आरआरटीसी नशीली दवा दुरूपयोग निवारण के क्षेत्र में कार्यरत गैर–सरकारी संगठनों को निम्नलिखित सेवाएं प्रदान करते हैं–

- ✓ सूचना शिक्षा संचार (आईईसी) सामग्री तैयार करने सहित गैर–सरकारी संगठनों के समस्त कार्यकलापों का प्रलेखन
- ✓ नशीली दवा दुरूपयोग के कार्यक्रमों की एडवोकेसी, अनुसंधान एवं मानीटरिंग
- ✓ गैर–सरकारी संगठनों, समुदाय आधरित संगठनों और उद्यमों को तकनीकी सहायता

II. समाज रक्षा के क्षेत्र में वित्तीय सहायता

''समाज रक्षा के क्षेत्र में वित्तीय सहायता के लिए सामान्य सहायता अनुदान कार्यक्रम योजना'' का लक्ष्य है:–

- मंत्रालय के अधिदेश में आने वाली आवश्यक जरूरतों को पूरा करना जिन्हें इसकी नियमित योजनाओं के तहत पूरा नहीं किया जा सका है तथा
- मंत्रालय के लक्षित समूह के कल्याण और सशक्तिकरण के क्षेत्र में प्रोत्साहनात्मक/प्रायोगिक प्रकृति की ऐसी पहलों को सहायता प्रदान करना जिन्हें इसकी नियमित योजनाओं के तहत सहायता प्रदान नहीं की जा सकी है।

स्वैच्छिक तथा अन्य पात्र संगठनों को अनुमोदित व्यय के 90% तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। यदि कोई संगठन, अपेक्षाकृत ऐसे नए क्षेत्र में कार्य करता है जहां स्वैच्छिक तथा सरकारी प्रयास बहुत सीमित हैं लेकिन सेवा की जरूरत बहुत अधिक है, वहां सरकार शत प्रतिशत लागत का वहन करती है।

विशेष जानकारी मंत्रालय के वेबसाइट www.socialjustice.nic.in पर)

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : जीवन काल, रचनाएं और परिस्थितियां

■प्रो. सुषमा यादव

डॉ. अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 ई. को महू छावनी में हुआ था, जो कि अब मध्य प्रदेश के इन्दौर जिले में है। उनके पिता रामजी सकपाल सेना में सूबेदार मेजर एवं रामानन्द मार्ग के अनुयायी थे। मालोजी सकपाल उनके पिताजी थे, जो कि महाराष्ट्र के कोंकण क्षेत्र के रत्नागिरी जिले के अम्बावडे गांव के निवासी थे और वे सैनिक सेवा से एक हवलदार पद से सेवानिवृत्त हुए थे। अम्बेडकर की प्रारम्भिक शिक्षा सन् 1900 ई. में गवर्नमेन्ट हाई स्कूल, सतारा में हुई। जब वह पांचवी कक्षा में थे, तब उनका विवाह भीखू वालंगकर की पुत्री रमाबाई के साथ हुआ। बम्बई में उन्होंने एलिफिन्सटन हाईस्कूल में अपना प्रवेश करवा लिया, जो उस समय के बम्बई में सबसे अच्छा स्कूल था। बम्बई में अपने जीवन निर्माण काल में भीमराव ने पढ़ने की आदत का विकास किया। एक छात्र के रूप में वह संस्कृत पढ़ना चाह रहे थे लेकिन उनको संस्कृत पढ़ने की स्वीकृति इसलिए नहीं मिली क्योंकि वे अछूत थे। इसलिए उन्होंने संस्कृत के स्थान पर फारसी भाषा का चयन किया। बाद में उन्होंने स्वयं संस्कृत का अध्ययन किया। 14 अप्रैल 1907 ई. को एलिफिंस्टन कॉलेज से उन्होंने मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पास की। इस सभा में एस. के. बोले और कृष्णा जी अर्जुन केलुस्कर जैसे समाज सुधारक उपस्थित थे, जिन्होंने इनको 'महात्मा बुद्ध का जीवन' नामक पुस्तक भेंट दी। परिवार की गरीबी के कारण इण्टरमीडिएट पास करने के बाद वह आगे पढ़ने की स्थिति में नहीं थे। लेकिन कृष्णा जी अर्जुन केलुस्कर के सहयोग से महाराजा बड़ौदा से 25 रुपए महीने की छात्रवृत्ति उच्च अध्ययन के लिए मिली। यह सहायता राशि उस दौर के अतिरिक्त सहायता थी, जो प्रो. मूलर के द्वारा पुस्तकों एवं कपड़ों के द्वारा दी जा रही थी। इन्हीं सहायताओं के कारण वे अपना अध्ययन पूरा कर सके। सन् 1912 ई. में अंग्रेजी और फारसी लेकर उन्होंने बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की।

डॉ. अम्बेडकर के जीवन में एक नया अवसर तब आया, जबकि बड़ौदा के महाराजा ने राज्य के खर्चे पर संयुक्त राज्य अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में कुछ छात्रों को भेजने का निश्चय किया। 4 जून, 1913 ई. को उन्होंने बड़ौदा राज्य के साथ एक अनुबन्ध किया और जुलाई, 1913 ई. के तीसरे सप्ताह में गायकवाड़ अध्येता के रूप में कोलम्बिया विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। वहां उनको समानता के साथ स्वतन्त्रता पूर्वक घुमने-फिरने, सोचने और कार्य करने का अवसर मिला, क्योंकि अब उनके ऊपर अछूत का विशेषण नहीं लगा था। इस तरह उनको मानसिक विकास के लिए एक अच्छा अवसर मिला।

उन्होंने असहायता के दर्शन के खिलाफ विद्रोह किया। तदुपरान्त उनके अन्दर आत्म-सम्मान एवं आत्म सहायता की भावना का विकास हुआ। यू. एस. ए. में उन्होंने राजनीति विज्ञान, नीतिशास्त्र, मानवशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि जैसे विषयों को अध्ययन के लिए चुना।

प्रोफेसर एडवीन आ. ए. सेलीगमेन जैसे प्रसिद्ध अर्थशास्त्री उनके शिक्षक थे। सन् 1915 ई. में उनको अपने शोध प्रबन्ध प्राचीन भारतीय वाणिज्य पर एम. ए. की उपाधि प्राप्त हुई। प्रोफेसर गोल्डन विजर द्वारा 9 मई 1916 ई. को आयोजित मानवशास्त्र की गोष्ठी में उन्होंने अपना शोध पत्र- 'भारत में जातियां : उनके क्रिया-कलाप एवं संरचना का विकास' पढ़ा। उन्होंने जून 1916 ई. में पीएच. डी. डिग्री के लिए 'नेशनल डिविडेन्ट ऑफ इण्डिया' नामक शोध-प्रबन्ध लिखा, जो कोलम्बिया विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकार कर लिया गया और इस पर उनको पीएच. डी. की डिग्री मिली। पुस्तक के रूप में आठ वर्ष के पश्चात् मेसर्स पी. एस. किंग एण्ड सन्स लिमिटेड ने इवोलूशन ऑफ प्राविंशियल फाइनेन्स इन ब्रिटिश इण्डिया' के नाम से इसे प्रकाशित किया। अमेरिका में डॉ. अम्बेडकर ने 2000 पुरानी किताबों को खरीदा और जून, 1916 ई. में अमेरिका छोड़ दिया।

अमेरिका छोड़ने के बाद सन् 1916 में ही अम्बेडकर लंदन पहुंचे और 'बार एट लॉ' की उपाधि के लिए 'ग्रेज इन' में प्रवेश लिया तथा उसी समय उन्होंने लन्दन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एण्ड पोलिटिकल साइंस' में अर्थशास्त्र का अध्ययन करने के लिए प्रवेश प्राप्त किया। लेकिन अध्येता छात्रवृत्ति की अवधि समाप्त होने के कारण जो कि उनको महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ की तरफ से मिला था, आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा। अम्बेडकर ने इस निर्णय पर महाराजा सयाजीराव से पुन: विचार करवाना चाहा, परन्तु असफल रहे। उच्च अध्ययन की उनकी जिज्ञासा को देखते हुए उनके प्रोफेसर ने उनको डी. एस. सी. की उपाधि के लिए तैयारी करने की अनुमति प्रदान कर दी। प्रोफेसर एडविन केनन की विशेष संस्तुति के आधार पर उनको अक्टूबर, 1916 ई. के उपरान्त चार वर्ष तक लन्दन विश्वविद्यालय में

शोध-प्रबन्ध जमा करने की अनुमति मिली। इस प्रकार लन्दन विश्वविद्यालय में अपनी उपाधि पूरा करने का निश्चय करके अम्बेडकर भारत लौट आए।

सितम्बर 1917 ई. में महाराजा बड़ौदा के सैनिक सचिव के रूप में उनको नियुक्ति मिली तथा यह सूचना भी सम्बन्धित लोगों को दी गई कि रेलवे स्टेशन पर उनका स्वागत करें, लेकिन रेलवे स्टेशन पर उन्हें कोई नहीं मिला। बड़ौदा में किसी होटल, होस्टल एवं लॉज में रहने की जगह नहीं मिली। तब उन्होंने एक फारसी होटल में शरण ली। अछूत रूपी धब्बा उनको लगातार नीचा कर रहा था, उनके सहयोगी और चपरासी उनसे इस तरह का व्यवहार करते थे, मानों वे कुष्ठ रोग से ग्रसित हों। कार्यालय में उनको पीने के लिए पानी नहीं मिलता था, यह सब कुछ उनके लिए असहाय था। पारसी होटल में जहां उनको शरण मिली थी। वहां उन्होंने पूरे परिचय को छिपाया था, लेकिन एक दिन उनको यह होटल खाली करना पड़ा। उन्होंने महाराजा के पास एक पत्र भेजा, लेकिन बड़ौदा के दीवान ने इस संदर्भ में कुछ भी करने में असमर्थता प्रकट की। तब उन्होंने अनुभव किया कि अपनी तमाम उपलब्धियों के बावजूद वे जातिवादी हिन्दुओं के पूर्वाग्रहों को शान्त नहीं कर सकेंगे। तब वे एक पेड़ के नीचे बैठे और उनके आंखों में आंसुओं की बाढ़ आ गई। सवर्ण हिन्दुओं के इस अमानवीय व्यवहार ने उनको बड़ौदा के महाराजा का ध्यान इस तरफ आर्कषित करना चाहा, लेकिन इससे उनकी समस्या का कोई समाधान नहीं हुआ। बड़ौदा के एक प्रोफेसर ने उनको अपने घर में पेइंग गेस्ट के रूप में आमंत्रण दिया, लेकिन बाद में अपनी पत्नी के विरोध के कारण अपना निमंत्रण वापस ले लिया। इस प्रकार सन् 1917 ई. में अम्बेडकर भारत वापस आए। यहां उन्होंने 'स्माल होल्डिंग्स इन इण्डिया' नाम से एक पुस्तिका प्रकाशित की।

इस समय अम्बेडकर गम्भीर आर्थिक संकट में पड़ गए, इसलिए उन्होंने एक फारसी सज्जन के कार्यालय में ट्यूटर का कार्य शुरू किया। साथ ही साथ उन्होंने स्टॉक एवं शेयर व्यवसाय में काम करने वाले लोगों को सलाह देने के लिए एक व्यवसायिक फर्म बनायी, लेकिन इसको स्थाई रूप से बन्द करना पड़ा, क्योंकि ग्राहक एक अछूत से सलाह लेने के लिए तैयार नहीं थे। तब उन्होंने पारसी सज्जन के पत्र व्यवहार एवं लेखा कार्य को देखना शुरू किया।

सन् 1918 ई. को अम्बेडकर को ज्ञात हुआ कि बम्बई में सिड्नहैम कॉलेज में राजनीतिक अर्थशास्त्र विषय के प्रोफेसर का एक पद खाली है। बम्बई के पूर्व गवर्नर लॉर्ड सिड्महैड की सहायता से प्रोफेसर का यह पद उपरोक्त कॉलेज में उनको अस्थायी रूप से मिला वे अपने छात्रों में लोकप्रिय हुए। अनुमति से दूसरे कॉलेज के बहुत से छात्र उनकी कक्षाओं में उनके व्याख्यानों के लिए उपस्थित रहने लगे, लेकिन उनके प्रति सामाजिक व्यवहार अपरिवर्तित रहा। ऊंची जाति के प्रोफेसरों ने अपने निश्चित किए हुए पात्रों से उनके जल पीने से आपत्ति जताई। इस अपमान एवं दुर्व्यवहार से वे बहुत आहत हुए। वह सही समय का इन्तजार कर रहे थे। इस कॉलेज में उन्होंने अक्टूबर से दिसम्बर, 1918 ई. तक कार्य किया तत्पश्चात् लन्दन में अर्थशास्त्र और कानून की पढ़ाई पढ़ने के लिए इस पद से इस्तीफा दे दिया।

1919 में साउथ बरो समिति के समक्ष मताधिकार के मामले में उनको साक्ष्य के लिए बुलाया गया। इस कमीशन की संस्तुति ही मण्टफोर्ड सुधार का आधार बनी। 22 फरवरी, 1919 ई. को इस आयोग की रिपोर्ट प्रस्तुत की गई।

इसी वर्ष बम्बई में अम्बेडकर कोल्हापुर के महाराजा छत्रपति शाहू महाराज के घनिष्ठ संपर्क में आए। शाहू जी ने जाति प्रथा के विरुद्ध संघर्ष किया था और अछूतों की हर प्रकार से सहायता की थी। कोल्हापुर के महाराजा की सहायता से मूकनायक नामक साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। यह पत्रिका डा. अम्बेडकर के विचारों को प्रतिध्वनित करती थी, लेकिन वे इसके अधिकारिक सम्पादक नहीं थे। यह पत्रिका अधिक दिनों तक नहीं चल पाई। इन दिनों डा. अम्बेडकर बहुत विचलित रहते थे और वेतन का एक निश्चित भाग अपनी पत्नी को घर का खर्च चलाने के लिए भेजते थे। अन्त में उन्होंने कुछ धन बचाया, कोल्हापुर के महाराजा से कुछ सहायता प्राप्त की, अपने मित्र नवल भदैना से कुछ ऋण लिया और आगे कानून एवं अर्थशास्त्र की पढाई पूरी करने के लिए जुलाई, 1920 ई. को लन्दन चले गए।

लन्दन पहुंचने पर सितम्बर, 1920 ई. में अम्बेडकर ने लन्दन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स एण्ड पोलिटीकल साइंस में अध्ययन शुरू किया। साथ ही बैरिस्टरी की उपाधि के लिए 'ग्रेज इन' में प्रवेश लिया। वे कई पुस्तकालयों के सदस्य बन गए - जैसे लन्दन विश्वविद्यालय जनरल लाइब्रेरी, गोल्ड स्मिथ लाइब्रेरी और शहर के अन्य दूसरे पुस्तकालय। वह पुस्तकालयों में बिना दिन का भोजन खाए पूरा दिन पढ़ते रहते थे। क्योंकि उन दिनों उनके पास दोपहर के भोजन के लिए पैसे नहीं हुआ करता थे। उन्होंने भ्रमण, थियेटर, जलपान गृह एवं बस इत्यादि की तरफ बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। फिर से मित्र नवल भदैना से 2000 रुपया उधार लिया।

जून 1921 ई. में 'लन्दन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स एण्ड पोलिटिकल साइंस' में एम. एस. सी. उपाधि के लिए उनके शोध -प्रबन्ध 'प्रोविन्शियल डिसेंट्रलाइजेशन ऑफ इम्पीरियल फाइनेन्स इन ब्रिटिश इण्डिया' को स्वीकृति मिली। अक्टूबर, 1922 ई. को उन्होंने अपना प्रसिद्ध शोध पत्र **'रुपए की समस्या, इसकी उत्पत्ति और हल'** डी. एस. सी. अर्थशास्त्र की उपाधि के लिए प्रस्तुत किया। उसी समय उनको बार में भी बुलाया गया, लेकिन उस

समय उनके पास बैरिस्टर इन लॉ की उपाधि के लिए अध्ययन का समय नहीं था। अप्रैल और मई, 1922 ई. के मध्य उन्होंने जर्मनी के बोन विश्वविद्यालय में अपने प्रवेश की व्यवस्था की तथा जर्मन एवं फ्रेंच भाषा सीखना शुरू किया। मार्च 1923 में प्रोफेसर एडवीन केनन ने उनको लन्दन बुलाया। उनके शोध-प्रबन्ध ने लन्दन विश्वविद्याालय के शैक्षणिक जगत में हलचल पैदा कर दी थी। इस शोध प्रबन्ध में उन्होंने भारत में ब्रिटिश योजना प्रणाली की आलोचना की थी। उन पर यह शक किया गया कि वे भारतीय क्रान्तिकारी हैं। परीक्षकों ने बिना निष्कर्ष बदले पुन: शोध-प्रबन्ध लिखने को कहा। अपैल, 1923 ई. में डॉ. अम्बेडकर बम्बई लौट गए क्योंकि उनके आर्थिक स्रोत समाप्त हो गए थे। अपनी बचत का उपयोग उन्होंने पुस्तकें खरीदने में किया। भारत में भी उनके परिवार को आर्थिक कठिनाइयां झेलनी पड़ रही थी। फिर भी, कुछ समय पश्चात् शोध-प्रबन्ध को उन्होंने पुन: लिखा और जमा करा लिया। इस शोध- प्रबन्ध पर उनको 'डाक्टर ऑफ साइंस' की उपाधि मिली। अप्रैल, 1923 ई. में डॉ. अम्बेडकर को 'बार' में बुलाया गया।

जून, 1923 ई. में बम्बई के उच्च न्यायालय में आपने वकालत का पेशा प्रारम्भ किया, उस समय उनके पास सनद प्राप्त करने के लिए पैसा नहीं था, लेकिन उनके पुराने मित्र नवल भदैना ने पुन: उनकी सहायता की। उच्च न्यायालय में भी उन पर अछूत का टीका लगा था। उनके अधिकतर मुवक्किल बहुत गरीब परिवार से थे, जो कि उनके सेवा के लिए बदले में बहुत कम धन दे सकते थे या दे ही नहीं सकते थे। अछूत होने के कारण वे किसी और सालीसीटर के साथ व्यवसायी नहीं बन सकते थे। अत: उन्होंने मर्केन्टाइल लॉ के प्रवक्ता के रूप में तीन वर्ष तक बाटली बांय एकाउन्टेन्सी स्कूल में कार्य किया। बम्बई विश्वविद्यालय में परीक्षक के रूप में भी वे कार्य करते थे जिससे उनको कुछ आर्थिक सहायता मिल जाया करती थी। उनके परिवार की आर्थिक स्थिति इतनी खराब हो गई थी कि उनकी पत्नी को पड़ोसी से पैसा मांगना पड़ता था। अम्बेडकर के लिए निश्चय ही यह असहनीय परिस्थितियां थी।

9 मार्च, 1924 ई. को डा. अम्बेडकर ने दलितों के उत्थान के लिए अपना सामाजिक आन्दोलन प्रारम्भ किया। बम्बई में दामोदर हाल में दलितों की सभा की व्यवस्था थी और उसमें वंचित एवं दलित वर्ग के लोगों की समस्याओं के ऊपर विचार किया गया। 20 जुलाई, 1929 ई. को प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष के रूप में बहिष्कृत हितकारिणी सभा के नाम से उन्होंने एक संस्था बनाई। दलितों में शिक्षा में प्रसार, आर्थिक परिस्थितियों में सुधार और उनकी समस्याओं का प्रतिनिधित्व करना, इस नई सभा के तात्कालिक उद्देश्य थे। 4 जनवरी, 1925 ई. में रत्नागिरी जिले के कुलावा में दलितों के प्रथम अधिवेशन में डा. अम्बेडकर सम्मिलित हुए और उनकी अध्यक्षता की।

सन् 1926 ई. में डॉ. अम्बेडकर एक बहुत बड़े न्यायिक वाद में व्यस्त थे, जो कि उनके जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना है। पूना के कुछ ब्राह्मणों ने तीन गैर ब्राह्मण नेताओं के खिलाफ यह वाद प्रस्तुत किया कि वे ब्राह्मण समुदाय पर यह आरोप लगाते हैं कि इन्होनें भारतवर्ष को नष्ट किया। इस केस में उन्होंने एक अच्छा बचाव किया और मुकद्मा जीत गए। सन् 1926 ई. में रायल कमीशन एवं करेंसी फाइनेन्स के सम्मुख साक्ष्य दिए। फरवरी 1927, ई. को बम्बई विधान परिषद में नामित हुए।

डॉ. अम्बेडकर ने उस स्वतंत्र आन्दोलन में हिस्सा नहीं लिया जो कांग्रेस पार्टी द्वारा संचालित हो रहा था। आम जनता और वंचित वर्ग की स्वतंत्रता के लिए उन्होंने स्वयं एक आन्दोलन की शुरुआत की। वे दलितों के लोकतांत्रिक अधिकारों को सुरक्षित करना चाहते थे। वह लोगों को जाति, लिंग, धर्म के आधार पर हो रहे शोषण एवं असमानता से मुक्ति दिलाना चाहते थे। यही उनके जीवन का उद्देश्य था। इसलिए उन्होंने बहुत-सी सभाओं एवं संस्थाओं का आयोजन किया और अपने विचारों को व्यक्त किया ।

सन् 1927 ई. को महाड़ में दलितों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें लगभग 10 हजार दलितों ने हिस्सा लिया। सम्मेलन के बाद वे जुलूस के रूप में पानी पीने और लेने के अधिकारों को जताने के लिए चावदार तालाब तक गए। 19 मार्च 1927 ई. को बम्बई विधान परिषद में डॉ. अम्बेडकर ने एक बिल पेश किया, जिसके द्वारा बम्बई विधान परिषद में डॉ. अम्बेडकर बम्बई हेरिडिटरी एक्ट 1874 में सुधार करना चाहते थे, लेकिन उनको सफलता नहीं मिली। 3 अप्रैल, 1927 ई. से उन्होंने मराठी में 'बहिष्कृत भारत' नाम से एक पाक्षिक पत्र निकाला। अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए उनको एक उचित मंच की तलाश थी, क्योंकि उस समय के नेतृत्व को अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए समाचार पत्रों की अत्यन्त आवश्यकता पड़ती थी। उन्होंने अपने एक सम्पादकीय में लिखा था यदि तिलक दलित के रूप में पैदा हुए होते, तो उनका नारा होता- 'अस्पृश्यता निवारण मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है, न कि स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है'। 25 दिसम्बर, 1927 ई. को महाड़ में डॉ. अम्बेडकर ने एक सत्याग्रह सम्मेलन आयोजित किया, जो कि कोलाबा जिले में था। इस जनसभा में 'मनुस्मृति' जलाने का प्रस्ताव पास किया गया और उसी दिन 'मनुस्मृति' को जला दिया गया। 28 मार्च, 1928 ई. को उन्होंने बेगार के खिलाफ आन्दोलन प्रारम्भ किया। जून, 1928 ई. में कार्यकारी प्रोफेसर के रूप में उन्होंने गवर्मेन्ट लॉ कॉलेज, बाम्बे में नियुक्ति स्वीकार की और लगभग एक

वर्ष तक वहां कार्य किया।

अम्बेडकर ने दलित एवं वंचित वर्ग के अधिकारों के लिए निरंतर संघर्ष किया। वह इन वर्गों को उच्च शिक्षा दिलाना चाहते थे। उनका उद्देश्य इसका सांस्कृतिक विकास करना था। जून, 1928 ई. में बाम्बे में इस वर्ग के छात्रों के लिए दो छात्रावासों की स्थापना भी करवाई। इसके एक महीने बाद उन्होंने 'डिप्रेस्ड क्लासेज एजुकेशन सोसाइटी' नाम का एक संगठन प्रारम्भ किया। उन्हीं के प्रयासों के फल स्वरूप 1928 ई. में बाम्बे सरकार ने दलित वर्ग के छात्रों के लिए पांच छात्रावासों को खोलने की घोषणा की। उसी वर्ष अम्बेडकर बाम्बे प्रेसीडेन्सी के सदस्य के रूप में साइमन कमीशन के सामने साक्ष्य देने के लिए बुलाए गए। वहां उन्होंने दलित वर्ग के लिए अलग चुनाव क्षेत्र की मांग की। अम्बेडकर के साइमन कमीशन के सम्मुख उपस्थित होने के फलस्वरूप छात्रों में आक्रोश फैल गया और उन्होंने उनके विरुद्ध प्रदर्शन भी किया।

अगले ही वर्ष यानी मार्च 1929 ई. में अम्बेडकर ने **'समता सैनिक दल'** नामक एक संस्था बनाई। उन्होंने यह टिप्पणी की एक स्थापित समाज का प्रमुख सिद्धान्त सामाजिक समानता/समता होता है। अप्रैल 1929 ई. में उन्होंने कपड़ा मिलों के श्रमिक को संगठित किया और उनको अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए लड़ने का आह्वान किया। मार्च, 1930 ई. में नासिक जिले के कालाराम मन्दिर में प्रवेश का सत्याग्रह उनके नेतृत्व में प्रारम्भ हुआ।

इसी बीच साइमन कमीशन की संस्तुतियों के फलस्वरूप 12 नवम्बर 1930 ई. को गोलमेज सम्मेलन तय हुआ। दलितों के प्रतिनिधि के रूप में ब्रिटिश सरकार ने अम्बेडकर को आमंत्रित किया। 17 से 27 नवम्बर, 1930 ई. तक उन्होंने गोलमेज के प्रथम सत्र में भाग लिया और दलितों की स्थिति पर विचार-विमर्श किया।

दिसम्बर, 1930 ई. में ही अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए **'जनता'** नामक पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया। सितम्बर, 1931 ई. से प्रारम्भ हुए गोलमेज सम्मेलन के द्वितीय सत्र में भी उन्होंने एक प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। उनका चयन संघीय संरचना समिति और अल्पसंख्यक समिति के लिए किया गया। अल्पसंख्यक समिति के सम्मेलन में गांधी ने दलितों के पृथक निर्वाचन मण्डल की मांग का विरोध किया और इस तरह द्वितीय गोलमेज सम्मेलन बिना किसी निर्णय के समाप्त हुआ और अम्बेडकर लन्दन से भारत लौट आए। अगस्त, 1932 ई. में रैमजे मैकडोनाल्ड ने दलितों को पृथक निर्वाचन मण्डल देने के साथ अपने कम्युनल अवार्ड की घोषणा की। इसके कुछ दिनों के बाद 24 दिसम्बर 1932 ई. को यरवदा जेल में अम्बेडकर और गांधी ने एक सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किया, जिसको भारत के इतिहास में प्रसिद्ध **'पूना पैक्ट'** के नाम से जाना जाता है।

दिसम्बर, 1930 ई. में ही अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए जनता नामक पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया। सितम्बर, 1931 ई. से प्रारम्भ हुए गोलमेज सम्मेलन के द्वितीय सत्र में भी उन्होंने एक प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। उनका चयन संघीय संरचना समिति और अल्पसंख्यक समिति के लिए किया गया।

7 नवम्बर से 24 दिसम्बर, 1932 ई. तक तीसरा गोलमेज सम्मेलन हुआ। अम्बेडकर ने इस सम्मेलन में भी भाग लिया, लेकिन सम्मेलन असफल रहा। जून 1935 ई. में गवर्नमेन्ट लॉ कॉलेज में प्रिंसिपल और प्रोफेसर ऑफ जूरीसपोडेन्ट के रूप में उनकी नियुक्ति हुई। इसी वर्ष 13 अक्टूबर को दलितों का प्रांतीय सम्मेलन नासिक जिले के येवला में हुआ। अपने अध्यक्षीय भाषण में अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म छोड़ने की घोषणा की। उन्होंने कहा कि 'मैनें हिन्दू के रूप में जन्म लिया है। लेकिन हिन्दू के रूप में मरूंगा नहीं।' उनके हजारों अनुयायियों ने उनके इस निर्णय का समर्थन किया। दिसम्बर, 1935 ई. में उन्हें लाहौर के 'जात-पात तोड़क मण्डल' संस्था की तरफ से वार्षिक अधिवेशन में अध्यक्षता करने का निमंत्रण मिला जो कि 1937 ई. के ईस्टर की छुटि्टयों में होना तय था। 1936 ई. में उन्होंने बाम्बे प्रेसीडेन्सी के महार सम्मेलन को संबोधित किया और इसमें **'लेबर पार्टी'** के रूप में एक राजनैतिक दल बनाया। 17 फरवरी, 1937 ई. को बाम्बे विधान परिषद के लिए उनका चुनाव हुआ। अगस्त, 1937 में उन्होंने 'खोती बिल' और 'एबोलिशन ऑफ महार वतन बिल' पेश किया।

सन् 1938 ई. में कांग्रेस पार्टी ने दलितों का नाम हरिजन रखने का बिल पेश किया। अम्बेडकर ने इस बिल की आलोचना इस आधार पर की कि केवल नाम बदलने से दलितों की परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं होने वाला है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान सात अन्य दलितों के साथ वे सुरक्षा सलाहकार समिति के अध्यक्ष चुने गए। अप्रैल 1942 ई. में लेबर पार्टी का रूपान्तरण इण्डिया शिड्यूल्ड कास्ट फेडेरेशन के रूप में हुई। इस कार्यालय में उन्होंने केन्द्रीय सरकार से दलितों की शिक्षा के लिए पर्याप्त धन

उपलब्ध कराया और दूसरी अन्य सेवाओं में भी अवसर प्रदान करवाएं। राष्ट्रीय स्तर पर हो रही आलोचनाओं के बावजूद इस पद पर उन्होंने जुलाई, 1946 ई. तक कार्य किया।

इस दौरान अप्रैल, 1942 में उन्होंने औद्योगिक मजदूरों को तनख्वाह के साथ छुटि्टयों के संदर्भ में एक अमेंडमेन्ट बिल प्रस्तुत किया। उन्होंने आशा व्यक्त की कि श्रम संहिता में यह एक स्थायी स्थान ग्रहण करेगा।

8 जुलाई, 1945 ई. को डॉ. अम्बेडकर ने पीपुल एजुकेशन सोसाइटी की स्थापना की। और लगभग एक वर्ष पश्चात् 20 जून, 1946 को गरीबों एवं पिछड़ों को उच्च शिक्षा देने के लिए सिद्धार्थ नाम से एक कॉलेज का प्रारम्भ किया। वर्तमान में यह संस्था बम्बई और औरंगाबाद में ग्यारह कॉलेजों को संचालित कर रही है, जिनके साथ छात्रावास की सुविधा भी मिली हुई है। साथ ही साथ यह संस्था तीन हाई स्कूलों का संचालन कर रही है। इस संस्था का विधान इस प्रकार बनाया गया है कि यह गरीबों को उच्च शिक्षा दिलानें में सहायता प्रदान कर सके।

10 जनवरी, 1946 ई. को ब्रिटिश संसदीय प्रतिनिधिमण्डल से डॉ. अम्बेडकर का साक्षात्कार हुआ। डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि यदि स्वराज्य का तात्पर्य अल्पसंख्यकों की सहमति से बहुसंख्यकों की सरकार है तो इस तरह के स्वराज्य का भी स्वागत करेंगे। इसके कुछ समय पश्चात् 24 मार्च को ब्रिटिश कैबिनेट प्रतिनिधि मण्डल दिल्ली पहुंचा। 5 अप्रैल को उनका ब्रिटिश प्रतिनिधिमण्डल के साथ साक्षात्कार हुआ। कैबिनेट मिशन के सम्मुख डॉ. अम्बेडकर ने यह मांग पेश की कि अनुसूचित जातियों को पृथक निर्वाचक मण्डल दिया जाय। जुलाई में उन्होंने वायसराय के कार्य साधक कौंसिल की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया, परन्तु इसी वर्ष सितम्बर में डॉ. अम्बेडकर दलितों के संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए इंग्लैण्ड गए। वायसराय ने घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार ने विधान मण्डल दल के चुने हुए प्रतिनिधियों के साथ नई सरकार स्थापित करने का निर्णय किया है। तब नवम्बर में बंगाल विधानसभा के दलित प्रतिनिधियों की सहायता से वे संविधान सभा के लिए चुने गए। अगले महीने संविधान सभा की अपनी पहली घोषणा में उन्होंने 'संयुक्त भारत' की बात कही।

उनकी सक्रिय उपस्थिति व उनके निरन्तर प्रयासों से 29 अपैल, 1947 को संविधान सभा के तीसरे अधिवेशन में अस्पृश्यता निवारण अधिनियम पास किया गया और अस्पृश्यता को एक अपराध घोषित किया गया। 15 अगस्त, 1947 ई. को भारत स्वतंत्र हुआ और डॉ. अम्बेडकर को स्वतन्त्र भारत के संविधान के निर्माण के लिए बनाई गई संविधान निर्माण समिति के अध्यक्ष के रूप में चुना गया।

26 नवम्बर, 1949 ई. को उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया संविधान स्वीकार किया गया। 1949 ई. में उन्होंने काठमाण्डू, नेपाल में विश्व बौद्ध सम्मेलन को सम्बोधित किया, जो मार्क्सवाद बनाम बौद्धवाद पर आयोजित था। जुलाई, 1951 में उन्होंने भारतीय बौद्ध जनसंघ नामक संस्था बनाई। सितम्बर 1951 ई. में उन्होंने बौद्ध उपासना पंथ नामक बौद्धों की एक प्रार्थना पुस्तक बनाई।

जनवरी, 1952 ई. में प्रथम संसदीय चुनाव में डॉ. अम्बेडकर पराजित हुए, इससे उनको बड़ा दु:खद आश्चर्य हुआ। बाद में उनका चयन बाम्बे विधान परिषद में हुआ। साथ ही 1952 में कोलम्बिया विश्वविद्यालय ने अपने विशेष अधिवेशन में उनको एल. एल. डी. की उपाधि दी। 12 जनवरी, 1952 ई. में उस्मानिया विश्वविद्यालय ने उनको डी. लिट. की ऑनरेरी डिग्री प्रदान की।

सन् 1954 ई. में अम्बेडकर (बर्मा) रंगून में हो रहे विश्व बौद्ध सम्मेलन में सदस्य के रूप में नामित हुए। मई, 1955 में उन्होंने भारतीय बौद्ध महासभा नामक संस्था बनाई। 14 अक्टूबर, 1956 को अपने लाखों अनुयायियों के साथ नागपुर में हुए ऐतिहासिक उत्सव में उन्होंने बौद्ध धर्म ग्रहण किया। नवम्बर 1956, में काठमाण्डू नेपाल में हुए विश्व बौद्ध सम्मेलन में एक प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। जहां उन्हें नवबुद्ध के रूप में मान्यता मिली।

6 दिसम्बर, 1956 को अत्यन्त प्रात: काल बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर का परिनिर्वाण हुआ। उनका पार्थिक शरीर को नई दिल्ली से मुंबई ले जाया गया, जहां उनके पुत्र यशवंत राव द्वारा अन्तिम संस्कार किया गया था, उस दादर चौपाटी नामक स्थान पर सन् 1960 ई. में चैत्य भूमि नाम से एक स्तूप खड़ा किया गया।

डॉ. अम्बेडकर के लेख और भाषण:

डॉ. अम्बेडकर जब कोलम्बिया विश्वविद्याालय के छात्र थे, तभी से उन्होंने लिखना और भाषण देना प्रारम्भ कर दिया था। फाइनेन्स ऑफ ईस्ट इण्डिया कम्पनी और प्रशासन नामक लघु शोध 15 मई, 1915 ई. को विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया गया । उनके द्वारा लिखे अन्य लेख एवं भाषण इस प्रकार हैं:-

1916 में अम्बेडकर ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय में प्रोफेसर गोल्डन विजर द्वारा आयोजित मानवशास्त्र की गोष्ठी में अपना शोध-पत्र **'भारत में जातियां-उनके क्रिया-कलाप और संरचना का विकास'** पढ़ा। यह निबन्ध इंडियन एंटीक्वेरी जर्नल में मई 1917 में यू. एस. ए. से प्रकाशित हुआ। इसी वर्ष जून में उन्होंने **'नेशनल डिविडेन्ड ऑफ इण्डिया'** नामक शोध प्रबन्ध लिखा तथा कोलम्बिया विश्वविद्यालय के इकोनॉमिक्स एसोसिएशन में **'रिसपॉन्सीबिलिटी ऑफ प्राविंशियल गर्वमेन्ट इन इण्डिया'** नामक लेख पढ़ा।

1918 में श्री बर्ट्रेंड रसेल कृत प्रिसिंपल ऑफ सोशल रिकंस्ट्रक्शन पुस्तक की समीक्षा जर्नल ऑफ द इण्डियन इकोनॉमिक

सोसाइटी खण्ड -1 में प्रकाशित हुई।

1920 में मराठी भाषा में **‘मूक नायक’** नामक साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया और और अगले वर्ष जून में एम. एस. सी. उपाधि के लिए उन्होंने अपना शोध-प्रबन्ध, **‘प्रोविंशियल डिसेन्ट्रलाइजेशन ऑफ इंपीरियल फाइनेन्स इन ब्रिटिश इण्डिया’** प्रस्तुत किया।

1922 में अपना प्रसिद्ध शोध-पत्र रूपए की समस्या उत्पत्ति और हल डी. एस. सी. की उपाधि के लिए प्रस्तुत किया।

1923 में उनकी पी. एच. डी. शोध प्रबन्ध का नाम बदलकर मेसर्स पी. एस. किंग एण्ड सन्स लिमिटेड ने ब्रिटिश भारत में राजकीय पूंजी का विकास नाम से पुस्तक के रूप में लन्दन से प्रकाशित किया।

1927 में बम्बई से मराठी में बहिष्कृत भारत नामक साप्ताहिक समाचार पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया।

1928, मई में इण्डियन स्टैच्यूटरी कमीशन के समक्ष बहिष्कृत हित-कारिणी सभा के प्रतिनिधि के रूप में एक स्टेटमेन्ट प्रस्तुत किया।

1929 मार्च में अम्बेडकर ने **‘समता’** समाचार पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया।

1930 में उन्होंने नागपुर में **‘ऑल इण्डिया डिप्रेस्ड क्लासेज’** द्वारा आयोजित सम्मेलन को सम्बोधित किया। उनका भाषण भारत भूषण प्रिटिंग प्रेस, बम्बई से प्रकाशित हुआ।

1935 में अम्बेडकर ने जात-पात तोड़क मण्डल, लाहौर वार्षिक अधिवेशन में एनिहिलेशन ऑफ कास्ट नामक लेख पढ़ा।

1936 में उन्होंने, इन्डिपेन्डेन्ट लेबर पार्टी, का गठन किया। पार्टी की नीतियों और उद्देश्यों को एक ‘पत्रिका’ के रूप में प्रकाशित किया।

वर्ष 1936 में पूना में, संसदीय लोकतंत्र पर व्याख्यान दिया।

1939, जनवरी में गोखले मेमोरियल हॉल, पूना में सम्पन्न द गोखले इंस्टीट्यूट ऑफ पॉलिटिक्स एण्ड इकोनॉमिक्स के वार्षिक उत्सव में **‘संघ बनाम स्वतंत्रता’** पर व्याख्यान दिया।

1940 में बॉम्बे की ठक्कर एण्ड कंपनी ने अम्बेडकर द्वारा लिखित ‘थॉट ऑन पाकिस्तान’ नामक पुस्तक का प्रकाशन किया।

1943 में उनका **‘ह्वाट एल्स द वर्ल्ड टुडे’** नामक लेख द इण्डियन रीडर डाइजेस्ट में छपा। इसी वर्ष उनकी लिखी **‘गांधी एण्ड द इमैनीसीपेशन ऑफ द अनटचेबुल्स’** नामक पुस्तक बम्बई की **‘ठक्कर एण्ड कंपनी’** से प्रकाशित हुई। तथा गोखले मेमोरियल हाल में पूना में महादेव रानाडे के 101 वें जन्म दिवस समारोह में **‘रानाडे, गांधी और जिन्ना’** पर भाषण दिया, जो इसी नाम से ठक्कर एण्ड कंपनी ने प्रकाशित किया।

वर्ष 1944 में अम्बेडकर द्वारा लिखित सिड्यूल्ड कास्ट आस्क फार “यूचर सेफगार्ड, सेपरेट इलेक्ट्रेट्स एण्ड रिजर्वेशन इन पब्लिक सर्विस, ‘फेडरेशन कमेटी आन फण्डामेण्टल राइट मेल’ में प्रकाशित हुआ। और **‘नेशनलिज्म इन इण्डिया रिवोल्यूशन एण्ड काउंटर रिवोल्यूशन’** नामक लेख 25 सितम्बर 1944 को लिबरेशन मद्रास से प्रकाशित हुआ।

वर्ष 1945 में बम्बई की ठक्कर एण्ड कंपनी ने गांधी और अम्बेडकर द्वारा लिखित कांग्रेस ने अछूतों के लिए क्या किया नामक पुस्तक का प्रकाशन किया। इसी वर्ष फरवरी में उनकी पुस्तक ‘पाकिस्तान थॉट ऑन द पार्टिशन ऑफ इण्डिया’ **‘थॉट ऑन पाकिस्तान’** का संशोधित संस्करण नाम से प्रकाशित हुआ और मई में साम्प्रदायिक गतिरोध और उसके समाधान के उपाय विषय पर बम्बई में आयोजित अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिसंघ के अधिवेशन में दिया गया भाषण दिल्ली के एफ. एण्ड ओ प्रिटिंग प्रेस ने प्रकाशित किया।

वर्ष 1946 में अम्बेडकर ने **‘कैबिनेट मिशन एण्ड द अनटचेबुल्स’** नाम से एक पैम्पलेट का प्रकाशन किया। उसी वर्ष बम्बई की ठक्कर एण्ड कंपनी ने उनके **‘हिस्ट्री ऑफ इंडियन करेंसी एण्ड बैंकिग’** नामक पुस्तक प्रकाशित की तथा ‘शूद्र कौन थे’, वे इन्डो आर्यन समाज में चौथे वर्ण में कैसे आए नामक ग्रन्थ का प्रकाशन बम्बई की ठक्कर एण्ड कंपनी ने किया।

1947 में अम्बेडकर ने राज्य और अल्पसंख्यक उनके अधिकार क्या हैं और उन्हें स्वतन्त्र भारत के संविधान में कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है नामक स्मरण पत्र संविधान सभा में सदस्यों के समक्ष पेश किया, जिसमें उन्होंने राज्य समाजवाद की योजना की व्याख्या की। इसी वर्ष उनका संयुक्त बनाम पृथक निर्वाचन हिन्दुओं का तर्क-वितर्क पृथक

1947 में अम्बेडकर ने राज्य और अल्पसंख्यक उनके अधिकार क्या हैं और उन्हें स्वतन्त्र भारत के संविधान में कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है नामक स्मरण पत्र संविधान सभा में सदस्यों के समक्ष पेश किया, जिसमें उन्होंने राज्य समाजवाद की योजना की व्याख्या की।

निर्वाचन के विरुद्ध अवास्तविक और असमर्थित है। जयभीम, मद्रास से प्रकाशित हुआ।

1948 में अम्बेडकर का महाराष्ट्र एक भाषाकार प्रांत वक्तव्य पर बम्बई की ठक्कर एण्ड कम्पनी ने प्रकाशित किया तथा इसी वर्ष में उनका अस्पृश्य नामक ग्रन्थ भी प्रकाशित हुआ।

1951 में अम्बेडकर ने **'बौद्ध उपासना पंथ'** नामक बौद्धों पर एक प्रार्थना पुस्तक लिखी तथा 1954 में ही उन्होंने आकाशवाणी दिल्ली से **'मेरा निजी दर्शन'** विषय पर ऐतिहासिक भाषण दिया।

1955 में इण्डियन कॉन्फ्रेंस ऑफ द सोशल वर्क द्वारा बम्बई में आयोजित सेमिनार में 'ऑन कास्टिज्म एण्ड रिमूवल ऑफ अनटचेबिलिटी' नामक रिपोर्ट प्रस्तुत की।

1956 में अम्बेडकर ने विश्व बौद्ध सम्मेलन काठमाण्डू नेपाल में बुद्धिज्म एण्ड कम्यूनिज्म पर एक तुलनात्मक लेख पढ़ा। तथा बुद्ध और उनका धर्म नामक पुस्तक लिखी। इसी वर्ष उनका 'हिन्दू नारी का उत्थान एवं पतन' लेख एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित हुआ तथा 'रिवोल्यूशन एण्ड काऊन्टर रिवोल्यूशन इन इण्डिया' और बुद्ध और कार्ल मार्क्स नामक ग्रन्थ लिखे।

भीमराव रामोजी अम्बेडकर के विचारों के मूल्यांकन पूर्व यह आवश्यक है कि उन सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक कारकों को समझा जाए जिन्होंने डॉ. अम्बेडकर के जीवन दर्शन को एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया। इन सन्दर्भ में उन घटनाओं, विचारों और व्यक्तियों को जानना आवश्यक है, जिन्होंने जीवन पर्यन्त अम्बेडकर को प्रभावित किया।

भारतीय सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। अनादिकाल से भारतीय सभ्यता की एक समाज व्यवस्था रही है जिसे हिन्दू समाज व्यवस्था कहते हैं, जो समाज में जाति और उसके आधार पर जन्मजात असमानता में विश्वास करती है। जाति वह प्रमुख कारक है जो जन्म से ही लोगों में अन्तर पैदा कर देती है। हिन्दू समाज चार वर्णों में विभाजित है और उसके सामाजिक अनुक्रम में ब्राह्मण सबसे ऊंची श्रेणी पर है और शूद्र सबसे निचली श्रेणी पर। क्षत्रिय और वैश्य, ब्राह्मण और शूद्रों के बीच में कही आते हैं। इसके अतिरिक्त हिन्दुओं का एक बड़ा समूह ऐसा भी है, जो जाति बहिष्कृत है और जिसे सामान्यत: अछूत या दलित वर्ग के अन्दर वर्गीकृत किया गया है। इस वर्ग को हिन्दू धर्म शास्त्रों में प्राचीन काल से नागरिक अधिकारों जैसे सम्पत्ति के अधिकार, शिक्षा के अधिकार, धार्मिक अधिकार, आदि से वंचित किया गया है। इन अधिकारों की प्राप्ति के लिए हिन्दू विधानकारों ने इन्हें जन्मजात अयोग्य माना है। जन्मजात रूप से थोपी गईं इन निर्योग्यताओं के कारण हजारों साल से इस दलित वर्ग ने मानवाधिकारों से वंचित होकर अत्यन्त कष्टमय जीवन व्यतीत किया है। मध्ययुगीन भारत में इस्लाम या विशेष रूप से सूफियों और हिन्दू सन्तों जैसे रामानन्द सन्त कबीर, चैतन्य महाप्रभु, सन्त रैदास, सन्त चोखामेला, सन्त तुकाराम, गुरुनानक आदि ने मनुष्य-मनुष्य के बीच असमानता के विरुद्ध आवाज उठाई। उन्होंने आध्यात्मिक समानता का 'वाद' स्थापित किया लेकिन उसका हिन्दू समाज व्यवस्था पर बहुत बड़ा प्रभाव नहीं पड़ा। हिन्दू समाज का परिदृश्य मध्ययुगीन भारत में दलितों के लिए वैसा ही बना रहा जैसा कि प्राचीन काल में था। ऊंची जाति के हिन्दुओं के लिए विशेषाधिकार और निचली जाति के ऊपर थोपी हुई निर्योग्यताएं हिन्दू समाज व्यवस्था की सार्वभौमिक व्यवस्थाएं थी। हिन्दू धर्म शास्त्रों ने इस तरह के असामान्य एवं अमान्य सामाजिक व्यवस्था के पक्ष में बहुत से दिव्य तर्क दिए थे। हिन्दू संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इन दलित हिन्दुओं को सवर्ण हिन्दुओं ने अपमानव के रूप में देखा और तदनुसार उनके लिए व्यवहार मापदण्ड निर्धारित किए। वे सामाजिक रूप से निर्योग्य थे, आर्थिक रूप से सर्वहारा थे, राजनैतिक एवं सामाजिक दृष्टि से गुलाम थे और सभी शैक्षिक एवं सांस्कृतिक अवसरों से वंचित किए गए थे। ब्रिटिश शासन के दौरान कानून के सम्मुख 'समानता' और व्यक्तिगत स्वतत्रता' दो ऐसे कारक थे, जिन्होंने हिन्दुओं के सामाजिक परिदृश्य को प्रभावित किया। शक्तिशाली और स्थानीय भारतीयों के प्रति निष्पक्ष नौकरशाही, समानता स्थापित करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञा थी। वे समान प्रशासनिक प्रणाली की स्थापना के प्रति भी प्रतिबद्ध थे। नागरिक अधिकारों पर बल कानून की सर्वोच्चता, जनता के वाद-विवाद और सार्वभौमिक मताधिकार पर आधारित शासन, सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए राजनैतिक समुदाय की अवधारणा का प्रसार, लोकतन्त्र, न्याय प्रणाली, में विश्वास और वैज्ञानिक अभिवृति सैद्धान्तिक तौर पर ब्रिटिश शासन की प्रमुख विशेषताएं थी। अंग्रेजों के भारत विजय के बाद एक नए प्रकार के राष्ट्र का उद्भव और विकास हुआ, एक नई अर्थव्यवस्था और नए वर्गों का प्रादुर्भाव हुआ।

अस्पृश्यता समाप्ति के धार्मिक प्रयत्नों का प्रारम्भ बुद्ध धर्म के उद्भव और विकास 500 ईसा पूर्व से माना जा सकता है, लेकिन यह एक केवल आदर्शात्मक एवं आध्यात्मिक प्रयास के रूप में रह गया और अस्पृश्यता को जड़ मूल से नष्ट करने की दिशा में कुछ स्थाई नहीं हो सका। मध्यकालीन सन्तों के वैचारिक एवं आध्यात्मिक प्रयास भी चले, जिनका प्रतिफल आध्यात्मिक संदेश और भक्ति सम्प्रदायों में दिखाई पड़ा, लेकिन दलितों की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियां ज्यों की त्यों बनी रही। ईसाई मिशनरी भी दलितों का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक गुलामी से मुक्ति नहीं दिला सके। हिन्दू समाज की जात-पात व्यवस्था को सबसे गम्भीर चुनौती अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली द्वारा प्रस्तुत की गई। सामाजिक संस्था के रूप में जाति पर आक्रमण

लोकतन्त्र के विकास में पश्चिमी अवधारणा के साथ-साथ हुआ। 'समान अधिकार' एवं 'समान अवसर पर आधारित पश्चिमी लोकतांत्रिक संस्थाओं के विकास के साथ हुआ। ब्रिटिश युगीन सभी समाज सुधारक समता, स्वतन्त्रता, भ्रातृत्व और **'सामाजिक न्याय'** की अवधारणा से प्रभावित थे। इसी काल में यह अन्तिम रूप से निश्चित किया जा सका कि जाति नामक अलोकतांत्रिक सामाजिक संस्था और राजनैतिक लोकतंत्र दोनों एक साथ चल नहीं सकते। समाज सुधारकों ने यह मत व्यक्त किया कि सभी बड़ी और छोटी जातियों को शिक्षा, न्याय और राजनीति सहित अन्य सामाजिक संस्थाओं में समान अधिकार मिलना चाहिए। यह स्पष्ट प्रमाण है कि ब्रिटिश शिक्षा ने हिन्दू समाज में सामाजिक परिवर्तन का प्रादुर्भाव किया। ब्रिटिश शासन को सुदृढ़ करने की दृष्टि से ब्रिटिश सरकार ने छोटी जाति एवं दलित हिन्दुओं के प्रति प्राथमिकता की नीति का पालन किया, जो मानवतावाद के दृष्टि से भी अनुकूल था।

डॉ. अम्बेडकर और उनका काल:- ब्रिटिश प्रशासन एवं शिक्षा ने समान रूप से हिन्दू समाज में और विशिष्ट स्थान रूप से शिक्षित दलित समाज में एक चेतना उत्पन्न की। दलितों को समान सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक अधिकारों के प्रति व्यक्तिगत रूप से और विभिन्न मंचों पर ए. जी. रानाडे, महाराजा सयाजीराव गायकवाड, साहू छत्रपति महाराज, कोल्हापुर, स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द, आर. एन. टैगोर, जे. सी. बोस, बाल गंगाधर तिलक, एस. एन. राय, लाला लाजपत राय, स्वामी श्रद्धानन्द, श्री सुब्रमण्यम अय्यर, न्यायमूर्ति सर एम. जी. रानाडे, महाराजा सयाजीराव गायकवाड़, महात्मा ज्योतिराव फुले आदि ने आवाज उठाई। न्यायमूर्ति सर एम. जी. चन्द्रावरकर की अध्यक्षता में सन् 1906 ई. में 'डिप्रेस्ड क्लाश मिशन सोसायटी ऑफ इण्डिया' की स्थापना की गई। सन् 1917 में सर चन्द्रावरकर के द्वारा सरकार के सम्मुख दलितों की मांग पेश की गई। सन् 1917 के कांग्रेस के कोलकाता अधिवेशन में भी ये मांगें पारित की गई।

ब्रिटिश शासन में भारत के परम्परागत समाज में जो कि एक ग्रामीण समाज था, शहरीकरण, औद्योगीकरण, पश्चिमीकरण की प्रक्रिया को और तेज किया गया। रेलवे, उद्योग, बड़े शहरों का विकास, सड़कें, आवागमन के साधन, जन-सम्प्रेषण के आधुनिक साधन, नए प्रकार की नौकरियों की उपलब्धता और शिक्षा कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण कारक थे जो कि भारत में तीव्र सामाजिक परिवर्तन के लिए उत्तरदायी थे। इन सामाजिक परिवर्तनों ने समाज को गहराई तक प्रभावित भी किया था। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ मे विवेक और न्याय पर आधारित समाज की मांग बढ़ती जा रही थी, जो कि परम्परागत समाज में कभी भी सुनी नहीं गई थी। बहुत से राजनैतिक, सामाजिक संगठनों जैसे सत्यशोधक समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, डिप्रेस्ड क्लास मिशन, कांग्रेस पार्टी ने जातियों पर आधारित जन्मजात असमानता का विरोध किया। जातीय संगठनों का निर्माण भी इस काल में दलितों एवं वंचित वर्गों के उत्थान के लिए किया गया।

इस प्रकार परम्परागत हिन्दू समाज को एक ऐसे उद्वेलित करने वाले जागरूक प्रभाव ने जकड़ लिया तथा बाध्य किया कि वह दलित वर्गों एवं वंचित वर्गो की समस्याओं पर विचार करें, लेकिन इस जटिल समस्या के प्रति कभी भी गहरी रुचि एवं गंभीर बौद्धिक रूप से समझने का प्रयास नहीं किया गया, जब तक कि भारतीय सामाजिक, राजनैतिक परिदृश्य पर डॉ. अम्बेडकर का अवतरण नहीं हुआ।

इस प्रकार परम्परागत हिन्दू समाज को एक ऐसे उद्वेलित करने वाले जागरूक प्रभाव ने जकड़ लिया तथा बाध्य किया कि वह दलित वर्गों एवं वंचित वर्गो की समस्याओं पर विचार करें, लेकिन इस जटिल समस्या के प्रति कभी भी गहरी रुचि एवं गंभीर बौद्धिक रूप से समझने का प्रयास नहीं किया गया, जब तक कि भारतीय सामाजिक, राजनैतिक परिदृश्य पर डा. अम्बेडकर का अवतरण नहीं हुआ।

डॉ. अम्बेडकर को प्रभावित करने वाले कारक डॉ. अम्बेडकर के जीवन काल में अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाएं हुई थी, जिन्होंने उनके व्यक्तित्व को प्रभावित किया। व्यक्तित्व एवं विचारों के प्रभाव के कारण ही उनके चिंतन को विशिष्ट स्वरूप एवं आयाम मिला जिनके कारण वे दलितों एवं भारतीय समाज में वंचित वर्ग के एक मौलिक प्रभावयुक्त नेता के रूप में जाने जाते हैं। सबसे पहला महत्त्वपूर्ण कारक जिसने डॉ. अम्बेडकर को सबसे ज्यादा प्रभावित किया वे अमानवीय परिस्थितियां थीं, जिनमें हजारों सालों से दलितों को जीने के लिए बाध्य किया गया था। वे सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक मामलों में समानता के अधिकार से वंचित किए गए थे। सार्वजनिक जीवन में प्रवेश पर रोक थी। सवर्ण हिन्दू शिक्षकों एवं छात्रों के द्वारा शैक्षिक संस्थाओं में उनके साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया गया। जाति, पेशा एवं वर्ग के नाम पर मानव व्यवहार की दोहरी नीति

ने उनको बहुत गहराई तक कष्ट पहुंचाया। अपने प्रारम्भिक बचपन काल में ही इस बर्बर एवं अमानवीय व्यवहार पर अपने में विचार करना प्रारम्भ कर दिया था, जो कि उन पर तथा दलित वर्ग के विभिन्न सदस्यों पर जाति एवं धर्म के नाम पर सवर्ण हिन्दुओं द्वारा किया जाता था। पारिवारिक परिदृश्य से परे का यह सामाजिक पर्यावरण उनके लिए बड़ा क्रूर सामाजिक एकता के सिद्धान्त से प्रभावित था। सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण के इस अन्तर ने डॉ. अम्बेडकर के जीवन पर अमिट प्रभाव डाला। स्वाभाविक रूप से अपने परिवार के इस आध्यात्मिक पर्यावरण के साथ उनकी आत्मीयता बनी और हिन्दुओं के सामाजिक पर्यावरण उनके लिए बड़ा क्रूर था लेकिन उनका पारिवारिक वातावरण अत्यन्त मानवीय था तथा कबीर पंथ के सामाजिक एकता के सिद्धान्त से प्रभावित था। सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण के इस अन्तर ने डॉ. अम्बेडकर के जीवन पर अमिट प्रभाव डाला। स्वाभाविक रूप से अपने परिवार के इस आध्यात्मिक पर्यावरण के अमानवीय व्यवहार के विरुद्ध आजीवन संघर्ष किया। उनके पिताजी एक धार्मिक तथा अनुशासित व्यक्ति थे। इसने भी उनके व्यक्तित्व को एक स्वरूप प्रदान किया। उनके पिता के कारण ही उनमें कठिन श्रम की आदत, आज्ञा पालन, निर्देशन, साहस, आत्म अभिव्यक्ति, सहनशीलता तथा दलितों एवं अन्य वंचित वर्गों के प्रति सेवा भावना का विकास हुआ।

विद्यार्थी जीवन के प्रारम्भिक काल में डॉ. अम्बेडकर को कक्षा के एक कोने में एक टाट के एक टुकड़े पर बैठने के लिए जिसको वे घर से लाते थे, बाध्य किया गया। वे दूसरों के साथ मिल नहीं सकते थे। शिक्षक उनकी अभ्यास पुस्तिकाओं को छूते नहीं थे। उन दिनों अशुद्ध होने के भय से न कोई दलितों को छूता था, न कोई कविता कहने को कहता था, न कोई कविता पढ़ाता था। विद्यालय के दिनों मे जब उनको प्यास लगती थी तो कुप्पी के द्वारा उन्हें जल पिला दिया जाता था और किसी-किसी दिन उन्हें पानी भी नहीं मिलता था।

विद्यालय के दिनों में भारी बरसात के एक दिन डा. अम्बेडकर ने बिना छाते के स्कूल जाने का निश्चय किया। उन्होंने अपने बड़े भाई को टोपी, झोला और छाता रखने को कहा। ठण्ड के बावजूद जब वह स्कूल पहुंचे तो उनके कुर्ते और धोती से पानी चू रहा था और भीगने के कारण उनको कड़ाके की ठण्ड भी लग रही थी। उनके कक्षाध्यापक पेन्डसे ने यह देखा और अपने पुत्र से अम्बेडकर को घर ले जाकर गर्म पानी से स्नान, गरम कपड़े और खाने के लिए गरम खाना देने को कहा, लेकिन उनकी यह प्रसन्नता आंसुओं में बदल गई, जब उनको कक्षा में लाया गया और अर्धनग्न शरीर के साथ अपनी श्रेणी में पुनः पृथक टाट पर बैठना पड़ा।

गर्मी के दिनों की एक घटना ने जब डॉ. अम्बेडकर और उनके भाई मैसूर रेलवे स्टेशन से गोरे गांव अपने पिता से मिलने जा रहे थे, उन पर अविस्मरणीय प्रभाव डाला। उन्होंने एक बैलगाड़ी किराए पर ली। बैलगाड़ी कुछ ही दूर गई होगी कि गाड़ीवान को पता चला कि गाड़ी में बैठे दोनों बच्चे अछूत हैं, तो उन्हें तुरन्त वहीं पर उतर जाने को कहा। निवेदन करने और किराया दूना देने की शर्त पर उन्हें फिर बैलगाड़ी से जाने की सुविधा मिली। डॉ. अम्बेडकर के बड़े भाई गाड़ी खींच रहे थे और गाड़ीवान अशुद्ध हो जाने के भय से गाड़ी के पीछे-पीछे पैदल चल रहा था। सम्पूर्ण यात्रा के दौरान वे पीने का पानी प्राप्त नहीं कर पाए क्योंकि लोगों को पता चल गया था कि अछूत हैं। विद्यालय के दिनों में अपने सहधर्मियों से मिले अपमान और अमानवीय व्यवहार ने उनके अन्दर सवर्ण हिन्दुओं और हिन्दुत्व के प्रति एक तृष्णा एवं घृणा पैदा कर दिया था। गम्भीरता से उन्होंने अछूतों के जीवन जीने की परिस्थितियों पर विचार किया और उसके समाधान के लिए सोचना शुरू किया। डॉ. अम्बेडकर के अन्दर के आदमी ने धार्मिक साहित्य द्वारा अछूतों की समस्याओं का समाधान करना चाहा। बौद्धों के आध्यात्मिक समानता के एक सिद्धान्त ने उन्हें बहुत प्रभावित किया लेकिन उन्होंने अछूतों की भौतिक समस्याओं के समाधान की दृष्टि से इस तरह के सिद्धान्तों की सीमाओं को भी पहचाना। उन्होंने अन्य सामाजिक सुधारकों के साहित्यों एंव कार्यों को भी समझने का प्रयास किया। जिनमें महात्मा बुद्ध, सन्त कबीर, महात्मा ज्योतिराव फुले, स्वामी दयानन्द सरस्वती, एम. जी. रानाडे, गांधी, महाराजा सयाजीराव गायकवाड़, छत्रपति शाहू जी महाराज इत्यादि प्रमुख थे।

वह महात्मा ज्योतिराव फुले से बहुत प्रभावित हुए, जिन्होंने इस बात पर बल दिया था कि जन्म से सभी मनुष्य समान है और भारत के लिए, विदेशी शासन से स्वतन्त्रता की तुलना में 'सामाजिक लोकतन्त्र' ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।

डॉ. अम्बेडकर जब कोलम्बिया विश्वविद्यालय पहुंचे तब उनकी उम्र मात्र 21 वर्ष थी। वहां पर वे प्रो. जान डेवी के ज्ञान-मिमांसा और प्रयोजनवादी दृष्टिकोण से बहुत प्रभावित हुए। वे विशेष दर्जे के दार्शनिक थे और यह काल मानवता के इतिहास में एक समस्या ग्रस्त काल रहा है।

प्रथम विश्व युद्ध, रूसी क्रांति, दुनियाभर में फैले साम्राज्यवादी विचार, सामंतवाद, पूंजीवादी, साम्यवाद इत्यादि ने भी डॉ. अम्बेडकर के जीवन एवं कार्यों पर अमिट प्रभाव डाला। कार्ल मार्क्स, प्रो. गोल्डेन विजन कोलम्बिया विश्वविद्यालय, बुकर टी वाशिंगटन का जीवन जो अमेरिका के नीग्रो प्रजाति के समाज सुधारक और शिक्षा शास्त्री थे, लन्दन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एवं पॉलिटकल साइंस के प्रो. एडवीन केनन और संयुक्त राज्य अमेरिका (14 एमेन्डमेण्ट) के संविधान ने डॉ. अम्बेडकर के विचारों को स्वरूप प्रदान किया। इस तरह डॉ. अम्बेडकर के क्रियाशीलता को गति मिली। बींसवीं शताब्दी के शुरूआत में पूरे विश्व में न केवल भौतिक स्तर, बल्कि आध्यात्मिक स्तर पर भी महान परिवर्तन हो रहे थे। आध्यात्मिक स्तर के संकट और विरोधाभासों ने जो मुख्यतः आदर्श एवं मूल्यों के क्षेत्र में थे, उन्हें विशेष रूप से प्रभावित किया।■

(लेखिका इग्नू की प्रो. वाइस चांसलर हैं)

उदारीकरण के युग में उच्च शिक्षा में दलितों की भागीदारी

■डॉ. सन्त सरन

किसी भी व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र के लिए शिक्षा का बड़ा महत्व है, उसकी बड़ी आवश्यकता है। इसके अभाव में न कोई व्यक्ति, समाज और न कोई राष्ट्र विकास कर सकता है। दु:ख की बात यह है कि हमारे देश में शिक्षा सामाजिक रूप से समावेशी न होने के लिए कुख्यात रही है। अनेक वर्गो में बंटे भारतीय समाज में एक वर्ग ऐसा भी है जिसे हजारों वर्षो तक शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा गया और परिणामत: यह हुआ कि उसका आर्थिक विकास न हो सका। और इन दोनों के अभाव में उसे समाज में निम्न स्थान दिया गया। इस वर्ग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि अछूत और दलित कहे जाने वाले ये लोग आर्य-पूर्व भारतीयों के वंशज थे, जिन्हें आर्योत्तर वर्ण-व्यवस्था में स्थान नहीं दिया गया।

आज 21वीं सदी में उच्च शिक्षा के समक्ष अनेक चुनौतियाँ हैं, जिनसे न निपटकर हम भावी पीढ़ी के साथ न्याय नहीं कर सकते और पीढ़ियाँ इसके लिए हमें उत्तरदायी ठहराएंगी। आज पूरी दुनिया में शिक्षा को अनिवार्य और सशक्त बनाने के लिए नित नए प्रयोगों के साथ-साथ शिक्षा की प्रणाली एवं उसके स्वरूप में परिवर्तन किए जा रहे हैं। भूमंडलीकृत विश्व में विकसित और कारपोरेट देशों के द्वारा आर्थिक नीतियों को दृष्टिगत कर शिक्षा के क्षेत्र में अनेक नए मानक स्थापित किए जा रहे हैं परंतु विश्व प्रतिस्पर्धा से अलग आज तक अथक प्रयासों के बावजूद हमारी भारतीय शिक्षा, विशेष रूप से उच्च शिक्षा वह स्थान हासिल नहीं कर पाई है जिसकी हमें आज आवश्यकता है।

भूमण्डलीकरण के वर्तमान दौर में ऐसा माना जाता है कि उच्च शिक्षा वर्ग, जाति, लिंग या क्षेत्र पर आधारित चन्द विशिष्ट लोगों तक सीमित नहीं रह गयी है। विश्वविद्यालय नए ज्ञान के उत्पादन और प्रसारण पर अपना एकाधिकार खो रहे हैं, क्योंकि अब अगणित रूपों में अनेकों प्रदाताओं ने अपनी सेवाएं देनी प्रारम्भ कर दी हैं। आज के छात्र-छात्रााएं कॉलेजों और विश्वविद्यालय के शिक्षकों से एक-तिहाई से भी कम शिक्षा प्राप्त करते हैं। वे लगभग एक-तिहाई शिक्षा अपने सहपाठी समूह से और शेष स्व-अध्ययन के द्वारा सीखते हैं।

भूमंडलीकरण एवं वैश्वीकरण की प्रक्रियाओं के असर ने दलितों को बुरी तरह प्रभावित किया है तथा वह और भी ज्यादा गरीब हो गए हैं। विभिन्न अध्ययनों ने गरीबी के फैलाव, बीमारी एवं मृत्यु और ग्रामीण बेरोजगारी के बढ़ते स्तर और मजदूरी में शोषण/कमी की ओर इशारा किया है। इन्होंने दलितों में वास्तविक मजदूरी उपभोक्ता साझीदारी और उपभोक्ता के प्रति व्यक्ति मासिक व्यय के स्तर में भी गिरावट का दावा किया है।

भूमंडलीकरण एवं वैश्वीकरण की प्रक्रियाओं के असर ने दलितों को बुरी तरह प्रभावित किया है तथा वह और भी ज्यादा गरीब हो गए हैं। विभिन्न अध्ययनों ने गरीबी के फैलाव, बीमारी एवं मृत्यु और ग्रामीण बेरोजगारी के बढ़ते स्तर और मजदूरी में शोषण/कमी की ओर इशारा किया है। इन्होंने दलितों में वास्तविक मजदूरी उपभोक्ता साझीदारी और उपभोक्ता के प्रति व्यक्ति मासिक व्यय के स्तर में भी गिरावट का दावा किया है (टेलटुम्बके, 2000)।

अनेक विद्वानों का मानना है कि भारत में भूमण्डलीकरण एवं वैश्वीकरण से प्रभावित नीतियों ने दलितों की प्रस्थिति पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। उनका मानना है कि उदारीकरण की नीतियों ने आर्थिक विषमता में वृद्धि की है। देव व रवि (2007:509) ने अपने अध्ययन के निष्कर्ष में कहा है कि उदारीकरण के पश्चात् भारत में आर्थिक असमानता में स्पष्ट रूप से वृद्धि हुई है। इसी तरह के निष्कर्ष हिमांशु (2007), दत्त

एवं रैवेलियन (2010) ने दिये हैं।

उच्च शिक्षा की माँग में अत्यधिक वृद्धि के कारण आवश्यक निवेश और राजस्व के मध्य अन्तर में लगातार वृद्धि होने के कारण भी उच्च शिक्षा में निजी एवं वैश्विक संस्थाओं की भागीदारी अनिवार्य हो गयी है। ये वैश्विक संस्थान मात्रा, शिक्षाशास्त्र, निष्पादन और मूल्यांकन व्यवस्था के विकास में निवेश कर रहे हैं, जो कम समय में जीवन-वृत्ति आधारित समर्थता तैयार करते हैं। ये नये शिक्षा प्रदाता अपने छात्रों को 'नागरिक' नहीं, बल्कि व्यापारिक दृष्टिकोण से 'भूमण्डलीय उपभोक्ता' समझते हैं। इसीलिए इन्हें 'पवित्र संस्थान' या 'शिक्षा मन्दिर' के स्थान पर 'ज्ञान का कारखाना' या 'डिप्लोमा-मिल' समझा जाने लगा है। अब ऐसा लगने लगा है कि उच्च शिक्षा संस्थानों का मूल उद्देश्य छात्र-छात्राओं को मात्र स्थिर उत्पादन और लगातार खपत के लिए शिक्षित करना ही रह गया है, न कि उनका चारित्रिक, सामाजिक न्याय और नेतृत्व के लिए।

भारतीय समाज में व्याप्त जातिगत संस्करण ने शैक्षिक अवसरों की उपलब्धता को अपने ही ढंग से प्रभावित किया है। यद्यपि ब्रिटिश काल में अंग्रेजों द्वारा शुरू की गई शिक्षा से विभिन्न नये मूल्य, जैसे- संवैधानिक समानता, विचारधारा की स्वतंत्रता आदि विकसित हुए। इन सब मूल्यों ने दलितों हेतु शिक्षा व उनकी सामाजिक गतिशीलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। परन्तु उनके 'अधोमुखी निस्पंदन के सिद्धान्त' ने अभिजात वर्ग को अंग्रेजी माध्यम से शिक्षित करने पर जोर दिया तथा जनता की शिक्षा की उपेक्षा की। परिणामतः गरीब व निचला वर्ग शिक्षा से वंचित रहा। और इस प्रकार शिक्षा को उच्च जातियों का विशेषाधिकार ठहराने वाली परंपरागत जाति, प्रथा और अभिजात वर्ग को शिक्षा देने की ब्रिटिश नीति ने एक दूसरे को बल पहुँचाते हुए भारत में एक अत्यधिक असमान शिक्षा व्यवस्था को जन्म दिया। और इसके परिणाम स्वरूप 'ऐसी अनेक अनुसूचित जातियाँ हैं जिनमें साक्षरता दर शून्य हैं' जैसे कथनों के पीछे छुपे सामाजिक संबंधों व असमान अवसरों की पोल खुलती है।

जातिगत भेदभाव की रोकथाम के लिये अनेक कानून बना दिये जाने के बावजूद जमीनी सच्चाई यह है कि स्कूल से ही जातिगत अलगाव शुरू हो जाता है। दलितों के बच्चों (छात्र-छात्राओं) का बैठना, खाना-पीना अलग होता है। सरकारी स्कूलों में भी जातीय भेदभाव के रूप में दलित जाति के बच्चों को मारना, गाली देना, खराब भाषा का प्रयोग करना, सभी सामने आता है। वर्तमान समय में स्कूलों में मध्यान्ह भोजन में अनेक ऐसे प्रकरण सामने आते रहे हैं जिसमें दलित महिला द्वारा बनाया गया खाना स्कूल के बच्चों ने नहीं खाया और उसे फेंक दिया (कुमार, 2012)।

अनेक शोध अध्ययनों के निष्कर्ष बताते हैं कि अधिकांश दलित विद्यार्थियों के पास शिक्षा-अध्ययन के लिए अनुकूल वातावरण का अभाव रहता है इस कारण यह अध्ययन में पिछड़ जाते हैं। (सिंह, टी.पी. व अन्य, 1974) राज्य द्वारा इन जातियों को विशेष शैक्षिक सुविधाएं दिये जाने पर भी इनके तथा अन्य समाज की जातियों के बीच शैक्षिक स्तर में पर्याप्त असमानता है और प्रगति की गति भी धीमी है। (डिसूजा, 1980) राष्ट्रीय स्तर पर दलितों की शैक्षिक प्रगति और समस्याओं पर किए गये सर्वेक्षणों से पता चला है कि कुछ विकास तो जरूर हुआ है, परन्तु शैक्षिक विकास के सम्बन्ध में अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है।

मुंगेकर, भालचन्द्र ने ''एजुकेशन : द ओनली की टु दलित प्रोग्रेस'' विषय पर शोधपत्र को दलित कॉन्फ्रेन्स में प्रस्तुत किया। आपने बताया कि दलितों के विकास में शिक्षा एक चाबी की तरह भूमिका का निर्वाह करती है। आपने अम्बेडकर की तरह शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का हथियार बताया और साथ ही साथ दलित छात्र-छात्राओं को, दलित समुदाय को, अन्तर्राष्ट्रीय दलित संगठन आदि को दलित समाज में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने के लिए सुझाव भी दिए।

गाखर, दीपाली ने अपने शोधपत्र में शिक्षा की भूमिका, भारतवर्ष में दलित शिक्षा का विकास ऐतिहासिक काल से लेकर वर्तमान समय तक कितना हुआ है? कैसी शिक्षा स्थिति है? का वर्णन प्रस्तुत किया और साथ ही साथ उच्च शिक्षा संस्थानों जे.एन.यू., आई.आई.टी. मद्रास, बॉम्बे, देहली, गोहाटी, कानपुर तथा गोरखपुर के दलितों के सन्दर्भ में योगदान का विश्लेषण आंकड़ों के आधार पर किया और निष्कर्ष निकाला कि समाज की संस्कृति दलित विरोधी संस्कृति (Counter Culture) रही है।

मई 1997 में ''भारत में सरकारी अनुदान'' पर जारी डिस्कशन पेपर में बताया कि उच्च शिक्षा को दिये जाने वाले अनुदान का एक खासा बड़ा हिस्सा मध्यम व उच्च आय-वर्ग के द्वारा हड़प लिया जाता है क्योंकि इस क्षेत्र में सीटों की कमी है। इस कारण परीक्षा, साक्षात्कार, ग्रुपडिस्कशन आदि के रूप में गुणवत्ता आधारित चयन और छटनी होती है जिससे समाज का गरीब तबका वर्ग उच्च आय समूहों का मुकाबला नही कर पाता है।

आन्द्रे (1991) का कहना है कि भारतीय पारम्परिक समाज जो कि मूलतः ब्राह्मणीय समाज-संरचना व्यवस्था पर आधारित है, की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसकी सोपानबद्ध, जटिल संगठनात्मक जाति व्यवस्था है। अनेक समाज विचारकों, अध्येताओं ने इसके उद्भव, विकास और प्रसार को समझने-समझाने का प्रयास किया है। जाति पर आधारित अस्मिताएं समकालीन

भारतीय समाजिकी में एक प्रबल शक्ति के रूप में उभर कर आई है। इसमें व्याप्त असमानताओं तथा शोषण के निराकरण की मांगों ने जाति के सारतत्व तथा गतिकी के प्रश्न पर 'एक चिंतन' प्रक्रिया को जन्म दिया है। भारत के लोग जातीय मानसिकता से बुरी तरह ग्रस्त हैं।

गुरु, गोपाल (1997) ने बताया कि दलित वर्ग की समस्या को सामाजिक, आर्थिक व शैक्षिक मानते हुए इसका समाधान अम्बेडकर ने धर्म परिवर्तन में खोजा। उन्हीं के प्रयासों का परिणाम था कि दलितों को व्यवस्थापिकाओं तथा सरकारी नौकरियों की सीटों में आरक्षण मिला और छात्रों को शैक्षिक सहायता के रूप में संरक्षात्मक भेदभाव के अन्तर्गत कई प्रकार की सुविधाएँ प्रदान की गई।

झा एवं झींगरन (2002) ने दलित बच्चों की विद्यालयी शिक्षा पर किए गए अपने अध्ययन में यह माना कि 'शिक्षा' एक लम्बी प्रक्रिया है और गरीब परिवारों के लिए 'लम्बी अवधि' तक बच्चों को स्कूल भेजना संभव नहीं होता, सामाजिक और आर्थिक रूप से विपन्न दलित परिवारों के लिए यह और भी मुश्किल है।

निजी शिक्षण संस्थानों में 95 प्रतिशत कालेज सवर्ण जाति के लोगों द्वारा संचालित हो रहे हैं, जहाँ पर सरकारी ग्राण्ट व अनुसूचित जाति की छात्रवृत्ति को हड़पने के लिए इन लोगों के फर्जी दाखिले दिखाये जा रहे हैं। सभी स्तरों पर निजी शैक्षिक संस्थानों का फैलाव गरीबों को मूलभूत शिक्षा को गंभीरता से प्रदान करने एवं उसकी गुणवत्ता और संख्या की देखरेख की ओर राज्य की बढ़ती अरुचि की ओर संकेत करता है। दूबे और माथुर (1972) इस बात को प्रमुख रूप से इंगित करते हैं कि अनुसूचित जातियों को मिलने वाली सरकारी सुविधाएं या उनका वितरण प्रायः असमान ही है।

देश के चहुँमुखी एवं नियोजित विकास में उच्च शिक्षा का अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट स्थान है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उच्च शिक्षा का प्रसार तीव्र गति से हुआ है, जिसके फलस्वरूप विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। लोक कल्याण के निमित्त प्राथमिकता के आधार पर अविकसित तथा पिछड़े

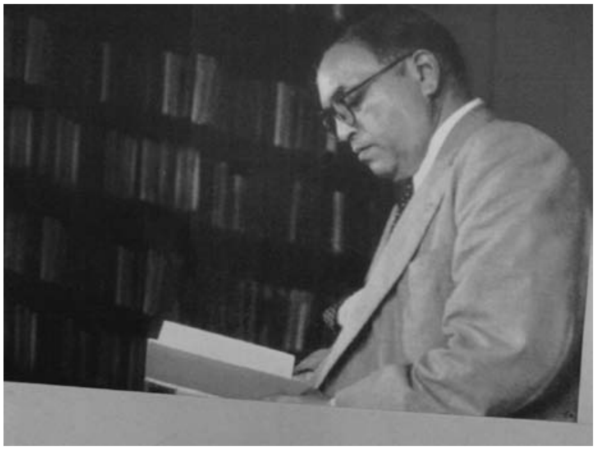

क्षेत्रों में विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों की स्थापना की गयी है एवं की जानी है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में शासन विशेष सक्रियता के साथ सुयोग्य प्राध्यापकों की नियुक्ति, भवन निर्माण/विस्तार, समृद्ध पुस्तकालय, सुसज्जित प्रयोगशाला तथा महाविद्यालयों के कम्प्यूटरीकरण जैसे कार्यो पर विशेष ध्यान दे रहा है। साथ ही प्राथमिकता के आधार पर असेवित क्षेत्रों में महाविद्यालयों की स्थापना किये जाने के सिद्धान्त को क्रियान्वित किया जा रहा है, परन्तु साथ ही उच्च शिक्षा में निजीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है। उच्च शिक्षा में गुणवत्ता बनाये रखने हेतु इन निजी महाविद्यालयों पर कोई सरकारी नियन्त्रण नहीं है। इन निजी कॉलेजों के प्रबन्ध-तंत्र शिक्षा सेवा बोर्ड द्वारा चयनित शिक्षकों को ज्वाइन नहीं करने देते हैं। पूरा शिक्षा विभाग तदर्थ शिक्षकों पर चल रहा है, जो व्यक्ति अयोग्यता के कारण क्लर्क या चपरासी पद तक नहीं पा सकता, उसे बिना किसी योग्यता परीक्षा व उचित चयन प्रक्रिया के बिना इन कॉलेजों में छात्रों को पढ़ाने के लिए रख लिया जाता है, जो बाद में स्थाई पद भी ग्रहण कर लेते है।

शिक्षा व्यक्ति के व्यक्त्वि का न केवल विकास करता है बल्कि एक विशिष्ट जीवन पद्धति को जीने के लिए भी तैयार करती है। यह प्रत्येक सामाजिक स्तर के अनुरूप 'सामाजिक व्यक्ति' की माँग को बनाए रखने की कोशिश करती है। इस प्रकार का 'विभेदीय कार्य', 'स्थिर तंत्र' वाले स्तरीकृत समाज में ज्यादा सुस्पष्ट देखे जा सकता है जबकि 'चयनात्मक-कार्य' अपेक्षाकृत खुले समाज में ज्यादा महत्व पाते हैं। कई अध्ययन इस बात को प्रमाणित करते हैं कि औपचारिक शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता, सामाजिक-आर्थिक स्थिति परिवर्तन, व्यावसायिक गतिशीलता आदि में महत्वपूर्ण रूप से भूमिका निभाती है। एक तरु यह व्यावसायिक गतिशीलता से प्रत्यक्ष रूप से एवम् आर्थिक स्तर के अग्रगामी सुधारों से संबंधित है वहीं दूसरी तरु यह सामाजिक स्वीकार्यता, हैसियत, प्रतिष्ठा आदि के लिए महत्वपूर्ण 'घटक' का निर्माण करती है।

जनभागीदारी समिति का पूर्ण राजनीतिकरण होने से शिक्षा की गुणवत्ता पर कोई ध्यान नहीं देता आमतौर पर बातें धनराशि अधोसंरचना आदि पर जाकर अटक जाती हैं। न्यायालय के फैसलों से संस्थाओं को अपनी फीस तय करने का अधिकार प्राप्त होने के साथ-साथ शिक्षा को व्यवसाय बनाने की भी छूट मिल गई। निजी क्षेत्र के प्रवेश में कोई आपत्ति इसमें नहीं है बशर्ते शिक्षा को एक व्यवसाय न समझा जाए और उसकी गुणवत्ता पर इसके प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। ■

(लेखक लखनऊ विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हैं)

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय (भारत सरकार की योजनाएं)

अनुसंधान एवं प्रकाशन के लिए सहायता अनुदान

उद्देश्य

इस योजना का उद्देश्य विकलांगजन विकास, समाज रक्षा तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के क्षेत्र में सामाजिक आर्थिक तथा शैक्षिक विकास कार्यक्रमों पर उद्देश्यपूर्ण अध्ययन तथा सेमिनार आयोजित करने के लिए प्रतिष्ठित सामाजिक विज्ञान अनुसंधान संस्थानों तथा विश्वविद्यालयों को शामिल करना है।

मुख्य विशेषताएं

i. पात्र अनुसंधान संगठन, जो इस योजना के अंतर्गत अनुसंधान अध्ययन करने के लिए समर्थ तथा इच्छुक हैं, अपने प्रस्ताव दिशा निर्देशों के अनुसार हार्ड कापी के साथ-साथ सॉफ्ट कापी दोनों में रजिस्टर्ड पोस्ट से अनुसंधान एवं मूल्यांकन प्रभाग, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, वेस्ट ब्लॉक-8, विंग-2, आर. के. पुरम, नई दिल्ली को भेज सकते हैं। विश्वविद्यालय अपने अनुसंधान प्रस्ताव रजिस्ट्रार के माध्यम से भेज सकते हैं। अन्य संस्थाएं/संगठन अपने अनुसंधान प्रस्ताव अपने मुख्य पदाधिकारी के माध्यम से भेज सकते हैं।

ii. अनुसंधान/मूल्यांकन अध्ययन करने के लिए पात्रता मानदंड इस प्रकार हैं-

iii. परियोजना निदेशक की न्यूनतम शैक्षिक योग्यता पी.एच.डी. होनी चाहिए तथा संगठन को न्यूनतम 5 वर्ष का अनुभव होना चाहिए।

iv. अध्ययन करने वाले संस्थान प्रतिष्ठित होना चाहिए तथा इस अध्ययन को संचालित करने में संपूर्ण होना चाहिए।

v. अनुसंधान कार्य पद्धति स्पष्ट और निश्चित होनी चाहिए तथा वह उभरती हुई प्रवृत्तियों का अध्ययन होना चाहिए।

vi. अध्ययन संचालित करने के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत करने वाले सभी संगठनों का मूल्यांकन विगत में मंत्रालय के लिए किए गए उनके काम की गुणवत्ता के आधार पर किया जाना चाहिए।

मूल्यांकन के लिए कार्यक्रम/योजनाओं के चयन का तंत्र

मंत्रालय प्रतिवर्ष अनुसंधान/मूल्यांकन अध्ययन के वरीयता वाले क्षेत्रों की पहचान करती है जिन्हें मंत्रालय की वेबसाईट http://socialjustice.nic.in पर अपलोड किया जाता है। प्रतिष्ठित अनुसंधान संस्थाओं और विश्वविद्यालय से विनिर्दिष्ट वरीयता क्षेत्रों पर प्राप्त अनुसंधान प्रस्तावों पर अनुसंधान सलाहकार समिति (आरएसी) द्वारा विचार किया जाता है। आरएसी इस मंत्रालय का शीर्षस्थ निकाय है। वह मंत्रालय को अनुसंधान/मूल्यांकन प्रस्तावों के चयन के संबंध में सलाह देता है। इस समिति में विशेष सचिव/अपर सचिव अध्यक्ष के रूप में होते हैं, समाज विज्ञान जैसे समस्त क्षेत्रों से गैर-सरकारी सदस्य, अनुसंधानकर्ता/प्रख्यात विद्वान तथा इस मंत्रालय के ब्यूरो प्रमुख एवं समेकित वित्त प्रभाग और योजना आयोग के प्रतिनिधि इसके सदस्य हैं।

वित्तीय सहायता का पैटर्न

मंत्रालय व्यय की निम्नलिखित अनुमोदित मदों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है:-

i. अनुसंधान परियोजना स्टाफ के लिए समेकित वेतन (परियोजना निदेशक को अधिकतम 5% लागत के मानदेय दिया जा सकता है)।

ii. परियोजना कार्य के संबंध में देश भर में यात्रा करने के लिए यात्रा भत्ता।

iii. कम्प्यूटर समय के उपयोग सहित डाटा प्रोसेसिंग, यदि आवश्यक हो तो।

iv. स्टेशनरी तथा प्रश्नावली, अनुसूची आदि की प्रिटिंग।

v. आवश्यक उपस्कर।

vi. अनुसंधान कार्य के लिए आवश्यक संदर्भ सामग्री, पुस्तक/पुस्तिकाओं आदि को सीमित संख्या।

vii. आकस्मिक खर्च - अतिरिक्त प्रभार, कुल लागत का 5%।

अनुसंधान तथा मूल्यांकन अध्ययन के लिए वित्तीय सहायता अध्ययन की कवरेज तथा प्रतिदर्श पर निर्भर करेगी। यह धनराशि दो किस्तों में वितरित की जाएगी। प्रथम किस्त परियोजना लागत के 50% तक होगी। 50% की दूसरी तथा अंतिम किस्त अंतिम रिपोर्ट तथा जीएफआर 19 प्रपत्र में उपयोगिता प्रमाण पत्र सहित लेखों के लेखा परीक्षित विवरण प्रस्तुत करने पर जारी की जाएगी।

सांविधिक शर्तें

....संस्था को लिखित में यह पुष्टि करनी होगी कि सहायता अनुदान नियमावली में समाविष्ट ....। अनुदान प्राप्तकर्ता संस्था को भारत के राष्ट्रपति के पक्ष में इस प्रभाव का एक बांड भी ... सहायता अनुदान के साथ संलग्न निबंधन एवं शर्ते उसके लिए स्वीकार्य हैं। सहायता अनुदान नियमावली में समाविष्ट शर्तो को स्वीकार न करने के मामले में इसे संस्वीकृत कुल सहायता अनुदान जुर्माना ब्याज के साथ सरकार को वापस लौटाना होगा।

कार्यशाला/सेमिनार हेतु अनुदान

सेमिनार, कार्यशाला तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने के लिए वित्तीय सहायता का निर्धारण मामला दर मामला आधार पर किया जाएगा। संबंधित अनुमोदित संस्थान को सहायता अनुदान दो किस्तों में जारी किया जाएगा। अनुमोदित अनुदान के 75% की पहली किस्त कार्यशाला/सेमिनार/सम्मेलन आयोजित करने से पहले प्रदान की जाएगी तथा अनुदान का शेष 25% दूसरी किस्त के रूप में कार्यशाला/सेमिनार/सम्मेलन आयोजित करने के 30 दिन के भीतर दस्तावेजों तथा सिफारिशों और लेखों के लेखा परीक्षित विवरण तथा उपयोगिता प्रमाण पत्र के साथ कार्यशाला/सेमिनार/सम्मेलन की विस्तृत रिपोर्ट की तीन प्रतियां प्राप्त होने के पश्चात् जारी किया जाएगा। राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार/सम्मेलनों पर अधिकतम 1 लाख रूपए तथा 2 लाख रूपए केवल तक के आंशिक वित्त पोषण के लिए मंत्रालय द्वारा विचार किया जाएगा। अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार/सम्मेलन आयोजित करने वाले संस्थान को सुरक्षा तथा राजनीतिक दृष्टि से गृह मंत्रालय तथा विदेश मंत्रालय से अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करना होगा। विश्वविद्यालय कार्यशाला/सेमिनार/सम्मेलन प्रस्ताव रजिस्ट्रार के माध्यम से प्रस्तुत कर सकते हैं। अन्य संस्थान/ गैर-सरकारी संगठन राज्य सरकार के संबंधित विभाग के माध्यम से प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकते हैं।

(विशेष जानकारी मंत्रालय के वेबसाइट www.socialjustice.nic.in पर)

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में दलित चेतना
(विशेष संदर्भ-''सलाम'' कहानी संग्रह)

■ माली विठोबा

ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित साहित्य के मूर्धन्य विद्वान थे। हिंदी में उन्हें कहानीकार, कवि तथा दलित लेखक के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हुई है। यह उनकी अनवरत साधना और निरंतर तप का साहित्यिक फल है। उनके व्यक्तित्व और अभिव्यक्ति से उनका कृतित्व अलग नहीं किया जा सकता। ओमप्रकाश वाल्मीकि कर्मशील, संवेदनशील, भावुक, स्वाभिमानी, दयावान, आस्थावान, प्रेरणादायी व्यक्तित्व के धनी थे। उन्होंने दलित साहित्य के माध्यम से समाज में समानता लाने का प्रयास किया तथा इस प्रयास में कई हद तक सफल भी हुए। आपने हिंदी साहित्य में अभिव्यक्ति द्वारा अनेक विधाओं को समृद्ध करने का भरसक प्रयास किया है। इन विधाओं के माध्यम से वाल्मीकि जी साहित्य को समाज के सामने रखते हैं।

दलित जीवन की पीड़ाएं असहनीय और अनुभव-दंग्ध है। ऐसे अनुभव जो साहित्यिक अभिव्यक्तियों में स्थान नहीं पा सके। एक ऐसी समाज के नक्शे में हमने सांसे ली है, जो बेहद क्रूर और अमानवीय है। दलितों के प्रति असंवेदनशील भी है। आपने उसे अपनी कृतियों में व्यक्त किया है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कृतियां

सदियों का संताप (कविता संग्रह), बस! बहुत हो चुका (कविता संग्रह), जूठन (आत्मकथा), अनेक कथा संकलनों एवं कविता संग्रह में रचनाएं संकलित, 'प्रज्ञा-साहित्य' के दलित-साहित्य विशेषांक का अतिथि, सम्पादन, पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानियां और कविताएं प्रकाशित,

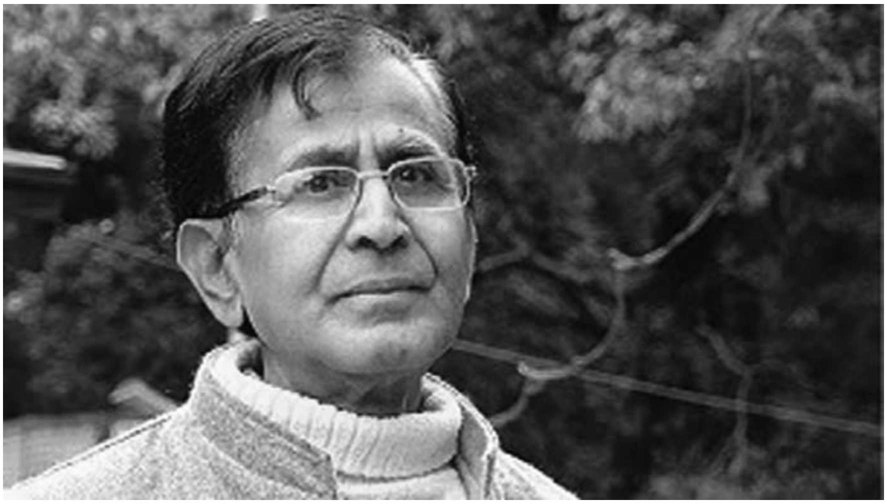

विभिन्न भाषाओं में कविताएं और कहानियां अनुदित हुई हैं।

सलाम कहानी व दलित चेतना:

बहुआयामी कहानियों का कथ्य ओमप्रकाश वाल्मीकि है। उनकी कहानी के कथ्य को सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक और राजनैतिक आदि में विभाजित किया जाता है। ''सपना'' कहानी में शिरोड़कर जी सपने को साकार करने की इच्छा है। उसमें वह सफल भी होते हैं और इसी कहानी (सलाम) में सांप्रदायिकता को भी दिखाया गया है और इस कहानी में दलितों को समाज के वरिष्ठ लोग किस नजर से देखते है, वह भी दिखाया गया है। ''बैल की खाल'' कहानी में सांप्रदायिकता के साथ-साथ दलितों की रोजी-रोटी उनका गांवों में स्थान कैसे है, उसको हम देख सकते हैं। जैसे गांव में बैल मर जाता है तो उसको गांव से बाहर करने के लिए दलित ही चाहिए।

इस कहानी में दलित पत्र काले और भूरे है। इनका गांव में कैसे अपमान होता है वह दलित चेतना के रूप में दिखाया गया है। ''भय'' कहानी में एक दलित परिवार समाज में कैसे रहना है उसको दिखाया गया है। इसमें मुख्य पात्र दिनेश किशोर और रामप्रसाद तिवारी है। रामप्रसाद तिवारी को पता नहीं है कि दिनेश और किशोर दलित है और वे भी रामप्रसाद तिवारी को डर के ही अपना जीवन बिताते हैं। रामप्रसाद तिवारी ने दलितों के बारे में बहुत बार गाली-गलौज की भाषा प्रयोग की है। दिनेश ने ऐसे क्षणों में चुप्पी साध ली थी। 'गोहत्या' कहानी में प्रमुख पात्र पंडित रामसरन, सुक्का और गांव के मुखिया है। पंडित रामसरन को सुक्का के पत्नी के ऊपर मन खिंचता है। तब वह सुक्का को बोलता है ''सुक्का तेरी ए लुगाई को आये दो महीने हो गये और वह अभी तक हवेली में नहीं आयी। तेरी लुगाई ने कुछ जादू कर दिया है कल उसे हवेली भेज देना।'' गांव के मुखिया जी ने आदेश दिया। इस आदेश के साथ मुखिया पीढ़ी दर पीढ़ी से चली आ रही पद्धति को चलाना

चाहता है। सुक्का को यह बात पंसद नहीं है। तब सुक्का ने वह हवेली में नहीं आयेगी कहकर हवेली से बाहर हो जाता है। सुक्का के ऊपर बिना कारण से गोहत्या का पाप कार्य जोड़ दिया जाता है और सुक्का निरापराधी रहते हुए भी उसको अपराधी समझ कर उसके हाथ में जलते हुए फाल दे कर शिक्षा दी जाती है। यहां दलितों को गांव के मुखिया लोग बिना कारण से कैसे सजा देते हैं दिखाया गया है। ''ग्रहण'' कहानी में प्रमुख पात्र चौधरी के परिवार, रमेसर और विरम की बहू हैं। इसमें एक चौधरी घर पर ही औरत दलित रमेसर की ओर कैसे आकर्षित होती है और उसकी मनोकामनाओं को कैसे वह पूरा करना चाहती है, उसका पति रहते हुए भी वह रमेसर को क्यों चाहती है यह बहुत की मार्मिक रूप से दिखाया गया है।

''बिरम की बहू'' कहानी में ठीक ग्रहण कहानी के विपरीत दिखाया गया है कि कैसे रमेसर का मन उस बिरम की बहू की ओर खींचता है। 'बिरम की बहू' रमेसर के मिलन से रमेसर को एक कट्टा गेहूं तो मिला था। जिसे पेट की आग से थोड़ी सी राहत अवश्य मिली थी, परन्तु मन की भूख मन गयी थी। इस कहानी में यह दिखाया गया है कि पति-पत्नी के बीच के संबंध कैसे टूटे रहते हैं, बड़े घर की बहू दलित रमेसर के ऊपर कैसे आकर्षित होती है।

''सपना'' कहानी में ब्राह्मण नटराज और रुषि के बीच में ही झगड़ा शुरू हो जाता है। गौतम को लेकर मंदिर में मूर्ति प्रतिष्ठापन है और गौतम औरत और बच्चे को लेकर आगे रहते है। नटराजन को वह पसंद नहीं हैं क्योंकि गौतम दलित है। नटराजन दलितों को कुचलना चाहता है। पूरे गांव में दंगा फैल जाता है। इसमें यह प्रस्तुत किया गया है कि दलितों को पंडित ब्राह्मण लोग किस नजर से देखते है, उनको कौन सी जगह पर रखना चाहता है।

''सलाम'' कहानी में वर्णित पात्र हरीश और कमल है। उनका संबंध तो बहुत ही अच्छा है, लेकिन उन दोनों के परिवार में जो दलितों के बारे में सोच-विचार है, वे लोग दलितों को पूरे नीच समझते हैं। ऐसे ही हमारे समाज में दलितों के साथ भी हो रहा है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि वाल्मीकि जी ने अपनी कहानियों के कथ्य में गरीबी, शोषण, दलित एवं शोषण, दलित एवं शोषण मुक्ति के लिए संघर्ष रत व्यक्तियों का चित्रण किया है। निम्न वर्ग की स्थिति, आकांक्षा, सामाजिक विषमताएं, अंधविश्वास, मानवीय संवेदनाएं मनुष्य-मनुष्य के बीच फैली हुई जातीय भावना को प्रस्तुत किया है। इन कहानियों में चित्रित दलित चेतना को उजागर कर दलित समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास हुआ है। हिंदू समाज व्यवस्था के तहत सदियों से होते आ रहे शोषण को और दलित समाज के उत्पीड़न को उस दलित समाज से रुबरु कराने का एक सफल प्रयास हुआ है। ■

(लेखक मौलाना आजाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद में शोधार्थी हैं)

आज 21वीं सदी में उच्च शिक्षा के समक्ष अनेक चुनौतियाँ हैं, जिनसे न निपटकर हम भावी पीढ़ी के साथ न्याय नहीं कर सकते और पीढ़ियाँ इसके लिए हमें उत्तरदायी ठहराएंगी। आज पूरी दुनिया में शिक्षा को अनिवार्य और सशक्त बनाने के लिए नित नए प्रयोगों के साथ-साथ शिक्षा की प्रणाली एवं उसके स्वरूप में परिवर्तन किए जा रहे हैं।

अनुभव बताता है कि अधिकार कानून से नहीं बल्कि समाज के सामाजिक और नैतिक विवेक द्वारा संरक्षित होते हैं। अगर सामाजिक विवेक कानून द्वारा प्रस्तावित अधिकारों को मान्यता देता है तो अधिकार सुरक्षित और संरक्षित रहेंगे।

-डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

As experience proves, rights are protected not by law but by social and moral conscience of the society. If social conscience is such that it is prepared to recognize the rights which law proposes to enact, rights will be safe and secure.

–Dr. B.R. Ambedkar

संगीत-कला पारखी डॉ. अम्बेडकर

■ शान्ति स्वरूप बौद्ध

आम आदमी की दृष्टि में बाबासाहेब की छवि एक सामाजिक क्रांतिकारी, संविधान निर्माता और बौद्ध धर्म पुनरुद्धारक की है। वास्तव में तो वे अनेक विधाओं में पारंगत थे। उनके विषय में लिखते समय उन्हें लिखा जाता है–शोषित-शूद्र कुलोत्पन्न, दरिद्रता की दरेर में पले, अस्पृश्यता के अभिशाप के भुक्त-भोगी, दलितों के कर्णधार, दीन-दुखियों के दर्दनाक दुखों से दृवीभूत होने वाले, आदिवासियों के आशा-प्रदीप एवं अधिवक्ता, नारी जाति के मुक्तिदाता, अप्रतिम इतिहासकार, विलक्षण इण्डोलॉजिस्ट, भारत के महान मनीषी, गंभीर ग्रंथकार, अप्रतिहत समाज-सुधारक, राजनीतिक तथा विधि-विधान के प्रकांड-पंडित, महान शब्दकोशाकार, महान विचारक एवं तत्व-चिंतक, घनघोर बुद्धिवादी, महान मानवतावादी, भारतीय संविधान के प्रधान शिल्पी, हिन्दू कोड बिल के प्रणेता, बौद्ध धम्म पुनरावर्त्तक तथा विश्व-बंधुत्व के उपदेशक बोधिसत्व बाबासाहेब डॉ. बी.आर. अम्बेडकर में आक्रोश तथा आर्द्रता, विद्रोह तथा विराम, क्रांति तथा शांति, सहयोग तथा असहयोग, कठोरता तथा कोमलता, संकीर्णता तथा व्यापकता, जातीयता तथा राष्ट्रीयता, देश प्रेम तथा विश्व बंधुत्व का सुंदर समीकरण तथा समन्वयकारी चित्र दृष्टिगोचर होता है।

बाबासाहेब ने अपनी उक्त पहचान बनाने के लिए जीवन भर जी तोड़ परिश्रम किया, संघर्ष की राह कभी छोड़ी नहीं और अपने समाज के उत्थान हेतु जीवन भर अपमान सहते हुए खून के घूंट पीते रहे।

मगर बाबासाहेब के जीवन का एक प्रबल पक्ष और भी है, जिसकी प्रायः सभी साहित्यकारों ने उपेक्षा की है। वह है उनका कला के प्रति समर्पण का पक्ष।

बाबासाहेब के निकट रहे नानक चंद रत्तू जी ने अपनी पुस्तक 'डॉ. अम्बेडकर के कुछ अनछुए प्रसंग' (सम्यक प्रकाशन) में 'वायलिन और संगीत' शीर्षक के तहत दर्ज किया है कि–

कला, पेंटिंग और चित्रकारी की तरह डॉ. अम्बेडकर को वायलिन1 जैसे वाद्य यंत्र भी अच्छे लगते थे। उन्होंने एक वायलिन खरीद लिया था और उसे सीखने के लिए शिक्षक भी रख लिया था। यह शिक्षक पढ़ाई के शुरु और बीच में डॉ. अम्बेडकर के विचित्र सवालों से हालांकि चकरा जाता था, फिर भी वह उनकी तीव्र बुद्धि और तर्क की प्रशंसा ही करता था। इस शिक्षक की सेवाएं कुछ दिनों बाद ही समाप्त कर दी गई थीं। उसके बाद जब कभी उनका मूड होता था और उनके पास फुर्सत होती थी, वह वायलिन का अभ्यास किया करते थे।

डॉ. अम्बेडकर के उथल-पुथल वाले जीवन की अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाएं, जिनको गिनाया जा सकता है, किंतु मैं यहां संबंधित विषय से ही जुड़ी केवल दो महत्त्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख करूंगा।

'पहली घटना रविवार 13 नवम्बर, 1955 की है–जैसा कि बाबासाहेब ने पिछली रात मेरे घर जाने से पहले मुझसे (रत्तू जी) कहा था, मैं 26, अलीपुर रोड वाले उनके बंगले पर समय से पहुंच गया। उस समय सुबह के लगभग 8.30 बज रहे थे। मैंने जल्दी ही उन्हें मुख्य हॉल में जा पकड़ा, जहां उनका विशाल पुस्तकालय

और उनकी बड़ी-सी लिखने की मेज थी। मैंने झांककर देखा तो वह अपने आजीवन साथियों यानी पुस्तकों की अलमारियों की कतारों के बीच इधर से उधर टहलते हुए वायलिन बजा रहे थे। अद्‌भुत दृश्य था वह। वह वायलिन के तारों को छेड़ रहे थे और उनसे मधुर तान निकल रही थी। वह काफी देर तक बिना रुके टहल-टहल कर वायलिन बजाते रहे। उन्होंने मुझे देख तो लिया, लेकिन हमेशा की तरह बुलाया नहीं। मैं बाहर किसी बुत की तरह मूक और अचल खड़ा रहा। यह मेरे लिए अत्यंत सुखद क्षण था और मैं उसका आनंद ले रहा था...

मैंने बरामदे में अपनी साइकिल खड़ी की और मेज पर अपना बैग रखकर सीधे डॉ. अम्बेडकर के अध्ययन कक्ष में गया, जहां उस समय उन्हें होना चाहिए था। मैंने अपने गीले कपड़े भी नहीं उतारे थे। मैंने कमरे के बाहर खड़े होकर अंदर झांका। क्या ही अद्‌भुत दृश्य था। वह कुर्सी पर बैठे, एकांत में वायलिन बजा रहे थे। वायलिन की मधुर तान सुनकर मैं चकित रह गया। ऐसा बहुत कम ही होता था। वह वायलिन तभी उठाते थे, जब वह मूड में होते थे या चिंताओं से मुक्त होना चाहते थे या फिर तब, जब दिन भर की मेहनत के बाद उन्हें थोड़े मनोरंजन की जरूरत होती थी। इस महान् पुरुष को इस विरल मूड में तनावमुक्त होकर वायलिन बजाते देखना मेरे लिए महान् अवसर था। जब मैंने नौकरों को, और नौकरों के क्वार्टर में रहने वाले दूसरे लोगों को इस बारे में बताया तो वे सब भी बहुत रोमांचित हुए। थोड़ी-थोड़ी देर बाद कोई न कोई उस महान् पुरुष को वायलिन बजाता देखने के लिए आता रहा। उनके वायलिन बजाने के कौशल का पारंपरिक शब्दों में बखान करना तो मेरे लिए कठिन है।'

इस अध्याय को पढ़ मुझे बाबासाहेब के संगीत प्रेम की एक घटना और याद आई, जिसे तत्वलीन स्वरूप चंद्र बौद्ध जी ने अपनी पुस्तक 'दिल्ली का दलित इतिहास : कुछ अनछुए प्रसंग' में स्थान दिया है। घटना इस प्रकार है–

'...बाबासाहेब ने स्वामी तुलादास से आग्रह किया कि वे इन 'सत्संगियों' का सत्संग मेरी कोठी पर आयोजित करें। मैं इसे देखना चाहता हूं। 'स्वामीजी' ने दिल्ली के सत्संगियों का जमावड़ा बाबासाहेब की कोठी पर किया। अपना इकतारा, खंजरी, ढोलक, पखावज 'हाथ की उंगलियों में फंसाकर बजाने वाला साज़' लेकर काफी बड़ी संख्या में पहुंचे। हमारी बस्ती से हमारे दादा मोतीलाल, छज्जू और साझी झुम्मन भी उनमें एक थे। कोठी पर जम कर सत्संग हुआ। साझी झुम्मन ने कबीरदास का पद गाया–

'करमगति टारै ना ही टरी।
मुनि वशिष्ठ से पंडित ग्यानि,
देख के सौंध धरी।
सीता हरन मरन दसरथ को
बन में विपता परी॥
करम गति टारै ना ही टरी॥'

'बाबासाहेब भी गा उठे–बाबासाहेब इस 'पद' को सुनकर बहुत प्रभावित हुए, जिसमें हिंदुओं के तथाकथित ईश्वर 'राम' भी 'कर्म फल' से अछूता नहीं बचा। उन्होंने इस 'कड़ी' को दुबारा गाने का आग्रह किया। शायद यह लंबी परंपरा का ही रंग था, जो युगों से दलितों में रची-बसी थी। बाबासाहेब भी इस समय अपने को नहीं रोक पाए और अपने नौकर से 'इकतारा' मंगाकर स्वयं भी पद गायन का प्रदर्शन किया। उपस्थित सत्संगी बाबासाहेब के मुख से भजन सुनकर गद्‌गद् हो गए। अब बाबासाहेब उनकी मंडली के सदस्य बन गए थे। कहते हैं इम्पीरियल सिनेमा (पहाड़ गंज) के मालिक बांके लाल जी और भोगल के एक नौजवान केवलराम भी इस अवसर पर उपस्थित थे।'

इस तथ्यों के प्रकाश में आने की भी एक रोचक घटना है। मैंने अपने मुंबई निवासी एक मित्र विजय सुरवडे जी, जो बाबासाहेब के जीवन चरित्र के ज्ञानकोश माने जाते हैं, को फोन करके पूछा कि, 'रत्तू साहब ने अपनी पुस्तक में बाबासाहेब द्वारा तनाव के समय में वायलिन बजाने की घटना का वर्णन किया है। इसके बारे में आप क्या कहना चाहेंगे? सुरवडे जी ने अपने स्वभाव के अनुरूप तुरंत ही बाबासाहेब के संगीत के प्रति लगाव के ज्ञान का जैसे खजाना ही खोल दिया। उन्होंने बताया कि बाबासाहेब बचपन से ही संगीत के प्रति न केवल रुचि रखते थे, अपितु ढ़ोलक और ढ़ोलक के समतुल्य यंत्र ढ़पड़ी आदि भी खूब अच्छी तरह से बजाना जानते थे।

बाबासाहेब ने वायलन बजाने का विधिवत प्रशिक्षण (शिक्षा) लिया था। उन्होंने मुंबई के साठे नाम के दो संगीतकार बंधुओं से अपने निवास पर वायलन बजाने की शिक्षा पाई थी। साठे बंधु वायलिन यंत्र संचालन में बहुत प्रवीण और प्रसिद्ध शिक्षक थे। उनमें बड़ा भाई छोटे कद का और छोटा भाई बड़े कद का था। बाबासाहेब को वायलिन बजाने का अभ्यास कराने के लिए कभी-कभी दोनों भाई आते थे। दोनों नहीं भी आते थे तो उनमें से एक जरूर आता था।

इन संगीतकारों ने अपने संस्मरण पुस्तकाकार में भी प्रकाशित कराए थे। उस पुस्तक में उन्होंने लिखा है कि, 'डॉ. अम्बेडकर हमारे बहुत आज्ञाकारी, अनुशासित और समर्पित कला-विद्यार्थी थे। जब कभी भी हम उनको वायलन बजाने की शिक्षा देने जाते, हमेशा ही वे समय पर मौजूद रहते और बताए गए पाठ को भी तैयार करके रखते थे। वे बहुत रुचि लेकर वायलन बजाने का ज्ञान प्राप्त करते और अनेक तरह के प्रश्नों द्वारा अपना ज्ञान पुष्ट करते थे। कभी-कभी उनके सवाल चकरा देने वाले होते थे।'

एक दिन साठे बंधु अपने साथ संगीत

सिखाने की एक अंग्रेजी पुस्तक अपने साथ ले गए। डॉ. अम्बेडकर की नजरों से वह पुस्तक छिप नहीं सकी। इसलिए उन्होंने उस पुस्तक को अपने हाथों में थामकर तुरंत उलट-पलट कर देखा और पूछा, 'पुस्तक तो बहुत अच्छी है। पर यह बताओ कि इस पुस्तक के कितने वाल्यूम्स (खण्ड) हैं। उन्होंने बताया हमारे पास तो बस यही एक पुस्तक है, बाकी का हमें मालूम नहीं। बाबासाहेब बोले, 'यह बात आपको मालूम होनी चाहिए।' वास्तव में 100 खण्डों वाली शृंखला में से यह एक पुस्तक थी, जो संगीत-गायन कला पर उन दिनों की बहुत प्रसिद्ध और लोकप्रिय पुस्तकशृंखला थी।

साठे बंधुओं की एक विशेषता यह भी थी कि वे अपने वायलिन के द्वारा तरह-तरह के पशु-पक्षियों की आवाज भी निकाल लेते थे। तोते की, कबूतर की गुटरगूं, मुर्गे की कुकडू कूं, घोड़े की हिनहिनाहट, हाथी की चिंघाड़, शेर की दहाड़, रेल के चलने की आवान..., न जाने कितने तरह की आवाज अपने वायलन से निकाल लेते थे। मगर यहां पर यह जानना दिलचस्प होगा कि बाबासाहेब को सबसे अधिक गधे की आवाज पसंद थी। कारण यह कि गधे के रेंकने की हू-ब-हू आवाज निकालना कोई मामूली बात नहीं थी।

बाबासाहेब की जीवनचर्या का एक दिलचस्प पहलू और भी है। वे जब कभी कमीज पहनते तो कमीज के सबसे निचले बटन पर वायलिन के तार पर मारने जैसी मुद्रा में वे अपनी कनकी अंगुली मारना कभी नहीं भूलते थे।

बाबासाहेब जीवन भर एक आदर्श विद्यार्थी रहे। वे साठे बंधुओं से जो भी पाठ सीखते, तुरंत उसके नोट्स तैयार कर लेते थे। यह सफल विद्यार्थी का विशेष गुण होता है। ऐसे नोट्स को, जिसे अंग्रेजी में 'Notation' कहते हैं, विजय सुरवडे जी ने अपनी प्रसिद्ध विशाल चित्रावली के पृष्ठ 217 पर दिया है। जिसे देख-पढ़कर पाठक

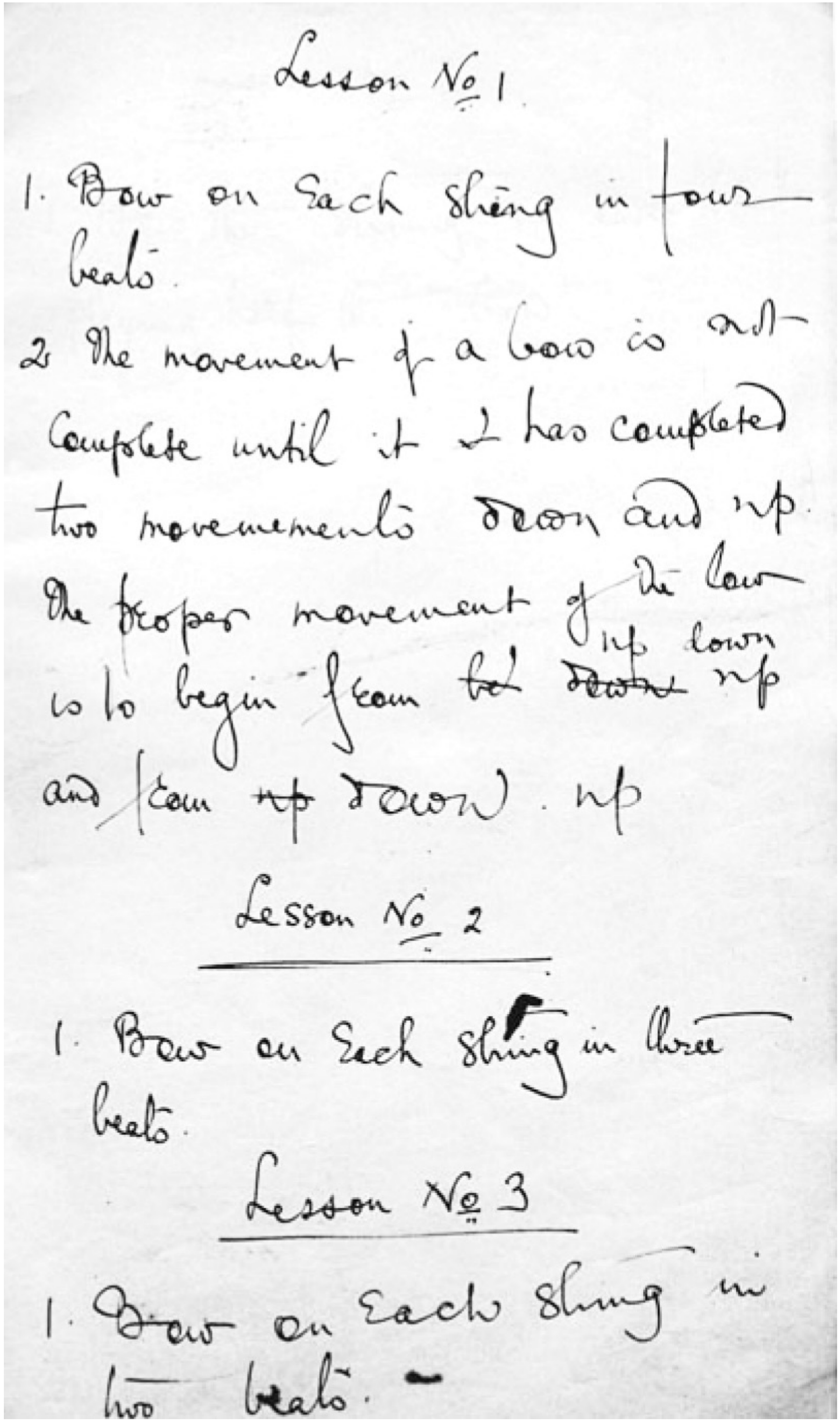
Lesson No 1

1. Bow on each string in four beats.

2 The movement of a bow is not complete until it has completed two movements down and up.

The proper movement of the bow up down is to begin from down up and from up down.

Lesson No 2

1. Bow on each string in three beats.

Lesson No 3

1. Bow on each string in two beats.

डॉ. अम्बेडकर द्वारा लिखा गया नोट

अपना ज्ञानवर्धन कर सकते हैं।

नानक चंद रत्तू जी ने दिल्ली में भी एक वायलन टीचर के बारे में लिखा है, जो बाबासाहेब को वायलन बजाने की शिक्षा देते थे। उस टीचर का नाम रत्तू जी नहीं बता पाए, पर यह बताते हुए हमें हर्ष हो रहा है कि उनका नाम मुखर्जी था। ■

(लेखक बौद्ध मामलों के जानकार कला समीक्षक व जाने माने प्रकाशक हैं।

नारी विमर्श : विविध आयाम

■डॉ. दविंदर कौर होरा

ना. . . .री मैं नारी

धरा के जन्म के साथ ही शायद जन्मी होगी पहली नारी।

पीली काली माटी से लिपी-पुती किसी देवी की प्रतिमा सी..

या किसी यौवना की देह को देखकर ही देवी की प्रतिमा को बनाने का ख्याल आया होगा और किसी मानव ने देवी की प्रतिमा को रचा होगा।

यह सत्य तो पूर्णतया स्वीकार्य है कि संसार की रचना परमात्मा के बाद कोई कर सकता है तो वह नारी कोख ही है।

प्राचीनतम इतिहास बताता है कि पूर्व समय में नारियों को देवी तुल्य माना जाता था। मां की आज्ञा का पालन करना हर बालक अपना परम कर्तव्य समझता था।

बहन बेटियों को यथोचित सम्मान प्रदान किया जाता था। स्त्रियां, मेहनती धार्मिक और कुलीन थी। महाभारत व रामायण आदि ग्रंथों में उल्लेखित है कि नारियों ने विजय प्राप्त कर धर्म की स्थापना में सहयोग प्रदान किया।

नारी के आदर और उसकी भूमिका का इससे उत्कृष्ठ उदाहरण और क्या हो सकता है कि श्री राम जी जब पूजा में बैठे तब सीता जी के बिना उनकी पूजा को पूर्ण नहीं माना गया और उन्हें प्रतीक स्वरूप सोने की सीता को अपने साथ बैठाना पड़ा था।

आजादी के संघर्ष में भी महिलाओं ने कंधे से कंधा मिलाकर साथ दिया।

विनोबाभावे हो या झांसी की रानी लक्ष्मीबाई जिन्होंने कंधे से कंधा मिलाकर विलायतियों को भारत छोड़ने पर मजबूर कर दिया तथा अपने तिरंगे पर आंच तक नहीं आने दी।

बीसवीं सदी के आते-आते यू लगने लगा मानों नारियों की कुंडली में राहू- केतू ने प्रवेश पा लिया हो। यह वक्त सामंतों और राजशाहियों का वक्त था।

उस समय नारी जाति की ना सिर्फ अनदेखी होने लगी बल्कि उन्हें घरों में कैद करके रखा जाने लगा व मात्र सेविका व मनोरंजन का साधन माना जाने लगा।

लड़कियों को स्कूल जाने से रोका जाने लगा। नारी से शिक्षा और आज़ादी के सारे अधिकार छीन लिए गए।

नारी... संसार की रचयिता.. माता-पिता .. भाई-बहन.. पति-पत्नी सबकी उद्गम मात्र नारी. . (उसी पर हर तरह के प्रतिबंध लगने चालू हो गए।

नारी का कार्य सिर्फ संतानोत्पति करना उनका लालन-पालन करना और परिवारजनों की सेवा करना मात्र रह गया। यहीं पर अंत नहीं हुआ। सति प्रथा.. दासी प्रथा.. वेश्यावृति में धकेला जाने से लेकर जादू-टोना आदि ना जाने किन-किन आयामों से गुजरती महिला अपने-आप से लड़ती.. समाज और परिवारजनों से अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ती मन ही मन एक ही कामना करती थी कि किसी भी कीमत पर उसे उसका मान-सम्मान वापिस प्राप्त हो जाए। परंतु यह तभी संभव हो सकता था जब वह पढ़ी-लिखी हो अपने पैरों पर खड़ी हो और आर्थिक रूप से स्वावलंबी हो.. परंतु इसके लिए भी महिलाओं को एक लंबी लड़ाई लड़नी पड़ी परंतु यह लड़ाई बाहर वालों से नहीं खुद से थी। अपने जीवनसाथी से थी अपने परिवार वालों से थी।

धीरे-धीरे ही सही लेकिन मार्ग सुगम होते गए और महिलाओं ने अपनी उड़ानों को नए सोपान दिए... अपने सपनों को नई कल्पनाऐं दी और वे आधुनिकता के दरवाज़े पर आकर खड़ी हुई तो उसकी स्तुति का गान करने के लिए नई समस्याएं मुंह बाऐं खड़ी थी। आज की नारी ने अपने आप को आधुनिक कहा जरूर है परंतु आधुनिकता भरे माहौल में पैर रखने से उसके कंधों पर एक साथ सौ-सौ जिम्मेदारियों का बोझ आ गया है। एक तरफ तो घर-परिवार और बच्चों की जिम्मेदारियां तो दूसरी तरफ बाहर का काम या दपतर की जिम्मेदारियां। इन सब में घिरी नारी एक तरफ तो आधुनिकता... फैशन..

बौद्धिक विकास की तरफ तेजी से बढ़ रही है कभी सिर्फ नर्स और टीचर के लिए ही सेवाएं देने वाली नारी आज बैंक... एयर होस्टेस.. प्रधानमंत्री.. राष्ट्रपति बन कर देश की बाग-डोर अपने हाथों में लिए देश को संभालने का कार्य कर रही हैं तो कल्पनाओं की ऊंची उड़ानों को भरती कल्पना चावला सी बन कर अंतरिक्ष में अपना नाम स्वर्णिम अक्षरों में लिखवा रही हैं तो दूसरी तरफ भ्रूण हत्या और बलात्कार की रोज़-रोज़ आने वाली खबरें आगाह कर रही हैं कि लड़ाई अभी जारी है..

आगे आने वाली पीढ़ियों को हमनें तीन युगों की गाथाऐं सुनाई हैं धुंधट से लेकर जींस तक का सफ़र बहुत कुछ कहता है कभी कदमों में गुलाब की पंखुड़ियों की बिछावन मिली तो कभी कांटों ने तलवों के पोर-पोर को लहुलुहान किया.. कभी तितलियों ने आंचल में मनमोहक रंगों को उकेरा तो कभी भंवरों ने अपनी चालों से उन्हें तार-तार किया।

आने वाला हर दिन नारी के लिए एक नई पहेली और चुनौती लेकर आएगा.. लेकिन उम्मीद का सितारा सदा चमकता रहेगा और नारी के माथे का सूरज एक नई चमक के साथ तेज़ और तेज़ दमक देता रहेगा। ■

रूढ़ियों के निहितार्थ

■तेजपाल सिंह 'तेज'

अन्धविश्वास क्या है? रूढ़ियां क्या हैं? ऐसे अनेक सवाल हैं, जिनका अर्थ जानकर भी जनमानस अनजान बना रहता है और जीवनभर दासता का जीवन जीने को मजबूर रहता है। कारण यह नहीं कि वह अज्ञान है, नादान है या फिर कुछ सोच नहीं सकता। सबसे बड़ा कारण यह है कि मनुष्य अपने दिमाग का प्रयोग नहीं करता, अपितु उसके बड़े क्या करते आ रहे हैं, दुनिया क्या कर रही है आदि आदि... ऐसे-ऐसे कृत्य उसके दिमाग में मलबे की तरह इक्कट्ठा हो जाते हैं कि चाहकर भी उल्लू बना रहता है और अन्धविश्वास तथा सामाजिक विसंगतियों के खिलाफ जाने का भाव दिमाग में तो आता है किंतु उसका कार्यान्वयन नहीं कर पाता। मानवमन नहीं समझ पाता कि वास्तव में रूढ़ियां मानव जनित विसंगतियों में सबसे खतरनाक हैं। किंतु हैं तो मानवजनित ही, इसलिए मानव को इनसे लगाव भी होता है और प्यार भी। तब रूढ़ियों को मानव समाज विरोधी मानने की हिम्मत जुटा ही नहीं पाता। तथा मन मारकर भी परम्पराओं का निर्वाह करता रहता है। फिर चाहे इसमें उसका भला हो, या बुरा।

यथोक्त के चलते समाज में व्याप्त कुरीतियों और रूढ़ियों को एक तरह से थोपी हुई धरोहर के रूप में देखा जा सकता है। और इन्हें थोपने का कार्य समाज के तथाकथित वर्चस्वशाली वर्ग का ही होता है। बेशक इसका शिकार समाज का गरीब और निरीह वर्ग ही होता है, जिसका मुख्य कारण गरीब और निरीह समाज का अशिक्षित होना ही होता है। उसका अपना दिमाग तो जैसे काम करता ही नहीं, उल्टे उसे जो कोई भी जैसा पाठ पढ़ाता है, वह पढ़ लेता है क्योंकि उसे मानसिक रूप से इतना डरा दिया जाता है कि वह कुछ भी मानने और कुछ भी करने को बाध्य हो जाता है। तो क्या यह नहीं माना जाना चाहिए कि थोपी गई मान्यताएं अक्सर अमानवीय होती हैं?

यह भी माना जा सकता है कि रूढ़ियां अक्सर भटकाव की सहोदर होती हैं। कारण है कि जब भटकाव ही सिर चढ़ गया तो फिर कैसा 'दिल', कैसा 'दिमाग'। इस हालत में दिल और दिमाग दोनों की शक्ति ही जैसे क्षीण हो जाती है। तदंतर अन्धविश्वास का उदय होता है। और कालांतर में यह अन्धविश्वास एक अटूट परम्परा का रूप धारण कर लेता है। फिर परम्परा के नाम पर वर्चस्वशाली वर्ग जब चाहे, जैसे चाहे निर्धन वर्ग पर अपनी मनमानी थोपने में हमेशा कामयाब इसलिए हो जाता है क्योंकि परम्परावादी समाज में किसी भी प्रकार से वाजिब विरोध करने की शक्ति भी क्षीण हो जाती है, और वह जाने अनजाने तमाम जुर्म सहते रहने के आदी हो जाता है। और बाद में गरीब और निरीह समाज जो नितांत परम्परावादी होता है, खुद को परम्परा थोपने वाले वर्चस्वशाली वर्ग का हिस्सा मानने लग जाता है। जबकि ऐसा होता कुछ नहीं है। वर्चस्वशाली वर्ग और दलित व दमित वर्ग के बीच में एक ऐसी अदृश्य खाई होती है, जिसको पाटने का प्रयास तो कोई तब करे, जब वह किसी को दिखती हो। और जिन्हें वह खाई दिखती भी है, तो उनकी कोई सुनता नहीं। इस तरह अन्धविश्वास के विरोध में अर्थात् विकास के हक़ में उठने वाली आवाज़ 'नक्कारखाने की तूती' बनकर रह जाती है।

> **किंतु हैं तो मानवजनित ही, इसलिए मानव को इनसे लगाव भी होता है और प्यार भी।**

अन्धविश्वास से न उभर पाने का एक और कारण जो मुझे नजर आता है, वह है कि अन्धविश्वास के चलते स्वप्निल जगत का निर्माण करना। अन्धविश्वासों का शिकार जगत यह नहीं समझ पाता कि सपनों का भी अपना एक संसार होता है और सपनों को देखना व झेलना इतना सरल नहीं होता, जितना वह समझता है। सपने वस्तुतः मन और मस्तिष्क की सोच पर आधारित माने जाते हैं, किंतु मन की सोच तो पहले ही अन्धविश्वास लील जाती है। जाहिर है कि मन और मस्तिष्क दोनों ही सदा शांति की खोज में लगे रहते हैं और यह शान्ति उन्हें परम्परावादी होने में सहज मिल जाती दिखती है। इस तरह परम्पराओं की दीवारों को गिराना आसान तो क्या संभव ही नहीं रह जाती। इतना ही नहीं, परम्परावादी लोग अपने को सही सिद्ध करने के लिए, विकासशील सोच रखने वाले लोगों द्वारा

किए जाने वाले सार्थक कामों में कमियां ढूंढने का काम करना शुरु कर देते हैं। इसका एक कारण तो यह है कि कुछ सकारात्मक करने के एवज में कमियां ढूंढना ज्यादा आसान होता है। दूसरे हमारे महापुरुषों द्वारा अपनी सोच को समाज पर न थोपने की सोच के चलते ऐसा होता है।

प्रायः बुद्धिजीवियों द्वारा माना जाता है कि निरंतरता ही जीवन है। किंतु रूढ़ियां निरंतरता में बाधक हैं। यहां बाधक की श्रेणी में परम्परावादियों को भी रखा जा सकता है। स्पष्ट है कि बाधक कभी भी साधक नहीं हो सकता। यूं जानिए कि यदि चलना एक संकल्प है तो चलते रहना एक साधना।

रूढ़ियां, आस्था, विश्वास, विज्ञान आदि अनेक ऐसे अवयव हैं जो समाज पर हावी हैं। लोग हैं कि परम्पराओं से उबरने का उपक्रम ही नहीं करते। कहने को तो दिमाग सबके पास है किंतु दिमाग का प्रयोग न करना भी एक परम्परा बन गयी है। सब बने बनाए रास्तों पर चलना पसंद करते हैं, फिर उन पर चलने में जान ही क्यूं न चली जाए। इतना ही नहीं यदि किसी प्रकार से 'सत्य' से साक्षात्कार हो भी जाए तो भी जनमानस विरोधाभास के तिमिर जाल से नहीं निकल पाता।

यूं भी कह सकते हैं कि रूढ़ियां बेशक आध्यात्म की समर्थक हैं। और आध्यात्म झूठे अपनत्व और अन्धविश्वास को जन्म देता है। आध्यात्म हो या फिर विज्ञान दोनों ही आस्था और विश्वास को जन्म देते हैं। चाहे इस आस्था और विश्वास के परिणाम नकारात्मक ही क्यों न हों। स्पष्ट है कि रूढ़ियां अथवा कुरीतियां भटकाव का प्रतिनिधित्व करती हैं; इस सत्य को समझने की महती आवश्यकता है।

गहराई से सोचें-देखें तो महाभारत के अभिमन्यु में भी दिमागी तौर पर एक भटकाव ही था। यह जानकर भी कि वह नितांत अनाड़ी है, युद्ध में कूद गया और मारा गया। अभिमन्यु ही क्यों, उसके सभी पुरखों को इस सच्चाई का पता था। फिर भी भेज दिया अभिमन्यु को मौत के मुंह में। कहा जा सकता है कि सर्वत्र भटकाव ही भटकाव व्याप्त था। क्या आप भी अभिमन्यु होना चाहेंगे? बहुत सारे लोग इसका उत्तर हां में दे सकते हैं और ये वो लोग होंगे जो परम्परा के शिकार होंगे। किंतु हमें अभिमन्यु नहीं होना है। सभी अभिमन्यु होने लगे तो समूचा विश्व अनाड़ियों का गढ़ बन जाएगा। ऐसा होने से बचने के प्रयास करने चाहिएं।

कौन नहीं जानता कि अनाड़ियों का गढ़ सदैव दीवार खड़ी करता है। समय के साथ इन्हीं दीवारों को हम संकल्प मानने लगते हैं। हम मानने लगते हैं कि संकल्प टूटा तो विनाश को जन्म देगा। इस प्रकार असत्य की अवधारणा गूढ़ होती चली जाती है। वह गूढ़ होकर रूढ़ियों के रूप को और पक्का कर देती है। महाभारत के भीष्म को यहां उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। यदि भीष्म मिथ्या संकल्प को तोड़ देते तो कौरव नगरी का विनाश होने से बच जाता।

यह सब कुछ जानने के बाद भी एक आशा सदैव बनी रहती है कि यदि संध्या होगी तो प्रभात भी अवश्य होगी, अर्थात चेतना का भाव सदैव बना रहता है। वस्तुतः चेतना का केन्द्र धरती है। धरती पर खुला वातायन है, जल का अपार भंडार हैय अनंत आकाश और चेतना विद्यमान है। मान्यता है कि अन्धेरा जितना गहरा होगा, प्रकाश उतना ही मनभावन होगा। जाने अनजाने हम ऐसे ही भटकावों का शिकार होते रहते हैं। यह भी तो भटकाव का प्रतिरूप ही है। हमें इसमें नहीं खोना चाहिए।

यह सब कुछ जानने के बाद भी एक आशा सदैव बनी रहती है कि यदि संध्या होगी तो प्रभात भी अवश्य होगा, अर्थात चेतना का भाव सदैव बना रहता है। वस्तुतः चेतना का केन्द्र धरती है। धरती पर खुला वातायन है, जल का अपार भंडार है। अनंत आकाश और चेतना विद्यमान है। मान्यता है कि अन्धेरा जितना गहरा होगा, प्रकाश उतना ही मनभावन होगा। जाने अनजाने हम ऐसे ही भटकावों का शिकार होते रहते हैं। यह भी तो भटकाव का प्रतिरूप ही है। हमें इसमें नहीं खोना चाहिए। भटकाव से बचने का प्रयास करना चाहिए। हम सब जानते हैं कि रूढ़ियां, कुरीतियां केवल असत्य का पिटारा हैं। इस असत्य को भीतर के सत्य पर हावी नहीं होने देना है। जीना और भी बड़ी बात है। सत्य को जीने के लिए बौद्धिक सभागारों की आवश्यकता नहीं, संकल्प और इच्छा शक्ति की आवश्यकता है। रूढ़ियां-कुरीतियां तो प्रत्यारोपित हैं; सत्य सार्वभौमिक और अविनाशकारी है। आओ! तमाम विसंगतियों को तोड़कर असत्य और कोढ़ी जिन्दगी जीने से बचें। ■

(लेखक जाने माने स्तंभकार हैं)

अछूत

■ मुल्क राज आनन्द

"अरे क्या रखा है!" उसने आह भरते हुए उत्तर दिया। वह बदला लेने की बात को अधिक स्पष्टता से मना भी नहीं करना चाहता था। और फिर अपनी उत्कट अभिलाषा की प्राप्ति में अपने को अशक्त पाकर वह अत्यन्त विषादग्रस्त भी हो गया। उसने कठोर बनने का निश्चय किया। अपने दांत किटकिटाये। उसके कानों में एक उष्णता दौड़ गई। उसके रक्त की गति तीव्र पड़ गई। और तब उसके दिमाग में बार-बार उठते भावों का बवण्डर खड़ा हो गया। वह मारे क्रोध के उबलने लगा। 'भयंकर! वीभत्स!' उसकी आत्मा उसके भीतर चीख रही थी। उसके मस्तिष्क में ऐसी दाहक पीड़ा उत्पन्न हुई, जैसी उसके शरीर में कभी नहीं हुई थी। वह कांपने लगा। उसका चौड़ा भावहीन मुख मारे द्वेष के पीला पड़ गया। पर वह कर क्या सकता था! उसका सिर और वक्ष झुक गया। यह झुक कर चलता रहा। उसकी देह एक अदृश्य आवेगशील शक्ति के भार से झुकी जा रही थी। अपने यथार्थ परिमाण को वह इस झुकाव में सप्रयत्न छिपा रहा था, मानो वह तनिक भी दिखाई देने में भय अनुभव कर रहा हो।

"साला रामचरन कहां गया?" छोटे ने तनाव को ढीला करने के हेतु कहा।

"सांप की छतरी तोड़ता फिर रहा होगा," बक्खा ने ठिठोली की ओर उस की भौंओं का तनाव ढीला पड़ गया, माथे के बल सीधे हो गए। उस की गति विधि का दवा विरोध सुलभ स्वभाविकता में परिवर्तित हो गया। पहाड़ी के चरणों पर अपराह्न के मौन मे चैन से सोते बूलाशाह नगर के दृश्य में वह लीन हो गया। सुदूरस्थित उत्तरी द्वार के परे पेड़ों के झुरमुट से लेकर दक्षिण में स्थित छावनी तक, पूर्व की आमों की बगिया से लेकर पश्चिम में बहिष्कृतों की बस्ती की झोंपड़ियों तक हल्के नीले मिट्टी के फूलों के गमले, एक विलक्षण दृश्य उपस्थित कर रहे थे। तभी उसकी दृष्टि के सामने आ खड़ी हुई दलदल के बीच में स्थित उसकी फूल के छप्पर की अपनी झोंपड़ी। कितना अन्तर था उसके आसपास की तथा आम्रवाटिकाओं की लहलहाती हरित राशि में तथा उसकी झोंपड़ी की चारों तरफ की दलदल में!

'मैं सोचता हूं कि जरा देर को घर पर सूरत दिखा आऊं, फिर हॉकी खेलने चलूं।' छोटे अचानक बोला। "अभी तो धूप भी बहुत है!"

"अरे हां, हवलदार चरतसिंह ने आज तीसरे पहर मुझे एक स्टिक देने को कहा था," बक्खा बोला। "मैं जाकर वही ले आऊं।"

"अच्छा, तू चल और स्टिक ले," छोटे ने अनुमति दी, "चरन और मैं भी मैच प्रारम्भ होने से पहले पहुंच लेंगे। अब हम इस बटिया से चले।"

वे दोनों एक ओर को मुड़ लिए जहां से एक पगडंडी झाड़ियों के बीच से होती बहिष्कृतों की गली में निकल जाती थी।

बक्खा खुले मैदान में लपकता हुआ नदी के पुराने बहने के स्थान के पत्थरों की ओर बढ़ा जो पहाड़ियों तथा अड़तीसवीं डोगरा पल्टन की बैरकों के बीच में पड़ता था। उसने अनुभव किया कि उसने चरतसिंह के पास जाने का काम पड़ता था। उसने अनुभव किया कि उसने चरतसिंह के पास जाने का काम घड़ लिखा था केवल इसलिए कि वह अपने घर नहीं जाना चाहता था; अपने बाप, भाई-बहन से मुठभेड़ करना नहीं चाहता था; और न हीं चाहता था, कम-से-कम आज के दिन, टट्टियों का काम करना। क्षण-भर को उसे पश्चाताप हुआ कि वह काम से भाग रहा था। किन्तु वह अपने वातावरण के इतना आगे बढ़ गया था कि अपनी झोंपड़ी के आस-पास रहने के विचार-मात्र से उसे घृणा थी। उसके हृदय में कहीं यह भावना उठती थी कि वह उस स्थान का अस्तित्व ही नहीं था, वह उसके जीवन की आलेख्य पट्टी पर से साफ पोत दिया गया था।

बैरक के आंगन में एक भी प्राणी दिखाई नहीं पड़ता था। क्वार्टरगार्ड (बारग की जेल) भी रिक्त तथा परित्यक्त मालूम होती थी। केवल दो सन्तरी तालाबन्द शस्त्रागार के सामने के बरामदे में इधर-से-उधर, उधर-से-इधर यन्त्रवत्

चक्कर लगा रहे थे। केवल एक टोप जो सामने दीवार पर टंगा था, बक्खा को सजीव तथा स्पन्दनशील प्रतीत हुआ। इस टोप के विषय में कई मनघड़न्त कहानियां प्रचलित थी। कोई कहते थे कि वह साहब लोगों की सत्ता का चिह्न था, जो पल्टन के अधिकारी थे। दूसरे कहते थे कि एक साहब उसे भूल गया था, फिर साहब ने एक सिपाही को गोली मार दी और उसका कोर्टमार्शल हुआ, पर साहब तो क्वार्टरगार्ड के सींखचों के पीछे बंद नहीं किया जा सकता, इसलिए उसकी पेटी, टोप और तलवार जेल में डाल दिये गऐ और साहब अचानक लुप्त हो गया। कोई कहता, पल्टन के कमाण्डर ने न्यायाधीशप्रदत्त कर दिया और क्वार्टरगार्ड में रह गया केवल उसका टोप। विपरीत इस के, सन्तरियों से कोई पूछता कि टोप किसका है, तो वे यही कहते कि एक साहब का है जो मैदान में गया है और शीघ्र ही आकर उसे ले जाएगा। पर इस टोप के विषय में प्रश्न पूछता ही कौन था, सिवाय अड़तीसवीं डोगरा पल्टन के बच्चों के। छोटे–छोटे बच्चे तो सन्तरियों के उत्तर पर विश्वास करके उड़ लेते थे, क्योंकि वे साहब से भूत, प्रेत या पिशाच की तरह डरते थे। यह साधारण विश्वासथा कि साहब लोग बड़े बच्चे इतना समझते थे कि यह किसी ने देखा कि उन्होंने बेंत जड़ी। बड़े बच्चे इतना समझते थे कि यह तो उत्सुक बच्चों की भीड़ को वहां से भगाने के लिए सन्तरियों ने बहाना घड़ लिया है। टोप तो वहां बरसों से टंगा दीखता था। ऐसा क्या कि जब उन्होंने उसे देखा, तभी कोई साहब वहां टांग कर गया हो।

किन्तु इतनी समझ उन्हें भी नहीं थी कि सिपाहियों ने यह झूठा बहाना घड़ा क्यों था। उन्हें क्या पता कि सिपाहियों को भी वह टोप बहुत प्रिय था; इसलिए नहीं कि वे उसे पहन सकते थे, अपनी वर्दी के साथ या बेवर्दी के कपड़ों के साथ, वरन् इसलिए कि जब वे अपने घर पहाड़ियों में जाएंगे तो गांववाले उसे देखकर कितने आश्चर्यचकित होंगे। मीलों दूर से लोग उसे देखने आएंगे, जैसे वे आंखें फाड़–फाड़कर प्रशंसाभरी चितवन से उनकी होश्यारपुर में अपने गांव को लौटते समय अपने असबाब के साथ साहबी ठाट के इस प्रतीक को ले जाते हुए वे गर्व से फूले न समाएंगे।

किन्तु इस टोप के विषय में इतनी सारी कहानियां फैली क्यों? क्योंकि अड़तीसवीं डोगरा पल्टन में एक भी बच्चा ऐसा नहीं था जिसने इस टोपर ललचाई आंखें न डाली हों। पल्टन के बच्चों में आधुनिकता की भावना ने बड़ा अन्धेर मचा रक्खा था। प्रत्येक बच्चे की चेतना में विलायती कपड़े पहनने की उत्कट अभिलाषा ने घर कर लिया था। थे वे सब बाबुओं, सिपाहियों, बाजेवालों, भंगियों, धोबियों या दुकानदारों के बच्चे–सब इतने निर्धन कि पूरी विलायती वेशभूषा मोल लेना तो उनकी पहुंच से बाहर था। एक कभी विलायती चीज न पहनने से तो एक–दो चीज का पहनना उत्तम ही था। और फिर टोप! कैसी अनोखी उसकी आकृति! और शरीर के श्रेष्ठतम अंग की शोभा! भारतीय नेत्रों में तो उसका स्थान विशेष श्रद्धा का था। जैसा जादू टोप में भरा था, वैसा विलायती वश के दूसरे परिधान में नहीं।

अड़तीसवीं डोगरा पल्टन के क्वार्टरगार्ड के बरामदे की खूंटी पर टंगे इस टोप को बक्खा ने बरसों से ललचाई आंखों से देखा था। बचपन से ही उसने इसे एक प्रेमी तथा भक्त की विस्मयभरी दृष्टि से ताका था जब कभी उसे अड़तीसवीं डोगरा–बारकों के आंगन को दुहारने का सुअवसर मिलता, वह क्वार्टरगार्ड वाली दिशा ही अनिवार्य रूप से चुनता।

अड़तीसवीं डोगरा पल्टन के क्वार्टरगार्ड के बरामदे की खूंटी पर टंगे इस टोप को बक्खा ने बरसों से ललचाई आंखों से देखा था। बचपन से ही उसने इसे एक प्रेमी तथा भक्त की विस्मयभरी दृष्टि से ताका था जब कभी उसे अड़तीसवीं डोगरा–बारकों के आंगन को दुहारने का सुअवसर मिलता, वह क्वार्टरगार्ड वाली दिशा ही अनिवार्य रूप से चुनता। यहां वह अपनी असक्ति के पदार्थ पर छिपा दृष्टिपात कर सकता था और उसे प्राप्त करने की अनेक योजनाएं सोच सकता था। कितनी लुभावनी और मनमोहक थीं वे योजनाएं।

एक उपाय तो उसने सोचा कि कारा को गारद के कमाण्डर से दोस्ती गांठी जाए। पर यह तो असम्भव था। कारा के पहरे पर एक ही अफसर कभी दो दिन–रात भी स्थिर रूप से नहीं रहता था। गारद तो हर बारहवें घंटे बदल जाती थीं पल्टन में बारह कम्पनियां, उनमें सैकड़ों प्लैटूने, और उनमें हजारों ऐन॰सी॰ओ॰। फिर कहां सम्भावना थी कि कारा की गारद का एक ही अफसर बक्खा के जीवन में दो बार भी वहां दिखाई पड़ता।

यह योजना असफल हुई तो उसने सन्तरियों में से एक से मांगने की सोची। अपने बचपन में एक बार उसने यह साहस किया भी था। तब सन्तरी ने वही झूठा बहाना सुना दिया था कि साहब इसे टांग कर मैदान में गया है, अभी लेने आता होगा। किन्तु अब उसका मांगने का भी साहस नहीं हुआ। बहुत से सिपाही ऐसा अकड़ते है! 'कहीं मुझे गालियां सुनाने

लगें,' उसने मन में सोचा। 'इससे अच्छा तो यह है कि किसी हवलदार से मांगूं। हवलदार पुराने आदमी होते हैं अनुभवी, और वे सब मेरे पिता, भंगियों के जमादार को जानते हैं। वे टोप न भी दे सके तो बोलेंगे तो मीठा।' पर वह तनिक भी साहस नहीं बटोर सका। 'ऐसा क्यों है' वह प्रायः अपने मन से पूछता "कि बचपन में तो मैंने मांगने का साहस किया, किन्तु अब नहीं कर सकता?' उसे उत्तर न मिलता। उसे ज्ञात नहीं था कि आयु बढ़ने के साथ-साथ वह बचपन की स्वतन्त्रता-चिन्तारहित, शंकारहित, नियंत्रणरहित स्वतंत्रता-खो बैठा था, साहस खो बैठा था, और भय से त्रस्त था।

फिर उसने अपने मन को बहकाया कि उसे वास्तव में टोप चाहिए ही नहीं, वह तो चाहे जितने टोप कबाड़ी की दुकान से खरीद सकता है या गोरा-बैरकों में किसी टोमी से मांग सकता है। मन उसका टोप के लिए ललचा ही रहा था। बरसों से वह उसके लिए तड़पता रहा था और अब भी वह उसे उसी आसक्ति, उसी उत्सुकता, प्राप्त करने की उसी उत्कट अभिलाषा से ताकता खड़ा रहा जिससे बरसों से ताकता आया था। टोप कुछ निर्मल भी नहीं था। बरसों की धूल उस पर जम गई थी। ऊपर का खाकी कपड़ा, लिहाफ केसे आकार का, रंग बुझ कर मैला सफेद रह गया था, और अन्दर की तो भगवान् नहीं।

इधर-से-उधर घूमते सन्तरियों के रास्ते से बचकर बैरक-कारा के एक कोने में खड़ा बक्खा उस टोप को घूरता ही रहा। पर टोप एक इंच भी उसकी ओर नही खिसका। 'मैं कर क्या सकता हूं?' उसने अपने मन से पूछा। 'जाकर सन्तरी से मांग' मन ने उत्तर दिया। पर नहीं, वह समझेगा थोड़ा ही, शंका उठी, 'वह समझ थोड़ा सकेगा, यदि मैं, एक भंगी का लड़का, अचानक उससे टोप मांगू। वैसे भी कठोर आकृति का है। उसके निकट जाने का मुझसे साहस नहीं।'

'कोई और भी है यहां?' उसने चारों ओर देखा, पर एक भी प्राणी दृष्टिगोचर नहीं हुआ। उसने अनुमान किया कि सब सो रहे होंगे। जाकर टोप चुरा लाने की दुर्दमनीय इच्छा ने उसे धर दबाया। यदि यह सन्तरी यहां न होता! 'चुराया तो जा सकता है,' फिर उसने सोचा, 'जब सन्तरी मुड़कर अपने चक्कर की दूसरी ओर जाता है। पर, किसी ने आकर मुझे आ झपटा तो? टोप इतना बड़ा है कि छिपाया भी नही जा सकता। फिर चोरी के माल को पहनूंगा कैसे? पल्टन-भर में सब इस टोप को पहचानते हैं। नहीं, यह असम्भव हैं इसे पाने का कोई उपाय है ही नहीं।' उसने टोप पर एक आसक्तिभरी दृष्टि डाली और बारकों की ओर चल पड़ा, जिनके छोर के पास हवलदार चरतसिंह रहते थे।

फिर उसने अपने मन को बहकाया कि उसे वास्तव में टोप चाहिए ही नहीं, वह तो चाहे जितने टोप कबाड़ी की दुकान से खरीद सकता है या गोरा-बैरकों में किसी टोमी से मांग सकता है। मन उसका टोप के लिए ललचा ही रहा था।

वह दूर नहीं थी, लगभग सौ गज। वहां तक पहुंचने का समय बक्खा ने अपने अपको टोप पहनकर हाकी खेलते चित्रित करने में बिताया-टोप ओढ़े वह भाग रहा है। कितना गौरवशाली वह दीखता है! सब लड़के उसे अपना देवता मान रहे हैं! तभी उसे ध्यान आया कि टोप ओढ़कर तो हॉकी नहीं खेली जाती। 'मेरे विचार किनते मूर्खतापूर्ण हैं!' उसने सोचा। विलायती वेशभूषा की ओर अपनी रूचि पर उसे शर्म भी हुई। पर इतना उसे संतोष था उसने कभी अपने-आपको ऐसा उल्लू नहीं बनाया था जैसा रामचरन ने अपनी बहन के ब्याह में नेकर और टोप पहनकर।

एक खाई को लांघते ही सामने बैरकें दिखने लगी। जहां वह जा रहा था वह सामने लम्बा बरामदा था। इसके छोर वाले कमरे में ही हवलदार चरतसिंह रहते थे। पहले तो वह संकोचवश आगे निकलता चला गया। दिखाई पड़ने में उसे सदा संकोच होता था। उसने चोर की सी अनुभूति की। इतनी ही कुशल थी कि कमरे का द्वार बन्द था। अब कैसे पता चलाए कि हवलदार जी घर पर हैं या नहीं! साधारण पुरूष तो उनका नाम लेकर पुकारता या जाकर कुण्डा खटखटाता। पर वह तो भंगी था, बरामदे से भी बादशाह जहांगीर द्वारा आविष्कृत घण्टी और श्रृंखला रीती चलती होती। उसे बाबू के लड़के ने बताया था कि जहांगीर के महल में एक घण्टी थी जिससे बंधी डोरी बाहरी फाटक तक आती थी और उसे खींचकर प्रार्थी-व्यक्ति अपनी उपस्थिति की सूचना बादशाह तक पहुंचा सकता था। उसे तो शहर में रोटी मांगने को चिल्लाना पड़ता था। जब वह रामचरन या छोटे के घर जाता था, तब भी चिल्ला-चिल्लाकर पुकारने के अतिरिक्त दूसरा चारा न था, और उसकी आवाज पहचानते ही रामचरन की मां तथा छोटे का बाप उसे खूब गालियां सुनाते थे कि वह उनके लड़कों को आवारा बना रहा है। और अब तो न वह चिल्ला सकता था, न और कुछ कर सकता था। हवलदारजी सो रहे हों! और सिपाही लोग भी सो रहे हों! उनकी नींद में बाधा जो पड़ेगी!

वह बरामदे के बाहर इधर-से-उधर चक्कर काटता रहा। फिर एक पेड़ के नीचे लेट गया। उसकी विचार-लहरें दौड़ने लगीं-'समझ में नहीं आता क्या करूं?

हवलदारजी को सुबह का वादा याद भी है? नहीं तो सब समय ब्यर्थ ही नष्ट होगा। पिता मुझे गालियां दे रहा होगा। आज तो सारा तीसरा पहर काम नहीं किया। पर क्या हुआ? आज रक्खा को ही करने दो। सदा तो मैं ही करता आया हूं। एक तीसरे पहर की मैंने छुट्टी ही ले ली तो क्या आफत आ गई?' उसकी दृष्टि रसोई की ओर मुड़ गई जहां चरतसिंह की कम्पनी का खाना पकता था। बचपन में वह प्राय: यहां रोटी लेने आया करता था, जब उसका पिता 'बी' कम्पनी में साधारण भंगी के पर नियुक्त था। इस कम्पनी के हॉकी के खिलाड़ियों की आकृतियां उसके नेत्रों के सामने घू गई। सेण्टर-हाफ होश्यारसिंह टीम की जान था। सेण्टर-फॉर्वर्ड लेखरात था, दायां फुल-बैक शिवसिंह था। और गोल-कीपर था-महापराक्रमी चरतसिंह, जिसके विषय में यह किंवदन्ती प्रसिद्ध थी कि या तो वह हॉकी खेलता रहता है या आस्पताल में पड़ा खेल की चोटों और घावों को सेकता रहता है । उसने उस साहसी वीर को गोरी पल्टन के प्रतिपक्ष में गोल की रक्षा करते चित्रित किया- पहले वह वह ओल के डंडे के सहारे झुका खड़ा रहता, गेंद उसी ओर आती कि वह उस पर टूट पड़ता। बाबू का लड़का कहा करता था कि चरतसिंह की देह पर खेल की चोटों के उतने ही चिह्न हैं, जितने बाबर-विजेता राणा सांगा की देह पर तलवारें और भालों के। और सबसे रूचिकारक चोट तो वह भी कि उसके बत्तीसों दांत ही निकल पड़े थे। फिर उसने सोना-जड़े कृतिम दांतों का जबड़ा बनवाया था, जिस पर उसकी बड़ी खिल्ली उड़ाई जाती थी। किसी ने तो बड़ी चतुरता से सुझाया था कि 'चोर की दाढ़ी में तिनका' कहावत को बदलकर अब कर देना चाहिए, 'चोर के मुंह में सोने के दांत'।

बक्खा अपने दिवास्वप्न में पूरा-पूरा नहीं डूबा था कि उसने चरतसिंह को हाथ में लोटा लिये द्वार से बाहर आते देखा। हवलदार ने बरामदे में बैठकार अपनी आंखों में और मुंह पर खूब छपाके मारे। मुंह धोने में मग्न तथा अर्धनिद्रितावस्था में होने के कारण उसने कीकर के नीचे बैठे बक्खा को नही देखा। भंगी का लड़का थोड़ा संकोच, थोड़ा साहस करता आगे बढ़ा और मस्तक तक हाथ उठाकर बोला, 'सलाम हवलदारजी!"

"आ रे बखिया, कह कैसा है?" चरतसिंह ने उत्साह के साथ पूछा। "अब तो तू पल्टन के हॉकी के मैचों में दिखाई ही नहीं पड़ता। कहां छिपा रहता है?

"मुझे काम करना पड़ता है, हवलदारजी!" बक्खा ने उत्तर दिया।

"अरे काम! काम! काम! मार गोली काम के!" चरतसिंह चिल्लाकर बोले। इस समय के शुभकामना-प्रदर्शन के आवेश में वह यह भूल गए थे कि आज सुबह ही उन्होंने भी उसे अना काम चित रूप से न करने पर डटा था।

"अरे काम! काम! काम! मार गोली काम के!" चरतसिंह चिल्लाकर बोले। इस समय के शुभकामना-प्रदर्शन के आवेश में वह यह भूल गए थे कि आज सुबह ही उन्होंने भी उसे अपना काम चित रूप से न करने पर डटा था।

इस पारस्परिक विरोध का बक्खा को ज्ञान था, परन्तु वह चरतसिंह से इतना प्रभावित था कि इस हॉकी के महापुरूष के प्रति अपनी प्रशंसा की भावना में कोई बाधा उपस्थित होने देना नहीं चाहता था। हवलदार की मुस्कान में एक सुख-शान्तिदायक दमन थी। बक्खा उसकी उपस्थिति में अत्यन्त प्रसन्न था। 'इस आदमी के लिए' उसने अपने मन में कहा, 'जन्म भर भंगी बने रहने में मुझे आपत्ति न होगी। इसके लिए मैं क्या नहीं कर सकता?'

चरतसिंह उठ खड़ा हुआ और अपनी मोटी खादी की धोती के सिरे से मुंह पोंछा। फिर अपने नारियल के हुक्के पर से चिलम उतारते हुए बोला, "जा, रसोई में से दो पतंगे डलवा ला।"

लड़का विस्मित खड़ा रह गया। कोई हिन्दू द्विज अपनी चिलम में उससे आग मंगवाकर अपने हुक्के पर रखकर पिए! क्षण-भर को वह ऐसे खड़ा रहा जैसे उसे बिजली का करेण्ट छू गया हो। फिर इस विचित्र आदेश ने उसके प्राणों में एक सुखद स्फूर्ति भर दी। उसे रोमांच हो आया। उसने चरतसिंह से चिलम ले ली और हर्ष के परिधान में लिपटा पचास गज दूर रसोई की ओर चला।

"रसोइए को भी मेरे पास बुला लाना!" चरतसिंह ने उसके पीछे ऊंचे स्वर में कहा, "उससे कहना मेरी चाय ले आवे।"

"बहुत अच्छा, हवलदारजी!" बक्खा बोला, और बिना पीछे देखे आगे बढ़ता ही रहा। उसे डर था कि कहीं वह इतने बड़े गौरव को न संभाल सके कि एक हिन्दू उससे अपनी चिलम में आग मंगवाए। 'क्या? यह सूखी है कि गोली?' उसने अपने मन में तर्क किया। 'यह भ्रष्ट हो सकती है कि नहीं?' उत्तर मिला, 'हां, तम्बाकू तो गीला है। यह तो अवश्य भ्रष्ट हो सकता है।' उसे शंका हुई कि उसे काम सौंपते समय चरतविंह चेतनावस्था में भी थे? उनके होश-हवास तो ठी थे? 'सम्भव है वह भ्रम में हों और अचानक अपने किये का उन्हें बोध हो। कहीं वह भूल तो नहीं गए कि मैं भंगी हूं? ऐसा तो नहीं हो सकता। अभी तो मैं उनसे

काम की बात कर रहा था। आज सुबह ही तो उन्होंने मुझे देखा था। भूल कैसे जाते?' इस तर्क से सान्त्वना पा उसने भगवान को धन्यवाद दिया कि चरतसिंह जैसे आदमी भी संसार में विद्यमान हैं वह जमे-पांव चलता रहा, प्रसन्न गति से, पर संयम के साथ, कहीं वह बारकों में किसी का ध्यान आकृष्ट न करे और हवलदारजी चिलम ले जाता देखा जाए। वह बड़ी कठिनता से गिरता-गिरता बचा; क्योंकि उसकी आत्मा उस मनुष्य के प्रति प्रेम, श्रद्धा तथा भक्ति से ओतप्रोत थी, जिसे उस अपवित्र कमीन को ऐसा काम सौपा। उसकी आंखे अन्तःमुखी हो रही थी।

रसोई की कोठरी के सामने पहुंचकर वह खड़ा हो गया, जहां एक रसोइया बैठा आलू छील रहा था और चूल्हे पर एक विशाल पीतल की पतीली अपने ढक्कन के नीचे से भांप के बादल उड़ा रही थी।

"हवलदार चरतसिंह के लिए दो-चार पतंगे दोगे, महाराज!"

रसोइए ने क्षण-भर बक्खा की ओर देखा है; मानों पूछ रहा हो कि 'तू कौन है?' वह सोच रहा था कि इसे कहीं देखा है; पर याद नहीं आ रहा था। 'खलासियों में से होगा।' उसने हवलदार चरतसिंह की चिलम हाथ में लिये देखकर अनुकम्पापूर्ण निर्णय किया। क्योंकि काला वर्ण और मैले कपड़े होते हुए भी खलासी, जाति से घसियारे होते हैं और उनसे चिलम में आग मंगवाने में किसी को आपत्ति नहीं होती। इसके अतिक्ति रसोइया चरतसिंह का आभारी भी था। हवलदार ने छुटटी पर जाने से पहले उसे एक नयी कमीज और सफेद साफा दिया था। उसने चूल्हे में से दो जलती लकड़ी उठायी और बक्खा के सामने जमीन पर पटक कर उन्हें झाड़ दिया। भंगी ने वे जलते कोयले एक-एक करके अपने हाथ उठाकर चिलम में रख लिए। उसे अपने प्रातःकाल के स्वप्न की वह लड़की अचानक याद आई जिसकी हथेली पर सुनार ने कोयला रख दिया था।

"मेहरबानी," उसने कहा, जब वह चिलम को आग से आधी भर चुका। "हवलदार साहब ने अपनी चाय भी मंगाई है।" दुर्भाग्यवश शीघ्रता में उच्चा रित इस वाक्य में अत्यन्त विनीत भाव भर देने का उसने पयत्न किया।

तब वह लौटकर वहां आया जहां चरतसिंह कहीं से एक आरामकुर्सी खींचकर उस पर बैठा था और चिलम उसे दे दी। हवलदार ने असंदिग्ध भाव से हाथ फैलाकर चिलम पकड़ी और हुक्के पर रखकर निःशंक गुड़-गुड़ाने लगा।

अब बक्खा का धैर्य जाता रहा था। वह बरामदे के पास एक ईंट पर बैठ गया। पता नहीं क्यों, वह अधीर हो रहा था-शायद हुक्के के कारण। हुक्का सदा उसे अधीर बना देता था; और फिर उसे हॉकी-स्टिक की उत्सुकता थी। हवलदार ने तो एक शब्द भी उसके विषय में नहीं कहा! 'कहीं वह भूल गए?' बक्खा सोचने लगा। वह बैठा बाट देखता रहा। उसके और चरतसिंह के मध्य जो शून्य विरूपता फैल गई थी उससे वह कुछ खीझ रहा था। तभी रसोइया एक लम्बा-सा पीतल का गिलास और एक लोटा चाय लेकर आया, और हवलदार ने अपने मित्र की घबराहट को एक अतार्किक सरल विधि से दूर कर दिया।

"चिड़ियों के पानी पीने का वह बर्तन उठा ला," उसने बक्खा से कहा और लकड़ी के खम्बे के चरण की ओर इंगित किया। "इसका पानी खिंडा दे।"

बक्खा ने ऐसा ही किया और साफ बर्तन उसके हाथ में था। उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब चरतसिंह ने उठकर उसके बर्तन में गिलास में से चाय उंडेलनी प्रारम्भ की।

"नहीं, नहीं, सरकार!" बक्खा ने भारतीय अभ्यागतों की लोकसिद्ध विधि में कहा।

चरतसिंह ने चाय उंडेल दी। "पी, इसे पी बेटा!"

"मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूं, हवलदारजी!" बक्खा ने कहा, "आप बड़े दयालु हैं!"

"पी इसे, पी चाय को! तू कठोर परिश्रम करता है। यह तेरी थकान दूर कर देगी।" चरतसिंह ने कहा।

चाय को जल्दी से पीकर बक्खा उठा और बर्तन को यथास्थान रख दिया। इसी बीच में चरतसिंह ने लोटे की चाय गिलास में डाल ली थी और चुपचाप उसे पीता रहा।

"अच्छा, अब तुझे हॉकी-स्टिक दूं!" उसने अपनी जीभ से होंठ तथा छोटी-छोटी मूंछें चाटते हुए कहा।

बक्खा ऊपर लखाया और कृतज्ञता की मुद्रा धारण करने की चेष्टा की। कुछ अधिक प्रयत्न नहीं करना पड़ा, पल-भर में वह पृथ्वी का क्षुद्र-से-क्षुद्र जीव हो गया और चुपचाप हवलदार के पीछे चलने लगा। उसका मुख चाय के कारण गरम हो रहा था, उसके दांत दास्य मुस्कान में भी चमक रहे थे, उसका सारा शरीर और मन अपने उपकारी के प्रति कृतज्ञता तथा प्रशंसा के मारे विचित्र तनाव में था। 'अचानक मेरी किस्मत कैसे बदल गई?' उसने अपने मन से पूछा, 'इतनी दयालुता, हवलदार की ओर से, जो ऊंची जात का हिन्दू है और पल्टन के विशेष पुरूषों में से है!' चमत्कृत नेत्रों

रसोई की कोठरी के सामने पहुंचकर वह खड़ा हो गया, जहां एक रसोइया बैठा आलू छील रहा था और चूल्हे पर एक विशाल पीतल की पतीली अपने ढक्कन के नीचे से भांप के बादल उड़ा रही थी।

से लखाता वह चरतसिंह के पीछे-पीछे चला जा रहा था।

हवलदार ने अपने कमरे के बराबर का एक खोला और क्षण-भर को लुप्त हो गया। थोड़ी देर में वह लगभग बिलकुल नयी एक हॉकी-स्टिक लिये बाहर निकला, जो शायद एक-दो बार ही उपयोग में लायी गई होगी। जिस अचिंतित भाव से उसने बक्खा के हाथ में आग लाने के लिए चिलम पकड़ा दी थी, उसी भाव से अब स्टिक पकड़ा दी।

"पर यह तो नयी है, हवलदार जी," बक्खा ने उसे लेते हुए कहा।

'बस, भग जा अब। नयी या बेनयी, तुझे क्या मतलब!" चरतसिंह ने कहा, "इसे अपने कोट में छिपा ले और किसी से कहना मत! जा बस, मेरे लाल!"

बक्खा ने अपना सिर झुका लिया। वह हवलदार की आंख-से-आंख नहीं मिला सका। इतने उदार पुरूष की ओर वह देखे कैसे! उकी दयालुता से वह पराभूत हो गया था। वह कृतज्ञ, इतना अटकता हुआ कृतज्ञ कि उसे यह भी ज्ञात नहीं था कि वह किस प्रकार दस गज चलकर कोना मुड़े और अपने उदार तथा दयालु उपकारी की आंखों से ओझल हो! सारा वातावरण संकोच से सराबोर था। दूर हटता हुआ वह पीड़ा अनुभव कर रहा था। 'विचित्र! अति विचित्र! विस्मयजनक! दया का सागर! मुझे क्या पता था वह इतना उदार है! मुझे पता होना चाहिए था! सदा ही वह प्रसन्न मुद्रा में रहता है। उदार, श्रेष्ठपुरूष! उसने मुझे एक नयी स्टिक दी! एक बिल्कुल नयी स्टिक!' उसने अधीरता के साथ अपने ओवरकोट की तह में छिपाई स्टिक को बाहर निकाल लिया। कितनी सुन्दर थी यह चौढ ब्लेड की स्टिक, अंग्रेजी यौहरों से सुसज्जित, और इस कारण बक्खा के लिए दुनिया-भर की सर्व-श्रेष्ठ स्टिक! चमड़े की उसकी मूंठ थी। 'सुन्दर! कितनी सुन्दर! उसका मन अपने उन्मत आवेश की द्रुत गति तथा आवेग में मानो चिल्ला रहा था। कोना मुड़कर उसने खाई लांधी और अपने उपकारी की आंख से ओझल हो गया। अब निश्चित होकर, कि कोई उसके इनाम पर हुए उन्मत गर्व तथा हर्षातिरेक को देखने वाला नहीं है, उसने उसे पृथ्वी पर उस स्थिति में रखा जिसमें गेंद को हिट मारने से पहले रखते हैं। उसने उसे झुकाया। वह बड़ी लचकदार थी और खूब झुकती थी। बक्खा जानता था कि यही तो अच्छी स्टिक की पहचान है। फिर उसने झट मिट्टी को पोंछ दिया जो स्टिक के निचले सिरे पर लग गई थी और उसे कसकर अपने हाथों में पकड़ लिया, मानों कोई उसे उससे छीनने आ रहा हो। यह सत्य, कि वह उस स्टिक का स्वामी था, इतना अविश्वसनीय था कि वह इस प्रकार

'बस, भग जा अब। नयी या बेनयी, तुझे क्या मतलब!" चरतसिंह ने कहा, "इसे अपने कोट में छिपा ले और किसी से कहता मत! जा बस, मेरे लाल!"

अपने मन को विश्वास दिलाने का प्रयत्न कर रहा था कि वह इस प्रकार अपने मन को विश्वास दिलाने का प्रयत्न कर रहा था। कि स्टिक सचमुच उसके अधिकार में है। इतनी मजबूती से स्टिक को पकड़े रहने पर भी वह यही अनुभव कर रहा था कि यह सब स्वप्न है। यह भाव तब तक नहीं छूटा जब तक कि वह भारतीय अफसरों के बंगलों के पीछे, व्यायामशाला के सामने, खेल के मैदान के छोर पर पहुंचकर एक गोल पत्थर के टुकड़े को इधर-उधर हिट मारने लगा। 'इस प्रकार तो स्टिक टूट जाएगी, इसमें बुरे दाग पड़ जाएंगे' यह उसे अचानक बोध हुआ। उसने स्टिक को मजबूती से पकड़कर ह्दय से लगा लिया। फिर वह अपने विचार समेटने लगा-'अब मेरा स्वाभाविक सौभाग्य लौट आया है। काश, वह सुबह की घटना न होती!'

बक्खा ने चरतसिंह की आकृति याद करने का प्रयत्न किया।

उसके भ्रमपूर्ण होने का कुछ सन्देह हुआ। 'उन्हें पता भी था कि क्या कर रहे हैं?' बक्खा ने सोचा। 'कहीं वह अन्यमनस्क तो नहीं थे? हो भी सकते हैं? क्या मैं इस स्टिक से खेलने की घृष्टता करूं? कहीं यह खबर हो गई और। उन्हें अचानक बोध हुआ कि उन्होंने ऐसी चीज दे डाली है जिसे वह देना नहीं चाहते थे, तब तो अनर्थ हो जाएगा। तोड़कर, खराब करके या उपयोग में भी लाकर स्टिक को मैं उन्हें कैसे लौटा सकता हूं? ऐसी नयी खरीदकर देना तो मेरे बूते के बाहर है ही। पर यह प्रश्न ही नहीं उठता। क्या उन्होंने नहीं कहा था कि "नयी या बेनयी, तू इसे लेकर भग जा, और किसी से कहना मत!" उन्हें अच्छी तरह बोध था कि वह क्या कर रहे हैं। वह भ्रम में थे या अन्यमनस्क थे, यह सोचना मेरा पागलपन है। ऐसा उदार पुरूष और उसके विषय में मैं ऐसे विचार लाऊं! मेरे से अधिक कौन सूअर होगा!' उसने चाहा कि वह सोचना ही बन्द कर दे, क्योंकि उसके विचार अनुदार होते जा रहे थे। कितना सुन्दर तीसरा पहर है,' उसने कहा और अपने विचारों के झुकाव से झटके के साथ सिर उठाकर उत्तर की पहाड़ियों से आती तीव्र हवा को सूंघा। उसे ज्ञात था कि शरद की निर्मल धूप उष्ण परिधान से आच्छादित गन को हर्षोत्फुल्ल करने को पर्याप्त उष्णता रखती थी। जिस प्रकार आकाश का प्याला निर्मल उष्ण धूप से भरा हुआ था, उसी प्रकार उसके जीवन का प्याला देदीप्यमान अपराह्न की प्रसन्नता से भरपूर था और छलक रहा था। वह मारे प्रसन्नता के कूदना चाहता था।

वह कूदता भी, पर उसे ध्यान आया

कि कोई देख न ले। कोई-न-कोई तो आसपास होगा ही। कोई आता-जाता सिपाही, या लड़कों में से कोई। इसलिए अपने हर्ष की अभिव्याप्ति को आकाश में विस्तृत करने का इधर-उधर घूमने के अतिरिक्त दूसरा उपाय नहीं था।

वह घूमने लगा। उसका प्रत्येक कदम उद्वत तथा साटोप था-सीना तना हुआ, सिर ऊंचा उठा हुआ, टांगे तनी हुई, मानो वे लकड़ी की बनी हुई हों। इस क्षण उसकी कटि की कुरूप चाल एक गर्वीले योद्धा की आजमयी गति में बदल गई थी।

फिर उसे आत्मा-बोध हुआ-'यह क्या मूर्खों की भांति अकड़कर घूम रहा हूं!' वह झेंपकर अचानक रूक गया। हाल ही का कारण किया उसका आत्म-विश्वास चूर-चूर हो गया।

वह फिर अधीर हो गया। उसकी उत्कट अभिलाषा हुई कि कोई तो आकर उसके एकाकीपन को दूर करे। कोई सिपाही आ जाए तो उसे देखे ही। कोई लड़का आ जाए तो उसे अपनी स्टिक दिखाए। क्या ही अच्छा हो यदि छोटे आ जाए और स्टिक को देखे, या रामचरन। 'पर नहीं, रामचरन को नहीं दिखाऊंगा। नहीं तो वह जाकर ऐसी ही स्टिक मांगेगा और हवलदार को परेशान करेगा। हवलदार ने तो कहा था कि मैं किसी से न कहूं। यदि रामचरन ने जाकर स्टिक मांगी तो वह रूष्ट होंगे।' बाबू के दोनों लड़के आ जाएं तो अच्छा है। उनके पास गेंद भी है। बड़े लड़के ने उसे अंग्रेजी पढ़ाने का भी वादा किया था। खेल प्रारम्भ होने से पहले शायद वह उसे पाठ पढ़ा सके। उसकी इच्छा थी कि कोई तो आ जाए-उसके मस्तिष्क की पूर्ति करने के लिए, जो सूख गया था, अचानक सुन्न हो गया था।

फिर वह निरर्थक घूमने लगा। उसके अंग अब शिथिल थे। वह भूला-भूला-सा इधर देखता था, कभी उधर। अन्त में उसे बाबू का लड़का दिखाई दिया, छोटे वाला, अपने घर की दहलीज में से सरपट भागा आता हुआ छोटे-से हाथ में बड़ी स्टिक लिये, मुंह में मांस चबाता और कुरते के पल्ले में मिठाई बांधे। बक्खा को ज्ञात था कि वह छोटा लड़का हॉकी खेलने को कितना उत्सुक हैं वह बच्चे की तरफ बढ़ा उसकी सरल गति अपनी ही स्थिति के ज्ञान से कुरूप हो रही थी और उसके मुख पर दास्य मुस्कान थी। वह बाबू के लड़कों को पसन्द करता था, उनका आदर भी करता था, न केवल इसलिए कि वे ऊंची जाति के हिन्दू थे जिनका आदर एक भंगी के लड़के को करना ही पड़ता, वरन् इसलिए भी कि उनका पिता पल्टन में असाधारण गौरव के पद पर स्थित था, स्वयं कर्नल साहब से लगभग दूसरे नम्बर पर।

"हां, तैयार हूं," बक्खा ने मुस्कान के साथ उत्तर दिया। बच्चे के आवेश को देखते हुए और यह जानते हुए कि वह मैच में नहीं खिलाया जाएगा जो मूक सहानुभूति उसके प्रति उसने अनुभव की उसका तनिक भी आभास प्रकट नहीं होने दिया। उसे छोटा लड़का बहुत पसन्द था-कैसा उत्साह और आवेश से छलाछल भरा हुआ!

छोटा लड़का उद्दाम आवेश के हाव-भाव के साथ उसके पास आया, और बोला-'देख मेरी नयी स्टिक, जिसके विषय में मैं सुबह कह रहा था। चरतसिंह ने मुझे दी है।"

"ओहो! है तो बड़ी सुन्दर!" बक्खा ने टीका की। "पर" उसने ठिठोली में कहा, "मेरी स्टिक देख, तेरे से भी बढ़िया है। ही-ही! मेरी तेरी से अधिक सुन्दर है।"

"देखूं जरा! छोटा लड़का बोला।

बक्खा ने उसे स्टिक दे दी।

"अरे यह तो बिल्कुल वैसी ही है!" बच्चा चिल्लाया।

बक्खा ने सोचा, 'चरतसिंह ने उसके साथ कुछ विशेष अनुग्रह नहीं किया था, पर अनुग्रह तो था ही। बाबू के लड़के तो बाबू के ठहरे। उन्हें तो स्टिक वह देता ही। पर मुझे, एक भंगी को, उसने स्टिक दी, यह तो आसाधारण ही अनुग्रह है।'

"क्या तू मैच के लिए तैयार है? ओ बक्खा!" बच्चा बोला, मानो वह भरपूर कप्तान ही हो।

"हां, तैयार हूं," बक्खा ने मुस्कान के साथ उत्तर दिया। बच्चे के आवेश को देखते हुए और यह जानते हुए कि वह मैच में नहीं खिलाया जाएगा जो मूक सहानुभूति उसके प्रति उसने अनुभव की उसका तनिक भी आभास प्रकट नहीं होने दिया। उसे छोटा लड़का बहुत पसन्द था-कैसा उत्साह और आवेश से छलाछल भरा हुआ!

"तेरा बड़ा भाई कहा है?" बक्खा ने बच्चे से पूछा।

"वह भोजन समाप्त कर रहा है। अभी आता ही होगा। मैं जाकर स्टिकें और गेंद ले आऊँ। लड़के आते ही होंगे।" और वह झट घर को उड़ गया। बक्खा सटपटाया-सा खड़ा ही रह गया।

'बेचारा छोटा लड़का! और वे उसे खिलाएंगे नहीं। वह कितना उत्सुक है! बड़ा होने पर यह असाधारण पुरूष होगा। शायद कोई बड़ा बाबू या साहब! उसकी आंखों में कैसी चमक है!............'

"ओ रे, बक्खे" किसी ने उसके विचारों में बाध दी।

उसने मुड़कर देखा-आगे-आगे छोटे और रामचरन, पीछे-पीछे और अनेक लड़के: बन्दूकची के बेटे न्यामत और अस्मत, दरजी का बेटा इब्राहीम, बाजे वाले के बेटे अली, अब्दुल्ला, हसन, हुसैन; और

भीड़-की-भीड़ अजनबी बच्चे जो शायद इक्तीसवीं पंजाबी पल्टन के लड़के थे। बक्खा उनकी ओर बढ़ा। छोटे उनके पास भाग कर आया और उसके कान में फुसफुसाया, "मैंने उनसे कह दिया है कि तू साहब के बैरे का लड़का है। उन्हें यह नहीं मालूम कि तू भंगी है।"

"अच्छा!" बक्खा ने अनुमति दी। उसे ज्ञात था कि यह इक्तीसवीं पंजाबी पल्टन के कट्टर लड़कों को सान्त्वना देने के लिए है कि भ्रष्ट नहीं होंगे।

"देख, मेरे कैसी बढ़िया स्टिक है!" बक्खा बोला और अपने मित्र को स्टिक दिखायी। फिर बोला, "रामचरन को मत बताना! चरतसिंह ने मुझे दी है। इससे तो मैं अनगिनत गोल बनाऊंगा।''

"वाह! खूब! बढ़िया! क्या कहने!" छोटा चिल्लाया। "साले, तू बड़ा किस्मत वाला है!" उसने बक्खा की पीठ ठोंकी और उसके मोटे ओवरकोट में से धूल का छोटा बवण्डर उड़ा दिया।

"लड़को, तैयार हो जाओ!" वह मुड़कर चिल्लाया।

जब टीम के चुनाव का समय आया तो बाबू के छोटे लड़के ने छोटे के पास लाकर स्टिकों का ढेर लगा दिया और अपने पारितोषिक की प्रतीक्षा की। पर छोटा तो पहले ही ग्यारह खिलाड़ी चुन चुका था।

"इस बच्चे को भी खिला ले!" बक्खा ने उसका पक्ष लेते हुए कहा।

"नहीं, वह दिक करेगा," छोटे ने कान में कहा। "उसे नहीं खिला सकते। बढ़े लड़कों से मैच है। वह चोट खा जाएगा और फिर उत्पात खड़ा होगा।"

बक्खा अधिक आग्रह नहीं करना चाहता था। उसे ज्ञात था कि छोटे और उस लड़के में पटती नहीं थी। वह तो दोनों को ही समान रूप से चाहता था, इस कारण असहाय था। उसे यह बुरा लग रहा था कि छोटे लड़के की कोई भी चिन्ता नहीं करता, सिवाय उसके बड़े भाई के, जो उसे सान्त्वना दे रहा था कि "आज तो बड़ा भारी मैच है, ऐसे बड़े-बड़े लड़के खेलेंगे कि शायद मेरा भी नम्बर न आवे।"

अपने भाई की सान्त्वना तथा बक्खा की मुस्कान के मित्रभाव ने बच्चे की निराशा को अधिक सुगमता से सह्य बना दिया। परित्यक्त तथा असहाय उसने मैच में रूचि लेने के उद्देश्य से रैफरी पद के लिए अपने को प्रस्तुत किया, पर छोटे ने उसे रैफरी भी नहीं बनाया। अब वह सचमुच बहुत खिन्न हुआ। मैच प्रारम्भ हो चुका था। हॉकी के मैदान के एक और जो लड़कों के कपड़ों का ढेर था उसके पास वह खड़ हो गया। क्यों न वह छोटे के बराबर खड़ा हुआ! तब तो उसे खिलाया जाता और तब तो वह औरों की तरह नेकर भी पहन लेता! और तब तो वह बिलकुल साहब बन जाता, क्योंकि वह छोटे की तरह काला थोड़े ही था।

"वाह! खूब! बढ़िया! क्या कहने!" छोटा चिल्लाया। "साले, तू बड़ा किस्मत वाला है!" उसने बक्खा की पीठ ठोंकी और उसके मोटे ओवरकोट में से धूल का छोटा बवण्डर उड़ा दिया।

"लड़को, तैयार हो जाओ!" वह मुड़कर चिल्लाया।

बक्खा एक पल के लिए आया और अपना ओवरकोट उतारकर छोटे लड़के के पास फेंक गया। पहले वह उसे बिना उतारे ही खेलने लगा था।

"जरा इस पर निगाह रखना, छोटे भैया!" उसने बच्चे से कहा, मानो यह कार्य उसे सौंपकर उसके टीम में न लिये जाने पर उसे सान्त्वना दे रहा हो। फिर भाग कर अपनी जगह चला गया।

छोटे लड़के का मन इस समय रोने को कर रहा था। पर खेल चल रहा था......... ..बक्खा गोल करने वाला था।

विचित्र दृश्य था। लड़कों की भीड़ मैदान में टिड्डी की तरह इधर-उधर फुदक रही थी। उनके खेल में कोई संगठन नहीं था। बक्खा खिसकाता-बचाता हुआ गेंद को विरोधियों के गोल तक ले गया। किन्तु तब वह जाल में पकड़ा गया, गोल के रक्षकों की भीड़ ने उसे चारों तरफ से घेर लिया। वे सब चीख रहे थे, झगड़ रहे थे और गेंद को बाहर फेंक देने के प्रयत्न में संलग्न थें पर बक्खा सब के पैरों के पास से गेंद को निकालता हुआ गोल के डंडों के बीच फेंद देने में सफल हुआ।

वरिष्ठ कौशल के सम्मुख पराजित होकर-कीपर ने द्वेषवश बक्खा की टांगों में स्टिक मारी। इस पर छोटे रामचरन, अली, अब्दुल्ला और अड़तीसवीं डोगरा के सब लड़के इकत्तीसवीं पंजाबी के गोल-कीपर पर टूट पड़े।

खुल्लमखुल्ला लड़ाई छिड़ गई।

"फाउल! फाउल!" इकत्तीसवीं पंजाबी टीम का कप्तान चिल्लाया।

"कोई फाउल नहीं! कोई फाउल नहीं!" छोटे ने क्रोध में पूरा ऊंचा तन कर खड़े हो कहा।

इकत्तीसवीं पंजाबी का कप्तान भीड़ को चीरता हुआ गरमी में आगे बढ़ा और छोटे का कालर पकड़ लिया। फिर एक बार लड़के लड़ने, खरोंचने, स्टिक मारने, ठोकर मारने-चीखने में व्यस्त हो गए। एक, दो तीन, चार, पांच, सब छोटे-छोटे हाथ स्टिकें घुमाने लगे, कठोरता से, स्थूलता से, ओजस्विता से। इस झुण्ड का उत्क्रोश उत्तेजना की ऐसा पराकाष्ठा को पहुंचा कि हिम्र आखेटकों की क्रूरता उनमें प्रतिबिम्बित होने लगी। छोटे ने भी अपने विरोधी को

कन्धे से कसकर पकड़ लिया। थोड़ी देर तक दोनों में जंगलियों की भांति भयंकर कुश्ती हुई, एक-दूसरे के कपड़े फाड़ डाले, खूब आपस में घूंसे लगाये। छोटे के आक्रमण को न सह पाने पर तो उसका विरोधी अपने साथियों समेत कुछ गज पीछे हट गया।

"पत्थर फेंको इन पर पत्थर," छोटे चिल्लाया।

इस पर अड़तीसवीं डोगरा के सब लड़के अपने विरोधियों से पृथक् एक ओर भाग आए और उन पर छोटे-छोटे पत्थर फेंकने लगे।

अपनी विकट उत्तेजना में उन्होंने यह भी नहीं देखा कि छोटा लड़का कपड़ों के पास खड़ा था, ठीक उनके ओर विरोधियों के बीच, और पत्थरों की बमबारी का पूरा भार उसे ही मिल रहा था। अधिकतर तो बच्चे के सिर से ऊंचे निकल गए और भयत्रस्त होते हुए भी वह सकुशल था। परन्तु रामचरन के हाथ की एक गलत फेंक ठीक उसकी खोपड़ी पर तीव्र प्रहार कर गई। उसके मुंह से एक तीक्ष्ण, चीरती हुई चीख निकली और वह बेहोश होकर गिर पड़ा। सब लड़के उसके पास भाग आए। उसके सिर के पिछले भाग से रक्त की धारा बह चली। बक्खा ने उसे गोद में उठा लिया और उसके घर की दहलीज की ओर ले चला। उसके दुर्भाग्य से बच्चे की मां ने कोलाहल सुन लिया था और अतार्किक रूप से देखने आयी थी कि उसके बच्चे भी सकुशल हैं। वहीं ठीक बक्खा के सामने पड़ी।

"अरे हरामखोर, नापाक भंगी!" वह चिल्लायी, "तूने मेरे बच्चे को क्या कर दिया?"

बक्खा मुंह खोल ही रहा था कि उसे पूरी घटना सुना दे। किन्तु पूछते-पूछते ही, उसके बच्चे के सिर से बहते रक्त की फुहार ने, तथा उसके रक्तहीन पीले बेहोश चेहरे ने सब बता दिया।

"अरे हरामखोर, तूने क्या किया? तूने तो मेरे बच्चे को मार ही डाला!" छाती पर दुहत्तड़ मारकर, भय के मारे नीली और लाल पड़ती हुई वह रोने लगी। "मुझे दे उसे! मुझे दे मेरे बच्चे को! मेरे बच्चे को तो घायल किया ही, तूने तो मेरे घर को भी भ्रष्ट कर डाला!"

"मां, मा! तुम क्या कर रही हो?" उसका बड़ा लड़का बाधा देता हुआ बोला, "उसका कुछ दोष नहीं है। उसने इसे घायल नहीं किया वह तो धोबिन का लड़का रामचरन था।"

"दूर हट, दूर हट, कमबक्त!" वह उस पर भी चिल्लायी। "नासपीटे," तूने अपने छोटे भाई की रखवाली क्यों नहीं की?"

"अरे हरामखोर, तूने क्या किया? तूने तो मेरे बच्चे को मार ही डाला!" छाती पर दुहत्तड़ मारकर, भय के मारे नीली और लाल पड़ती हुई वह रोने लगी। "मुझे दे उसे! मुझे दे मेरे बच्चे को! मेरे बच्चे को तो घायल किया ही, तूने तो मेरे घर को भी भ्रष्ट कर डाला!"

बक्खा ने बच्चा उनके हाथ में दे दिया और भयभीत दलित तथा निर्जीव-सा मूक पीछे हट गया। वह अत्यन्त निराश तथा परम विपण्ण हो गया। क्या चरतसिंह के अनुग्रह की प्रसन्नता आधा ही घण्टा रहनी थी। ऐसे कटु व्यवहार का भागी वह क्यों बनाया गया था! उसे तो बच्चे से बड़ा प्रेम था। वह तो बड़ा खिन्न हुआ था जब छोटे ने उसे नहीं खिलाया था। उसने तो दयालू होने का प्रयत्न किया था फिर लड़के की माता ने उसे गालियां क्यों सुनायीं? उसने तो उसे घटना सुनाने का भी अवसर नहीं दिया। 'इतना तो अवश्य था कि मैंने बच्चे को छू दिया। न छूता तो उठाकर यहां तक कैसे लाता! यह मैं जानता था कि मेरे छूने से वह अपवित्र हो जाएगा। पर यह भी कैसे सम्भव था कि मेरे छूने` वह अपवित्र हो जाएगा। पर यह भी कैसे सम्भव था कि मैं उसे न उठाता? वह बेचारा बच्चा बेहोश पड़ा था। और उन्होंने मुझे गालियां दी! जहां भी जाता हूं, वहीं मुझे अपमान और गालियां मिलती है। भ्रष्ट! भ्रष्ट! सिवाय लोगों को भ्रष्ट करने के मैं कुछ और करता ही नहीं! बच्चे की मां ने तो जो किया सो शायद ठीक ही किया। उनके बच्चे के चोट लगी थी। वह तो चाहे जो कह लेतीं। मेरा और सारे ही लड़कों का दोष था। हमने झगड़ा क्यों प्रारम्भ किया? मेरे गोल करने पर ही तो यह बवण्डर खड़ा हुआ। अभागा मैं! बेचारा बच्चा! उकसे चोट अधिक तो नहीं आई! यदि छोटा उसे मैच में खेलने लड़के कहां चले गए?'

पहली बार ही उसे ध्यान आया कि वह अकेला ही चल रहा था। उस ने चारों ओर देखा। तीसरे पहर के मन्द प्रकाश में भंगियों की गली की पड़ती जमीन की चिड़िया भी उस पर दोषारोपण करती हुई चाचहा रही थीं। अकथनीय थकान के एक आकस्मिक कम्पन के साथ उसने अपनी बगल में दवाई स्टिक को कसकर हाथों में पकड़ लिया और एक बटिया पर को मुड़ लिया जो सूखे अखरोट के पत्तों में को होती हुई उसके घरजा निकलती थी। ■

(इंडिया बुक सेन्टर, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'अछूत' से साभार)

(शेष अगले अंक में)

सामाजिक परिवर्तन पर डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण

■कु. सुमति

व्यक्ति का जन्म उसके बस की बात नहीं है उसके पैदा होते ही उससे ....जुड़ जाते हैं। इनसे उनकी मुक्ति नहीं होती है। लेकिन कर्म ही उसके जीवन को बनाता-बिगाड़ता है कार्य करने की योग्यता, उसका कर्म या तो उसे अपयश की खाई में गिराता है या उसे ख्याति के उच्च शिखर पर पहुंचाने का सौभाग्य प्रदान करता है। रूस एवं अमेरिका के राष्ट्रपति स्टालिन और अब्राहम लिंकन ये दोनों महापुरूष एक साधारण परिवार में पैदा हुए। लेकिन दोनों के विकास में सामाजिक गुलामी की बेड़ियों ने बाधा नहीं पहुंचायी। डॉ० अम्बेडकर अस्पृश्य मानी जाने वाली महार जाति में जन्में, उनके लिए जन्म से ही सामाजिक वातावरण लिंकन और स्टालिन से विपरीत था, लेकिन उन्होंने इस देश के जन जीवन में जो क्रान्ति पैदा की उसकी कोई मिसाल नहीं है। उन्होंने हजारों वर्षो से हिन्दू धर्म द्वारा मान्य अस्पृश्यता को कानून के बल पर नष्ट कराया उन्होंने इस देश में जन-जन में निर्माण किये गये भेदों को मिटाकर समान अधिकारों को स्थापित करने वाला संविधान प्रदान किया और ढ़ाई हजार वर्षो के बाद पहली बार प्रजातन्त्र के मूल्यों की नींव रखी। ऐसे अभूतपूर्व व्यक्तित्व के धनी डॉ० अम्बेडकर का जीवन जितना रोमहर्षक और संघर्षमय है, उतना ही वह शिक्षाप्रद भी है।

डॉ० अम्बेडकर समाज के दिशादर्शक तो दूसरी ओर समत्व धर्म के समर्थक, मानवीय मूल्यों के उपासक दलितों, निर्बलों और कमजोर वर्ग के मसीहा भी। जीवन पर्यन्त उन्होंने एक क्रान्तिकारी योद्धा, समाज

- सुधारक के रूप में अनवरत संघर्ष किया, प्रारम्भ से अन्त तक तिरस्कार, उपेक्षा, अपमान, घुटन, पीड़ा और असन्तोष ही प्राप्त किया। लेकिन उन्होंने अपने जीवनकाल में कभी हार नही मानी, न किसी के सामने घुटने टेके।

विलक्षण बुद्धि, चिन्तनशील विचारक, बहुमखी प्रतिमा सम्पन्न इस महान विभूति का जन्म 14 अप्रैल 1891 को महू छावनी (इन्दौर) मध्य प्रदेश में हुआ था। पिता श्री राम जी राव सकपाल, माता भीमाबाई के चौदहवें रत्ने थे-भीमराव राम जी अम्बेडकर। अम्बेडकर का जन्म ऐसे समय में हुआ जब अछूत वर्ग के लिए पढ़ना-लिखना दुलर्भ ही नहीं असम्भव भी था। बाबा को महार जाति का होने के कारण स्कूल में एक अंग्रेज अफसर की सहायता से प्रवेश मिला दिनभर भूखा, प्यासा रहकर स्कूल के बच्चों से अलग रहकर शिक्षा प्राप्त की उस समय अस्पृश्य समाज की दैयनीय स्थिति और शिक्षा के प्रति उनकी उदासीनता पर यदि गौर किया जाये तो रामजी सूबेदार जिस लगन और उत्साह के साथ भीमा को बी०ए० तक बढ़ाया वह सचमुच प्रशंसनीय है। जब व्यक्ति की बुद्धिमता और निपुणता को विस्तृत क्षेत्र मिलता है तो वह किस प्रकार खिल उठता है इसका अन्दाजा भीमराव के भावी जीवन से दृष्टिगोचर होता है। अनेकों कठिनाईयों का सामना करते हुए एम०ए०, पी०एच०डी०, डी०एस०, डी०लिट और बार एण्ड लॉ की डिग्री अपनी प्रखर बुद्धि, कठिन परिश्रम और लगन के फलस्वरूप विपरीत सामाजिक परिस्थितियों का सामना करते हुए लंदन और अमेरिका से प्राप्त की वे प्रतिदिन लगातार 18 घण्टें अविराम साधना में लीन रहते थे।

महार जाति में जन्म देने के कारण उन्हें पग-पग पर अनेकों कठिनाइयों को सामना करना पड़ रहा था। बड़ौदा नरेश के इकरार नामें के अनुसार हासिल करने के बाद वह बड़ौदा रियासत में नौकरी करेंगे। उनके बड़ौदा पहुंचने पर उनकी आगवानी करने कोई नहीं आया, रियासता का कोई अधिकारी स्टेशन पहुंचता तो उसका स्वागत

किया जाता। महान जाति का होने के कारण उन्हें सारे शहर में भटकना पड़ा कहीं रहने को कोई स्थान नहीं मिला बगैर जाति बताए एक पासी होटल में रूके जाति पता होने पर तुरन्त होटल से निकलना पड़ा। बड़ौदा नरेश की इच्छा थी कि वे उन्हें (अम्बेडकर) को अपनी रियासत का अर्थ मंत्री बनाएं, फिर भी प्रशासनिक सचिव बनाया, वहां के चपरासी, कर्मचारी उनकी फाइल फेंक देते जब वे अपनी कुर्सी से उठकर घर के लिए जाते तो बिछी दरी को भी धोया जाता वे अपमान का घूंट पीकर वहां कार्य कर रहे थे। एक दिन वह भटकते-भटकते एक पेड़ की छांव में जा बैठे, उनकी आंखों से गंगा-जमुना वह निकली वह दहाड़ मारकर रो पड़े कैसी दशा है हिन्दू समाज के अस्पृश्य की कि वह कितनी भी पढ़ाई कर ले वह हीन से हीन व्यक्ति समझा जाता है।

21, मार्च, 1926 को कोल्हापरु में शाहू जी महराज ने कहा आप लोगों को अम्बेडकर के रूप में उद्धार करने वाला मिल गया है वह आपकी बेड़ियों को तोड़कर रहेगा इस बात का मुझे पुरा भरोसा है केवल इतना ही नहीं भारत के महान नेताओं की श्रेणी में इसका विशिष्ट स्थान रहेगा। हिन्दू समाज में अश्पृश्यों की दयनीय दशा पर डॉ॰ अम्बेडकर ने कहा-जब तक देश का इतना बड़ा वर्ग दीन हीन दशा में पंगु बना हुआ है। तब तक यह सारा देश भी दीन हीन हालत में रहेगा। इसलिए अपने और पराये समाज के लोगों को इस दलित समाज की उन्नति के लिए जी जान से कोशिश करना चाहिए तभी देश की दुर्दशा का अन्त हो सकेगा। 11 अप्रैल, 1925 में मुम्बई में अपने भाषण में उन्होंने कहा-फ्रांस और अमेरिका में गुलाम प्रथा के विरूद्ध चल रहे जन संघर्ष में वहां हजारों लोगों ने अपने प्राणों की आहूति दी और आज नई पीढ़ी इस बलिदान के मधुर फलों का आनन्द ले रही है। यदि आज हम कुर्बानी देते हैं तो इसका फायदा आने वाली पीढ़ी को मिलता है।

डॉ॰ अम्बेडकर ने 1923 को एक महात्वपूर्ण प्रस्ताव रखा उस प्रस्ताव के अनुसार नदी, तालाब, कुएं, स्कूलों, दवाखाना, शिक्षाकेन्द्रों, न्यायालयों तथा सामाजिक स्थानों पर अस्पृश्यों के प्रवेश पर कोई प्रतिबन्ध नहीं हो डॉ॰ अम्बेडकर ने कहा पानी पीने का अधिकार मानवीय मूल्य हैं पहाड़ तालाब की पहाड़ की नगर पालिका से प्रस्ताव पास करवाया नगर पालिका ने कहा यह तालाब सार्वजनिक है। इसका पानी अस्पृश्यों समेत सभी जन उपयोग में लाने के लिए मुक्त है। 1927 में अम्बेडकर ने कहा-कुलीनता और हीनता की भावना समाप्त की जाए अछूतों को चाहिए कि वे स्वालम्बन, स्वाभिमान और स्वविवेक के बल पर ऊंचे उठें।

1928 में साइमन कमीशन के आगे गवाही देकर यह सफलता भी हासिल की 1929 में बहिष्कृत भारत और अन्य समाचार के माध्यम से जन जागृति के लिए अविरल निष्ठा से और पूरी कर्त्तव्य दक्षता के साथ सारी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उन्होंने 3 साल तक यह अखबार चलाया उन्होंने कह - धर्म इंसान के लिए या इन्सान धर्म के लिए अगर अस्पृश्य समाज अत्याचार का रास्ता नहीं अपनाता है तो हम भी वैसा ही व्यवहार करेंगे नहीं तो हम समाजस्य छोड़ जैसे को तैसा व्यवहार इस तत्व का अनुसरण करेंगे सच्चे हिन्दू तो हम समाजस्य छोड़ जैसे का सच्चा रहस्य हमें ही परिवर्तन लाने की ओर हमारा पहला कदम है हमें सब तरफ समता स्थापित करनी है। मैं प्रजातन्त्र वादी हूं, लेकिन एक समाज दूसरे समाज पर जुल्म ढाये, मैं इसका कट्टर विरोद्धी हूं।

राजकीय अधिकारियों के खरीते में डॉ॰ अम्बेडकर ने अस्पृश्य समाज को समान अधिकार, नागकरिकता के मानवीय अधिकार, जातिवादी पक्षपात भरे व्यवहार से उनका प्रतिनिधित्व, रूढ़िवादी धाराओं के कारण अस्पृश्यों के साथ जो व्यवहार किया जा रहा है इससे उनकी सुरक्षा, केन्द्रीय सरकार में अस्पृश्यों की भलाई की ओर देखने वाला विभाग और गर्वनर जनरल द्वारा स्थापित मंत्रिमंडल में प्रतिनिधित्व ये सारी मांगें प्रस्तुत की। 1931 में लन्दन से मुम्बई आने पर डॉ॰ अम्बेडकर ने पत्रकारों से कहा - यह गोलमेज परिषद बढ़िया राजनीति की विजय है लेकिन मुझे मतदान का मर्यादित अधिकार पसंद के अधिकार सुरक्षित रहेंगे। जिस देश में कुत्ते, बिल्ली जैसी जिन्दगी जीना भी नसीब नहीं होता या जिसके हिस्से में उतनी भी सहानुभूति नहीं आती जो जानवरों को मिल पाती है। यह शब्द उन्होंने इसलिए कहे क्योंकि गांव जाते समय दोनों भाइयों को चरही तक पानी नहीं पीने दिया गया था। जिसमें जानवर पानी पीते थे। 14 अगस्त को मुम्बई के जहांगीर हाल में अपने कलेजे की कसक को वाणी देते हुए दलित महिलाओं से कहा - अपनी गुलामी का अन्त करने के लिए अगर आप सब पक्का इरादा कर लें और

21, मार्च, 1926 को कोल्हापुर में शाहू जी महाराज ने कहा आप लोगों को अम्बेडकर के रूप में उद्धार करने वाला मिल गया है वह आपकी बेड़ियों को तोड़कर रहेगा इस बात का मुझे पूरा भरोसा है केवल इतना ही नहीं भारत के महान नेताओं की श्रेणी में इसका विशिष्ट स्थान रहेगा।

डटकर मुकाबला करने के लिए खड़ी हो जायें तो फिर हमारी सारी मेहनत का श्रेय आपको ही मिलेगा। वहीं पुरूषों को सम्बोधित किया – आप सब का प्रेम हमेशा प्रेरणा देता रहेगा। इस गोलेमेज परिषद में 125 सदस्यों में हम केवल 2 ही सदस्य थे, लेकिन आपके अधिकारों के लिए हम जमीन आसमान एक कर देगें। बिना संघर्ष किये न सत्ता प्राप्त हो सकती है, न प्रतिष्ठा ही।

डॉ॰ अम्बेडकर ने चेतावनी देते हुए कहा– इन रियासत वालों की मांगे हम मंजूर नहीं करेगें। इन रियासत के हुक्मरानों को यह गारन्टी देनी होगी कि वे सर्व साधारण जनता को सभ्य एवं सुसंस्कृत जीवन जीने के लिए जरूरी जरूरतों को जनता के प्रतिनिधियों को स्थान देना चाहिए नामजद करने का तरीका एक जिम्मेदार सरकार के उसूलों के खिलाफ है। डॉ॰ अम्बेडकर की इस स्पष्ट वादी भूमिका ने राजा महाराजा और नबाबों के चेहरे फक कर दियें। डा॰ अम्बेडकर भारत के एकमात्र ऐसे नेता थे जिन्हें गांधीजी भी अपने महात्मापन की आभा से चकाचौंध नहीं कर पाये। इग्लैंड के सम्राट ने 5 नवम्बर 1931 को गोलमेज परिषद के प्रतिनिधित्व को भोज पर आमंत्रित किया उस समय डॉ॰ अम्बेडकर की जुबानी भारतीय दलितों की कहानी सुनकर सम्राट का दिल पसीज गया। जब डॉ॰ अम्बेडकर को 114 संस्थाओं ने सम्मान दिया तो उन्होंने अपनी सारी सफलताओं का श्रेय जनता को दिया और कहा हिन्दू समाज की भावी पीढ़ी यही फैसला देगी कि मैंने अपने देश के लिए सही और नेक काम किया है। जब भावी इतिहासकार बिना भाववेश के गोजमेज परिषद की समूची कार्यवाही का विश्लेषण करेंगे तो वे मेरी राष्ट्र सेवा पर गौरव ही करेंगे। मैं इस बात को विशेष महत्व देता हूं कि मेरे दलित बन्धवों की मेरे उद्देश्यों पर सुदृढ़ श्रद्धा है। मुझे न ही निन्द की परवाह न तोहमत की।

डॉ॰ अम्बेडकर ने अपने प्रतिवेदन में जो सुझाव और मांगे पेश की है उन्हें यदि देश के संविधान में समाविष्ट नहीं किया गया तो अस्पृश्य समाज उस संविधान को स्वीकार नहीं करेगा। उन्होंने सारगर्भित बात कही इस देश में अनेक महात्मा कल्याण के लिए जन्में और सिधार गये लेकिन अस्पृश्य समाज फिर भी जैसे का तैसा ही है। भगवान भरोसे जीना मत सीखो। 1933 में मझगांव में एक भाषण में कहा तिलक की तरह हमें भी गैरों से गालियां और अपनों से गौरव मिलता है, जानवरों का मांस न खाइये इज्जत के साथ रहना सीखिए जो सघर्ष करते है। यह उनका ही वरण करता हैं दलितों का सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनैतिक क्षेत्र में अत्याचार एवं अन्याय सहन करने पड़े रह हैं।

डॉ॰ अम्बेडकर ने चेतावनी देते हुए कहा– इन रियासत वालों की मांगे हम मंजूर नहीं करेगें। इन रियासत के हुकमरानों को यह गारन्टी देनी होगी कि वे सर्व साधारण जनता को सभ्य एवं सुसंस्कृत जीवन जीने के लिए जरूरी जरूरतों को जनता के प्रतिनिधियों को स्थान देना चाहिए नामजद करने का तरीका एक जिम्मेदार सरकार के उसूलों के खिलाफ है। डॉ॰ अम्बेडकर की इस स्पष्ट वादी भूमिका ने राजा महाराजा और नबाबों के चेहरे फक कर दियें।

डॉ॰ अम्बेडकर ने प्रतिज्ञा ली – ''मैं हिन्दू धर्म में पैदा हुआ यह मेरे वश की बात नहीं थी, लेकिन मैं हिन्दू धर्म में रहकर मरूंगा नहीं।'' उन्होंने कहा – महत्वाकांक्षा और आशीर्वाद को अंगीकार करने से ऊंची स्थिति को पहुंचा जा सकता है। जिसने अपने दिल में उम्मीद उमंग और ख्वाहिश की लौ लगा ली है वह हमेशा जिन्दा दिल रहता है। अपने चरित्र को बढ़ाना उसका संविधान करना, जीवन का परम कर्त्तव्य है, पुरानी रूढ़ियों को दफन दो। नय ही कलम से नया सबक लिखो, हमेशा आशावान बनों मेहनत और कुर्बानी से ही फर्ज पूरा होता है। इंसान की भली प्रथाओं से ही राष्ट्र और समाज बलवान और भाग्यशाली होते है। उन्होंने कहा दलित समाज की भलाई के लिए राज्य विधान का अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करने का हमारा संकल्प है। अपने जीवन में उच्च उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए हर व्यक्ति को आठो पहर लगन से प्रयत्नशील रहना चाहिए उन्हें सामाजिक परिवर्तन के लिए लगातार कर्मशील रहना चाहिए। शिक्षा एक दुधारी तलवार की तरह है। उन्होंने शिक्षित और सम्पन्न महारों को आदेश किया ऊंची जाति और ओहदे वालों से याचना मत करों अपने कानूनी अधिकारों के लिए लड़ों और उन्हें प्राप्त करो अब यहां अंग्रेजों का नहीं जनता का शासन है। अंग्रेज तो देश छोड़ जायेंगे लेकिन तुम्हें पूंजीपतियों और पुरोहितों का सामना करना है। मैं अपने समाज के

प्रति निष्ठा से जुड़ा हूं। मैं आखिरी सांस तक अस्पृश्य समाज को कभी दूर नहीं होने दूंगा।

05 जुलाई, 1942 को दिल्ली में डिफेंस काउन्सिल की मीटिंग में कहा मैं गरीबों में पैदा हुआ, पला और घूमा फिरा, इस गीली जमीन पर तख्ता डालकर सोया हूं। मैं उनके दु:खों को अच्छी तरह जानता हूं। मैं सभी के लिए पहले जैसा ही हूं। मेरे दिल्ली के बंगले के दरवाजे सबके लिए खुले है। अगर किसी इमारत की नींव कमजोर रही है। मजदूरों की समस्याओं और असुविधाओं को डॉ॰ अम्बेडकर ने बहुत निकटता से देखा था। मजदूरों के नेता ने भारतीय मजदूरों की भलाई के लिए मूलभूत सुधारकर कानून बनाने का मन में निश्चय कर कार्य प्रारम्भ किया 1942 में भारतीय स्वाधीनता के इतिहास में अस्पृश्य समाज की दृष्टि से यह वर्ष स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायेगा। हजारों साल की दासता के बाद पहली बार एक अस्पृश्य व्यक्ति को भारत की राजधानी में एक मंत्री पद पर नियुक्त किया। डॉ॰ अम्बेडकर ने कहा शिक्षित बनों, आन्दोलन चलाओ, संगठित रहो, मैं स्त्री समाज की प्रगति पर ही दलित समाज की प्रगति का मापदण्ड रखता हूं। महिलाओं के सहयोग के बिना कोई आन्दोलन सम्भव नहीं है। अस्पृश्य केवल समानता का अधिकार चाहता है। यदि अन्याय समाप्त न किया गया तो प्रत्यक्ष कार्यवाही का मार्ग अपनाया जायेगा। 20 जून, 1946 को डॉ॰ अम्बेडकर ने सिद्धार्थ कॉलेज की स्थाना की उसके लिए कर्त्तव्यनिष्ठ क्षमाशील शिक्षकों की नियुक्ति की।

13 दिसम्बर 1946 को संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद ने डॉ॰ अम्बेडकर से बोलने के विनती की डॉ॰ अम्बेडकर ने चारों ओर निहार कर धीर गम्भीर आवाज में धारा प्रवाह बोलते रहे उन्होंने कहा आज हम भले ही राजनैतिक सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से टूट गये हों फिर भी परिस्थित और समय अनुकूल होते ही हमारी एकता को कोई रोक नहीं सकेगा। भले ही आज मुस्लिम लीग हिन्दुस्तान के टुकड़े करने के लिए आन्दोलन चला रही है फिर भी एक ऐसा भी दिन उदित होगा जब वह भी महसूस करेंगे कि अखण्ड भारत ही हम सबके लिए हितकर है। उन्होंने कहा शासनाधिकार सौंपना तो सरल बात है मगर समझदारी देना कठिन बात है। सबको अपने साथ लेकर आगे बढ़ने और आगे चलकर हमारी एकता बलवान हो ऐसा मार्ग अपनाने की हममें क्षमता है, शक्ति है तथा बुद्धिमता है इसे हम अपने व्यवहार से शिद्ध करने का प्रयास करें।

लोकतंत्र में धार्मिक स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक समानता का होना भी आवश्यक है, सामाजिक एकता के अभाव में लोकतंत्र कमजोर हो जाता है। सामाजिक भेदभाव के कारण मानव-मानव के बीच की बढ़ती दूरी राष्ट्रीय एकता और सामाजिक प्रगति के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है।

लोकतंत्र में धार्मिक स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक समानता का होना भी आवश्यक है, सामाजिक एकता के अभाव में लोकतंत्र कमजोर हो जाता है। सामाजिक भेदभाव के कारण मानव-मानव के बीच की बढ़ती दूरी राष्ट्रीय एकता और सामाजिक प्रगति के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है। डॉ॰ अम्बेडकर ने जीवन भर अस्पृश्यता को समूल नष्ट करने का प्रयत्न किया, लेकिन अखबार वालों ने उनके नाम का कहीं भी जिक्र तक नहीं किया।

संविधान निर्माण करने का सारा भार अकेले डॉ॰ भीमराव अम्बेडकर को ही उठाना पड़ा। 2 वर्ष-11माह-18 दिन कठिन परिश्रम से पूरा किया। डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद ने उनके कार्यों का गौरवमयी उल्लेख किया है-अपनी गिरती हुई सेहत की परवाह न कर डॉ॰ अम्बेडकर ने अपनी कार्य निपुणता से केवल अपने चुनाव को ही सार्थक नहीं किया वरन् अपने पद को गरिमा प्रदान की है।

14 अक्टूबर 1956 को विजयदशमी के दिन डॉ॰ अम्बेडकर 10 हजार साथियों के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण किया देश भर में बौद्ध धर्म का पुन: प्रचार-प्रसार किया। भारत का एक अत्यंत प्रमुख नागरिक, महान समाज सुधारक, मानवीय अधिकारों का जुझारू प्रवर्तक, दलितों के मसीहा, संविधान के रचयिता 6 दिसम्बर 1956 को परिनिर्वाण को प्राप्त हुए। 1990 में डॉ॰ भीमराव अम्बेडकर सामाजिक परिवर्तन के प्रेरक और प्रतिक थे। उन्होंने मनुस्मृति को होकर विषमता को ललकारा और संविधान की सुरंग लगाकर उसे नष्ट करने का प्रयास किया। डॉ॰ अम्बेडकर का व्यक्तित्व तूफान के समान था उन्होंने हिन्दू समाज को सुधारने के लिए अपने विचारों द्वार भूकम्पी धक्के लिये उनका लेखन कार्य उन्हें स्थान दिलाते हुए धर्म पण्डितों के लिए एक चुनौती है। पं॰ नेहरू ने कहा- "डॉ॰ अम्बेडकर हिन्दू समाज की दमनकारी प्रवृत्तियों के विरूद्ध किये गये विद्रोह के प्रतीक थे"। बाबासाहेब को शत्-शत् नमन। ■

जीवन चरित्र - छठी किस्त

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर - जीवन चरित

■धनंजय कीर

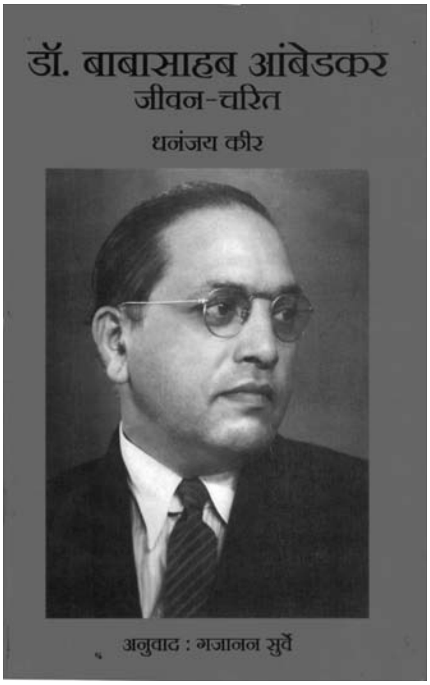

अध्याय 5
विद्रोह का झण्डा फहराया

सन् 1927 साल उदित हुआ। अम्बेडकर ने उस वर्ष का कार्यारंभ कोरेगांव युद्ध स्मारक के सामने एक सभा आयोजित करके किया। उस सभा में अस्पृश्य समाज के कुछ ख्याति-कीर्ति नेता उपस्थित थे। उस सभा में भाषण करते समय अम्बेडकर ने कृतघ्न ब्रिटिश सरकार का ज्वलंत शब्दों में विरोध किया। उन्होंने अपना मत साफ व्यक्त किया कि जिस महार जाति के सैकड़ों सैनिकों ने अनेक लड़ाइयों में सरकार को सफलता दिलायी, उस महार जाति के युवकों को सैन्य प्रवेश वर्जित कर सरकार ने उनके साथ विश्वासघात किया है। यह सच है कि ब्रिटिशों के पक्ष में रहकर महार सैनिक युद्ध करें, यह कोई विशेष गर्व की बात नहीं है; लेकिन वे ब्रिटिशों की मदद के लिए क्यों गये? वे इसलिए गए कि स्पृश्य हिन्दुओं ने उन्हें नीच मानकर उनके साथ कुत्ते-बिल्ली से भी बदतर बर्ताव किया। उन्होंने यह भी कहा कि पेट पालने का कुछ साधन न रहने से निरुपाय होकर वे ब्रिटिशों की फौज में भरती हुए। अपने भाषण के अंत में उन्होंने कहा कि, महारों पर लशकर में प्रवेश संबंधी रोक ब्रिटिश सरकार हटा दे। उन्होंने आवेश के साथ अपने समाज को यह चेतावनी दी कि अगर सरकार ने वह बात नहीं मानी, तो सरकार के खिलाफ आंदोलन खड़ा किया जाए।

यह दिखाई देता है कि नये वर्ष के प्रारंभ में अम्बेडकर के कर्तृत्व की और बढ़ती प्रतिष्ठा की सरकार ने सुधि ली होगी। सरकार ने उन्हें विधान परिषद् के सदस्य के रूप में नियुक्त किया। उस निमित्त अस्पृश्य समाज के अध्यापकों ने फरवरी, 1927 में एक सभा आमंत्रित करके अम्बेडकर का अभिनंदन करने का निश्चय किया और तद्नुसार आगे अप्रैल में परेल के दामोदर सभागृह में उनका सत्कार हुआ। उस सत्कार समारोह के अध्यक्ष बम्बई नगरपालिका के शिक्षा विभाग के एक अधिकारी सीताराम भिकाजी पेंडुरकर थे। वे निम्न वर्ग के लोगों की शिक्षा के लिए प्रयास करते थे। अम्बेडकर का हार्दिक अभिनंदन कर उन्होंने यह विश्वास प्रकट किया कि विधान सभा के कार्य में निश्चय ही उन्हें सफलता प्राप्त होगी। उन्होंने अस्पृश्य जनता को यह उपदेश किया कि अम्बेडकर का जीवित कार्य सफल करने के लिए अस्पृश्य समाज उन्हें असीम और मन:पूर्वक सहयोग दें। अपने कार्य के प्रति अभिमान रखने वाले उन अध्यापकों ने जो थैली उन्हें समर्पित की, वह उन्होंने बहिष्कृत हितकारिणी सभा के कार्य के लिए ही अर्पित की।

अम्बेडकर के दो-तीन साल के जन-जागृति के कार्य से अस्पृश्यों के स्वाभिमान का सूरज उदित हो रहा था। उन पर छाए हुए अपमान और उपेक्षा के बादल अब छंटने लगे थे। हीन भावना से ग्रस्त अपना सिर तनिक ऊपर करके वह अस्पृश्य वर्ग देखने लगा। अम्बेडकर के जीवित कार्य में एक बड़ी आपातकालीन घटना घटित होने का समय नजदीक आ गया। यह घटना थी महाड़ में अस्पृश्य समाज को अपने झण्डे के नीचे इकट्ठा कर मानवी अधिकार के लिए विद्रोह करने को प्रेरित करना।

सीताराम केशव बोले द्वारा बम्बई विधान परिषद् में पारित करवाया गया प्रस्ताव उस विद्रोह का तात्कालिक कारण बना। महाड़ नगरपालिका ने अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले चवदार तालाब उस प्रस्तावानुसार अस्पृश्यों के लिए खुला किया गया है-ऐसी घोषणा कर दी थी। परन्तु अस्पृश्य हिन्दुओं के भय से वहां के अस्पृश्य लोग उस तालाब का पानी ले जाने के अपने अधिकार का उपयोग नहीं करते थे। अस्पृश्यों के अधिकार और भविष्य के बारे में घाट-माथे पर परिषदों द्वारा विचार-विमर्श हुआ था। परन्तु उस विचार का आंदोलन में रूपांतरण करने की बारी अब आ गयी है, ऐसा समझकर अम्बेडकर और उनके सहयोगियों ने महाड़ में 19 और

20 मार्च को कुलाबा जिला बहिष्कृत परिषद् आयोजित करना तय किया। कोंकण विभाग पर बाबासाहेब को विशेष प्रेम-अभिमान था। वे अक्सर कहा करते थे कि, 'कुछ भी हो, मैं कोंकणी ही हूं।' वे जानते थे कि कोंकण के बुद्धिमान और कड़े निष्ठावान लोगों ने मानवी स्वतंत्रता का बिगुल बजाया तो युद्ध प्रज्वलित होगा ही।

सुरेन्द्रनाथ तथा सुरबा टिपणिस, सूबेदार विश्राम गंगाराम सवादकर, संभाजी तुकाराम गायकवाड, शिवराम गोपाल जाधव, अनंतराव चित्रे, रामचंद्र मोरे आदि नेताओं ने परिषद सफल बनाने के लिए अथक परिश्रम किये। हर एक देहात में परिषद् का प्रचार किया गया। इसी कारण कोंकणमाथा, बम्बई और नागपुर विभागों से प्रदंह साल के युवकों से पचहत्तर साल के बूढ़ों तक लगभग पांच हजार अस्पृश्य अपने साथ खाने के लिए रोटियां लेकर परिषद के लिए उपस्थित हुए। महाड़ के निचले भाग में, चवदार तालाब से करीब दो फर्लांग पर, बांस और झांप से बनाये मंडप में यह परिषद् संपन्न हुई।

परिषद् के उपयोग के लिए स्पृश्य हिन्दुओं से पानी मिलना मुश्किल होने से कार्यकर्ताओं को 40 रुपए खर्च करके पानी खरीदना पड़ा था। महाड़ के पु.प्र. तथा बापूराव जोशी, धारिया, तुलजाराम मिठादी आदि स्पृश्य नेता परिषद् में उपस्थित थे। सीतारामपंत शिवतरकर, गंगाधरपंत नी. सहस्रबुद्धे, अनंतराव चित्रे, भा.कृ. गायकवाड़, बालाराम अम्बेडकर, पा.न. राजभोज, शांताराम अ. उपशाम, रामचंद्र मोरे, रामचंद्र शिर्के इस परिषद् के लिए आये थे। परिषद् में अस्पृश्य महिलाएं बड़ी संख्या में उपस्थित थीं।

स्वागताध्यक्ष संभाजी गायकवाड़ के अभिभाषण से परिषद् के कार्य का श्रीगणेश हुआ। मैले-कुचैले कपड़े पहने उन दीन-दरिद्र बांधवों के प्रचंड समुदाय के सम्मुख बंगाली तरीके की धोती धारण किये और कुर्ता, कोट पहने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने सरल, सुबोध भाषण की शुरुआत की। हृदय के भीतर इक्‌ट्ठी हुई अतीत की अनेक यादों से अम्बेडकर का गला भर आया। अपने बचपन में देखी हुई, अनुभव की हुई, दापोली परिसर की परिस्थिति का करुण, गंभीर चित्र उन्होंने श्रोताओं के सम्मुख उपस्थित किया और कहा, 'हर एक को अपने मूल निवास-स्थान के बारे में भले ही अभिमान न हो, प्रेम होता ही है। मेरे पिताजी सेवानिवृत्त के बाद स्थायी निवास करने की दृष्टि से दापोली आकर रहे थे। मेरा पहला श्रीगणेश का पाठ मैंने दापोली के स्कूल में ही पढ़ा। परन्तु मैं पांच-छह साल का था, तब परिस्थितिवश घाट की तलहटी छोड़कर घाट-माथे पर गया। वहां मेरा आज तक का जीवन व्यतीत हुआ। पच्चीस साल बाद आज मैं घाट के नीचे उतर रहा हूं। जो प्रदेश प्रकृति की सुषमा श्रृंगारित है, उस प्रदेश में कदम रखने पर किसी को भी खुशी होगी। अपनी मातृभूमि के रूप में जो प्रदेश जिसे अपना लगता है, उसका आनंद दुगना हो तो उसमें कोई अचरज नहीं। लेकिन यह कहे बिना मैं नहीं रह सकता कि आज इस समय मुझे जितना आनदं हो रहा है, उतना ही खेद भी। यह कहने में कोई हर्ज नहीं कि एक समय ऐसी स्थिति थी जब यह प्रदेश अस्पृश्य जाति की दृष्टि से देखने पर काफी प्रगतिशील था। एक जमाने में अस्पृश्य लोगों से यह प्रदेश काफी भरा हुआ था। सफेद पोश लोगों के अतिरिक्त अन्य लोगों की तुलना में यहां का अस्पृश्य वर्ग ही शिक्षा में काफी आगे था।'

यह उन्नति जिस कारणों से हुई थी, उनमें लशकरी पेशा एक महत्वपूर्ण कारण था। यह कहकर अम्बेडकर ने आगे कहा,

''नॉर्मल स्कूल में शिक्षा लेकर लश्कर में हेडमास्टर, सूबेदार, जमादार बनकर बुद्धिमता तेज, शौर्य दिखाने का मौका उस समाज को मिलता था मराठे नीचे झुककर सलाम करते थे। कंपनी सरकार द्वारा शुरू की गयी लशकर की सख्ती की प्राथमिक और दुय्यम शिक्षा के कारण उनकी ज्यादा प्रगति हुई थी। जिस अस्पृश्य समाज की सहायता के बिना ब्रिटिश सरकार का इस देश में प्रवेश कभी न होता, उस अस्पृश्य समाज की भरती करना ब्रिटिश सरकार ने आगे बंद किया। इसलिए यह अनर्थ उनके साथ हुआ है। राजनीतिक अथवा आर्थिक दृष्टि से किसी भी प्रजा को सरकारी नौकरी में लेने से मना करना पक्षपाती लक्षण तो है ही, साथ ही विश्वासघात और मित्रदोह भी है, ऐसा कहना पड़ता है।''

''नेपोलियन ने जिस इंग्लैंड देश को 'काटो तो खून नहीं' कर दिया; उस देश ने मराठाशाही को विनष्ट किया; इसका कारण मराठों के जाति-भेद का मनमुटाव

''नेपोलियन ने जिस इंग्लैंड देश को 'काटो तो खून नहीं' कर दिया; उस देश ने मराठाशाही को विनष्ट किया; इसका कारण मराठों के जाति-भेद का मनमुटाव और आपसी भेदभाव न होकर ब्रिटिशों द्वारा इस देशवासियों की सेना खड़ी करना है। लेकिन वह सेना भी अस्पृश्य जाति की। अगर अंग्रेजों को अस्पृश्यों का बल प्राप्त न होता, तो यह देश वे कभी भी क़ाबिज़ नहीं कर सकते थे।''

और आपसी भेदभाव न होकर ब्रिटिशों द्वारा इस देशवासियों की सेना खड़ी करना है। लेकिन वह सेना भी अस्पृश्य जाति की। अगर अंग्रेजों को अस्पृश्यों का बल प्राप्त न होता, तो यह देश वे कभी भी क़ाबिज़ नहीं कर सकते थे।''

अपने लोगों को उपदेश करते हुए अम्बेडकर ने आगे कहा, ''हम सरकार के हमेशा अनुकूल होते हैं। इसीलिए तो सरकार हमारी हमेशा उपेक्षा करती है। सरकार जो दे उसे लेना, जो कहे वही सुनना, जिस स्थिति में रहने के लिए बताएगी उस स्थिति में रहना–हमारी दास्य वृत्ति बन गयी है। लशकर भरती पर लगी बंदी उठाने का भरसक प्रयास करो। अस्पृश्य वर्ग के सुधार के लिए दो बातों की अत्यंत आवश्यकता है–उनके मन पर जो पुराने, बावले, अनिष्ट विचारों का मैल चढ़ गया है, उसे धोकर साफ करना चाहिए। आचार, विचार और उच्चार की शुद्धि जब तक नहीं होगी तब-तक अस्पृश्य समाज में जागृति या प्रगति का बीज कभी भी नहीं उगेगा। सद्य:स्थिति में उनके पथरीले मन पर किसी भी प्रकार का नया पौधा नहीं उगेगा। उनके हृदय इस तरह से सुसंस्कृत होने के लिए उन्हें सफेदपोश बनने की जरूरत है।''

अम्बेडकर ने उन्हें साफ-साफ बताया कि, 'सरकार एक जबरदस्त, महत्वपूर्ण संस्था है। सरकार के मन में जो होगा, उसके अनुरूप सब कुछ घटित होगा। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि सरकार कौन सी बातें कर सकेगी; यह पूरी तरह से सरकारी नौकरों पर निर्भर है। क्योंकि सरकार के मत का मतलब है सरकारी नौकरों का मत। हमें अपने हित की दृष्टि से कुछ करना है तो सरकारी नौकरी में प्रवेश करना चाहिए। अन्यथा आज हमारी जैसी उपेक्षा हो रही है, वैसी हमेशा ही होती रहेगी। वह न हो, इस तरह अगर हमारा हेतु है तो इस तरह की व्यवस्था करनी चाहिए कि अस्पृश्य वर्ग के लोग सरकारी नौकरी में अधिक मात्रा में सम्मिलित हों। इसलिए बहिष्कृत लोगों को प्राथमिक शिक्षा की ओर आनाकानी न करते हुए उच्च शिक्षा की ओर अधिक ध्यान देने की जरूरत है। एक लड़का बी. ए. होने से अपने समाज को जो लाभ होगा वह एक हजार लड़कों के चौथी कक्षा तक पढ़ने से भी नहीं होगा।

मृत जानवरों का मांस वर्ज्य करने का संकल्प करो। आपस का ऊंच-नीच भाव छोड़ दो–यह परिषद् को बताकर अम्बेडकर ने आगे कहा, ''महारों की गांव में इज्जत नहीं; मान-सम्मान नहीं। उनका स्वाभिमान नष्ट हुआ है। बासी और जूठे ठुकड़ों के लिए मनुष्यता को बेचना बड़ी लज्जा और शर्म की बात है। पिताजी की हां में हां मिलाने के महामंत्र को छोड़ दो। यह सोचना कि सभी पुराना सोना है, नया सुधार कभी भी नहीं होगा। मुझसे मेरे लड़के थोड़े अधिक अच्छे हैं, इस तरह जो मां-बाप नहीं कहते; उनके और पशु के जीने में कुछ भी अंतर नहीं। स्वावलंबन सीखो। स्वाभिमान को स्वीकार करो। स्वत्व का ध्यान रखो। तभी हमारा उ्धार होगा। महार वतन का लोभ छोड़कर खेती करें और जंगल की भूमि प्राप्त करें।

अपने लोगों को उपदेश करते हुए अम्बेडकर ने आगे कहा, ''हम सरकार के हमेशा अनुकूल होते हैं। इसीलिए तो सरकार हमारी हमेशा उपेक्षा करती है। सरकार जो दे उसे लेना, जो कहे वही सुनना, जिस स्थिति में रहने के लिए बताएगी उस स्थिति में रहना–हमारी दास्य वृत्ति बन गयी है।

डॉ. बाबासाहेब ने बड़े अभिमान के साथ यह जानकारी दी कि सत्यशोधक समाज के एक महान् नेता महात्मा ज्योतिराव फुले के एक ईमानदार सहयोगी और उत्साही शिष्य, गोपालबाबा वलंगकर ने 'अनार्य दोष परिहारक मंडली' नामक संस्था रत्नागिरि जिले के दापोली में सन् 1893 में स्थापित कर महाराष्ट्र में अस्पृश्यता निवारण आंदोलन प्रथमत: शुरू किया था।

बाबासाहेब का अध्यक्षीय भाषण अत्यंत स्फूर्तिदायी, उद्बोधक और परिणामकारी हुआ।

परिषद् में कुछ स्पृश्य हिन्दुओं ने महत्वपूर्ण, प्रस्तावों का समर्थन करने वाले आवेशपूर्ण भाषण दिये। सोशल सर्विस लीग के गं. नी. सहस्रबुद्धे, कमलाकान्त चित्रे, भिडे, सुरबा टिपणिस के ज्वलंत भाषण हुए। बापूराव जोशी ने बताया कि, 'अस्पृश्यता हिन्दू ध र्म पर लगा हुआ कलंक है। उसे धोकर साफ करने के लिए हर एक धर्माभिमानी हिन्दू को बड़े उत्साह के साथ कार्य करने के लिए तैयार रहना चाहिए।' सेठ तुलजाराम भाई ने कहा, 'अस्पृश्यों को स्पृश्यों के समान ही नागरिकत्व के अधिकार प्राप्त होने चाहिए, जिसके लिए महाड़ नगरपालिका का प्रस्ताव अस्पृश्यों को कार्यान्वित करना चाहिए।'

अस्पृश्यों को उनके नागरिकत्व के अधिकार कार्यान्वित करने के कार्य में स्पृश्य सहायता करें। वे अस्पृश्यों को अपनी नौकरी में रखें। अस्पृश्य छात्रों के लिए मधुकरी मांगने की सुविधा हो, मृत जानवरों का योग्य प्रबंध, वे जिसके होंगे, उसे ही करना होगा। इस तरह के प्रार्थनापरक दस प्रस्ताव उस दिन पारित हुए। देहात में पानी की असुविधा को दूर किया जाए, बहिष्कृत वर्ग की मृत जानवरों का मांस खाने की रूढ़ि को सरकार कानूनन बंद करें। शिक्षा और नशाबंदी के बारे में सख्ती की जाए।

राव बहादुर बोले के प्रस्ताव को कार्यान्वित किया जाए–इस प्रकार की मांग उनमें से एक प्रस्ताव के द्वारा की गयी थी।

उस रात विषय नियामक समिति में महाड़ नगरपालिका के प्रस्ताव पर चर्चा हुई और यह तय किया गया कि, अस्पृश्यों का चवदार तालाब पर पानी पीने का अधिकार प्रस्थापित करने के लिए परिषद् में उपस्थित सभी प्रतिनिधि वहां जाकर पानी पिएं। दूसरे दिन सुबह सुरबा टिपणिस के घर में अम्बेडकर, टिपणिस, शिवतरकर, सहस्रबुद्धे और अनंतराव चित्रे ने वह विचार कार्यान्वित होने की दृष्टि से एक रूपरेखा बना दी।

तत्पश्चात् वे सब नेता दोपहर को परिषद् गये। वहां विचार–विमर्श हुआ। कुछ भाषण भी हुए और चार प्रस्ताव पारित हुए। उनमें से एक प्रस्ताव में स्वामी श्रद्धानंद के शोचनीय निधन के बारे में दु:ख प्रदर्शित किया गया। आभार प्रदर्शन समाप्त हुआ। कामकाज खत्म हुआ, यह अध्यक्ष घोषित करने ही वाले थे, इतने में पूर्व संकेत के अनुसार अनंतराव चित्रे झट से खड़े हुए और उन्होंने कहा, 'हम महाड़ नगरपालिका का प्रस्ताव कार्यान्वित करें।' वे शब्द सुनकर परिषद् का मंडप तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। जिन स्पृश्य नेताओं ने परिषद् में जोर–जोर से भाषण किये थे। उनकी अब धांधली हो गई। कहना आसान है, करना कठिन! हिन्दू धर्म पर लगा हुआ कलंक धोने के लिए हमें बहुत उत्सुक रहना चाहिए। इस तरह की घोषणा करने वाले वाग्वीरों ने क्या किया होगा? वह कसौटी का समय आते ही 'संप्रति जनमत अनुकूल नहीं' कहते हुए वे मंडल के पीछे से नौ, दो ग्यारह हो गये। 'प्रस्ताव कृति में लाया जाए' इस तरह आग्रह के साथ कहने वालों ने मंडप से निकलते हुए कहा, 'यह तो शुद्ध अविचार और उतावलापन है। मुझे गांव में रहना है।' इस पर अम्बेडकर ने उत्तर दिया, 'जैसे हमारे विचार हैं, वैसी ही हमारे आचार हैं। आप अपना रास्ता सुधारिए।'

क्षणार्थ में चार–चार लोगों की टुकड़ियां एक के पीछे एक धीर गंभीरता और अनुशासन से चलने लगी। उनका वह प्रचंड मोरचा चवदार तालाब की ओर निकला। भारत के जीवन पर दूरगामी असर करने वाली इतिहास की एक युग प्रवर्तक घटना घटित होने का वह क्षण था। जातिभेद, भिक्षुकशाही, सामाजिक गुलामी के खिलाफ विद्रोह करने वाले डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अपने अनुयायियों को लेकर तालाब की ओर चल रहे थे। चवदार तालाब का पानी पशु पीते थे; पक्षी पीते थे, इतना ही नहीं, गो–हत्या को धर्म मानने वाले मुसलमान और बाइबिल का जिसे आधार न हो वह सब अधर्म, ऐसा घमंड करने वाले ईसाइयों को भी स्पृश्य हिन्दुओं के साथ, चवदार तालाब का पानी पीने का समान अधिकार था। लेकिन लंबे अर्से से राम, कृष्ण, विठोबा आदि हिन्दुओं के देवताओं को अपना देवता मानने वाले उन अस्पृश्य हिन्दुओं के लिए तो सभी सार्वजनिक पनघट, कुएं और तालाब बंद थे। उन दीन–दुर्बल दलितवर्गियों द्वारा पनघट से पानी लिये जाने पर तो सवर्ण हिन्दुओं, वेदमूर्तियों और धर्ममार्तंडों का धर्म डूब जाता था। उनकी संसार में अप्रतिष्ठा होती थी। उनकी इज्जत घट जाती थी। संस्कृति कलंकित हो जाती थी। धर्म को अधर्म का स्वरूप प्राप्त होता है तो ऐसे ही। इस तरह की क्रूर और अमानवीय अस्पृश्यता की रूढ़ि का विनाश कर, नये सामाजिक मूल्यों और सच्ची मानव–समानता के संस्थापन के लिए एक ज्वलंत रूढ़ि विनाशक, दलितों के उद्धारकर्ता और निर्भीक विद्रोही अम्बेडकर विश्व के एक महान लेकिन रुग्ण और यत्र–तत्र बिखरे हुए समाज का पुनर्गठन कर उसे नवजीवन देने के लिए विद्रोह कर रहे थे। इस विद्रोह के हजारों दलितों ने विश्व की उस पुरानी गुलामी का विनाश करने का मार्ग स्वीकार किया था। अनेक शतकों तक सामाजिक दासता की चक्की में पिसे हुए समाज द्वारा इस तरह को विद्रोह पुकारने का वह रोमहर्षक दृश्य इतिहास में अभूतपूर्व ही था। यह कहने में कोई प्रत्यवरोधन नहीं कि सामाजिक गुलामी ने उफान मारकर वह प्रचंड उग्र स्वरूप धारण किया था।

क्रूर और अमानवीय अस्पृश्यता की रूढ़ि का विनाश कर, नये सामाजिक मूल्यों और सच्ची मानव–समानता के संस्थापन के लिए एक ज्वलंत रूढ़ि विनाशक, दलितों के उद्धारकर्ता और निर्भीक विद्रोही अम्बेडकर विश्व के एक महान लेकिन रुग्ण और यत्र–तत्र बिखरे हुए समाज का पुनर्गठन कर उसे नवजीवन देने के लिए विद्रोह कर रहे थे।

साधारणतया राजनीतिक मोरचे लोकहर्षक और दिल दहलाने वाले होते हैं। परन्तु अम्बेडकर का मोरचा समाज के उन बहुसंख्य लोगों के खिलाफ था, जिन्होंने अल्पसंख्य लोगों पर उन्हें बुरी दशा में रखने वाले क्रूर बंधन निष्ठुरता से लादे थे। राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाले वीरों के मार्ग पर लोग तोरण खड़े कर पुष्पवृष्टि करते हैं। उन्हें प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप में सहानुभूति दिखाते हैं। परन्तु सामाजिक क्रांति की इच्छा रखने वाले महानुभावों के नसीब में निंदा और गाली–गलौज की मालाएं ही

पहनने की बारी आती है। उन पर मरण जैसे संकट आ जाते हैं। समाज की विघातक परंपरा, अमानवीय रीतिरिवाज और प्रचलित धर्म-भीरूपन का उन्मूलन करने के लिए वे संघर्ष करते हैं। इसलिए वे रूढ़ि प्रिय बहुजनों के क्रोध का शिकार बनते हैं। यह कोई नया अनुभव नहीं है। स्वजनोद्धार के लिए अपने दलित अनुयायियों को अपने साथ लेकर अम्बेडकर चवदार तालाब के पास आ पहुंचे। अनुयायियों का अनुशासन सराहनीय था। उत्साह की चैतन्य लहरें दसों-दिशाओं में इधर-उधर उफनने लगीं।

अम्बेडकर अब चवदार तालाब के किनारे पर खड़े थे। विश्व के पंडितों में से एक विख्यात पंडितवर, उदात्त ध्येय से प्रेरित हुआ, एक महान् हिन्दू नेता, दलितों के स्वातंत्र्य-सूर्य डॉ. अम्बेडकर कुरुक्षेत्र में उतरे। स्वतंत्रता के अधिकार भीख मांगने से प्राप्त नहीं होते। वह स्वसामर्थ्य से ही प्राप्त करने पड़ते हैं। दान के रूप में वे अर्जित नहीं होते–इस त्रिकालाबाधित महानुभाव के प्रत्यक्ष पाठ बाबासाहेब दलितों को दे रहे थे। आत्मोद्धार किसी दूसरे की कृपा से नहीं होता; वह हर एक को अपने प्रयत्न से ही प्राप्त करना पड़ता है। बाबासाहेब अम्बेडकर स्वयं कर्मवीर बनकर अपने अनुयायियों को श्रीगणेश का पाठ पढ़ा रहे थे। उन्हें सुसंगठित और प्रतिरोध-सक्षम बना रहे थे। कर्मवीरता इतिहास निर्माण करने वाले महापुरुषों का अंगीभूत स्वभाव होती है।

अम्बेडकर अब चवदार तालाब के किनारे पर खड़े थे। विश्व के पंडितों में से एक विख्यात पंडितवर, उदात्त ध्येय से प्रेरित हुआ, एक महान् हिन्दू नेता, दलितों के स्वातंत्र्य-सूर्य डॉ. अम्बेडकर कुरुक्षेत्र में उतरे। स्वतंत्रता के अधिकार भीख मांगने से प्राप्त नहीं होते। वह स्वसामर्थ्य से ही प्राप्त करने पड़ते हैं।

ध्येय के बारे में अटल श्रद्धा रखकर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर दलितों में निष्ठा निर्माण कर रहे थे। जिस ध्येय का वे उद्घोष कर रहे थे, वह ध्येय अब संघर्ष के अग्निदिव्य से कड़ी कसौटी पर साकार हो रहा था। अम्बेडकर अब स्वयं तालाब के किनारे पर खड़े हुए। जिस पनघट पर पशु-पक्षी अपनी प्यास बुझाने के लिए आते थे, पर जिसका पानी पीकर अपनी प्यास बुझाने के लिए जिसको अपनी पुण्यभूमि तथा मातृभूमि में अवरोध था, जिसे सार्वजनिक स्थान और मंदिर के दरवाजे बंद थे; वह महान् महापुरुष हिन्दू धर्ममार्तडों और हिन्दू धर्ममतों का ढकोसला भारत में सब जगह पर जाहिर कर रहा था। सब जगह परमात्मा है, ऐसा धर्मप्रणीत उद्घोष उच्च स्वर से करने वाले और कुत्ते-बिल्ली को अपने पास रखकर स्वधर्मियों को पशु से भी नीच मानने वाले घोर पापियों का अघोर पाप वह क्रांतिपुरुष विश्व को स्पष्ट कर दिखा रहा था।

अम्बेडकर चवदार तालाब की सीढ़ियां उतर कर नीचे गये। वे नीचे झुके और उन्होंने तालाब का एक अंजुली भर पानी पिया। उस प्रचंड जनसमुदाय ने भी अपने नेता का अनुकरण किया। उन्होंने अपना नागरिक तथा मानवीय अधिकार प्रस्थापित किया। तुरन्त ही मोरचा शांति के साथ परिषद् की जगह लौटा और विसर्जित हुआ। नेता को उचित समय पर कृतिपूर्ण कदम आगे बढ़ाना चाहिए। जो काम सैकड़ों प्रस्तावों से नहीं होता, वह इस एक कृति से कामयाब होता है। कार्लाइल ने कहा ही है कि, 'कृति मानव का सच्चा उद्दिष्ट है।'

इस तरह प्रचंड कार्य कर परिषद् समाप्त हुई। हर एक व्यक्ति अपने घर लौटने की तैयारी में लग गया। भारत के तीन हजार वर्षों के इतिहास में वह परम मंगल भाग्य का दिन था। इन्सानियत और समानता का संदेश भारत को देने वाला वह स्वर्णिम दिन 20 मार्च 1927 था। अम्बेडकर के जीवन में वह परम भाग्य का दिन था। उस दिन से अम्बेडकर की कीर्ति की लहरें एक के बाद एक सारे देश में फैल गयीं।

विषमता की अमानवीय रूढ़ि तोड़कर अस्पृश्य हिन्दुओं द्वारा चवदार तालाब का पानी पीने का दृश्य देखते ही महाड़ के सनातनी वृत्ति के स्पृश्यों के दिमाग बिगड़ गये। वातावरण तप्त और स्फोटक बना। पांच-दह हजार अस्पृश्य लोगों को तालाब पर पानी पीते समय, वहां जाकर उन्हें रोकने की उन रूढ़िवादियों ने हिम्मत नहीं की। कुछ विघ्नसंतोषी सवर्ण हिन्दुओं ने गांव में यह अफवाह फैला दी कि, 'महारों ने तालाब उच्छिष्ट किया; अब वे वीरेश्वर मंदिर में प्रवेश करने वाले हैं। देवता के दर्शन लेकर देवालय उच्छिष्ट करने वाले हैं।' सवर्ण हिन्दुओं को कुछ कारण ही चाहिए था। उन्हें ऐसा लगा कि, अब अपने धर्म पर ही हमला हो रहा है। हिन्दू-इतर जनों से यह हमला होता तो वे धर्मवीर शायद कुंडी लगाकर, घर में घबराकर बैठ गये होते।

परन्तु यह घटना ही निराली थी। उनके खुद के धर्म भाई मंदिर प्रवेश कर देवदर्शन लेने वाले थे। चोखामेला, रोहिदास चमार संतों को साक्षात् दर्शन देने वाला, कबीर जैसे मुसलमानों के यहां दुपट्टा बुनने वाला; उनका वह देव उच्छिष्ट होने वाला था। अब वह भ्रष्ट होने वाला था। इसलिए स्पृश्य हिन्दू लाठियां और

लकड़ियां लेकर कमर कसकर तैयार हुए। अस्पृश्य हिन्दू अपने देवता को उच्छिष्ट न करें, इसलिए उनके मस्तक फोड़ने के लिए वे तैयार हुए। ये धर्मघाती हिन्दू आज हमारा घात करने वाले हैं—यह उन बेचारे अस्पृश्य हिन्दुओं के ध्यान में भी नहीं था। दूसरे गांव से परिषद् को आये हुए अस्पृश्य मेहमान दो-दो, चार-चार मिलकर नगर में बाजारहाट करने या नगर देखने के लिए घूम रहे थे। कुछ लोग घर वापिस लौटे। कुछ लोग अपने घर जाने की जल्दी में थे। कुछ लोग परिषद् के मंडप में भोजन कर रहे थे।

इस समय ये धर्मघाती स्पृश्य हिन्दू उस मंडप में घुस गये। 'हर हर महादेव' गर्जना कर उन्होंने उन बेगुनाह गरीबों को घायल किया। महिलाएं, बच्चे आदि को भी उन क्रूरकर्मियों ने नहीं छोड़ा। मंडप में बनायी हुई रसोई में उन नराधमों ने मिट्टी बिखेर दी। बर्तनों की तोड़मरोड़ की और बाजारहाट में जो अस्पृश्य दिखाई पड़ा, उसे उन पागलों ने मारपीट की। आखिर में कुछ अस्पृश्य लोगों ने मुसलमानों के घर में आश्रय लेकर अपनी जान बचायी। इन धर्ममार्तंडों की धर्मबुद्धि उन्हें पहले ही छोड़कर चली गयी थी। अब उनका मस्तिष्क भी ठिकाने पर नहीं रह गया था।

बाबासाहेब अम्बेडकर डाक बंगले में ठहरे थे। उस भीषण हमले के समाचार अस्पृश्यों के एक दल ने वहां जाकर उन्हें दिए। तहसीलदार और पुलिस अधिकारी ने अम्बेडकर से सायंकाल चार बजे डाक बंगले पर भेंट की। बाबासाहेब ने दृढ़ता से कहा, 'आप अन्य लोगों को सम्हालें! मैं अपने लोगों को सम्हालता हूं।' बाबासाहेब अपने दो-तीन अनुयायियों के साथ वहां से बाहर निकले। रास्ते में स्पृश्य गुंडों ने उन्हें घेर लिया। बाबासाहेब ने बड़ी शांति से उनसे कहा कि, 'मंदिर प्रवेश करने का हमारा इरादा नहीं है।'

मंडप में जाकर उन्होंने यथार्थ का अवलोकन किया। घायल होकर बेसुध पड़े और प्राणांतिक वेदनाओं से व्याकुल अनेक दलित बांधवों को देखकर बाबासाहेब का खून खौल गया। उनका क्रोध एकदम चढ़ गया। तथापि उन्होंने अपने दिल को विवेक से तुरन्त शांत किया। शांति बनाए रखने और अत्याचार न करने के लिए उन्होंने अपने अनुयायियों को आदेश दिया। घायल होकर पड़े हुए बीस अनुयायियों को बाबासाहेब स्वयं अस्पताल ले गये। वहां के स्पृश्य डॉक्टरों ने चिढ़ाकर उपेक्षा से कहा कि, 'पानी पीने को चाहिए न? लीजिए!' यह कहकर उन्होंने उनके घाव पट्टी से बांध दिये।

गले में मिट्टी की गगरी और कमर में पेड़ की डाली बांधे बिना अस्पृश्यों को पेशवाई में पुणे में रास्ते से गुजरने की अनुमति नहीं थी। सुबह और शाम को जब छाया लंबी पड़ती है, तब तो उन्हें पुणे को यातायात के सभी मार्ग बंद हो जाते थे।

तत्पश्चात् बाबासाहेब डाक बंगले पर लौटे। उस समय आग बबूले हुए लगभग सौ अस्पृश्य उनकी प्रतीक्षा करते हुए दिखाई पड़े। उन अनुयायियों की आंखों से मानो आग की चिनगारियां निकल रही थीं। बदला लेने के लिए उनके हाथ फड़क रहे थे। बाबासाहेब के केवल हां कहने पर उन्होंने उन स्पृश्य जानवरों को पानी पिला दिया होता, तथापि शांति का पालन करने का अपने एकमेव नेता का आदेश उन्होंने पूरी तरह से स्वीकार किया और उन सबने रात अपने-अपने गांव प्रयाण किया।

परिषद् को आये हुए अस्पृश्यों में से सैकड़ों लोग निकले थे। उनमें से अनेकों ने प्रथम विश्वयुद्ध में रणक्षेत्र में बहादुरी दिखाई थी। अगर वे सैनिक महाड़ में होते और इस समय यह पाशवी अत्याचार स्पृश्य गुंडा करते, तो वहां रणक्रंदन मच जाता। शायद चवदार तालाब के साथ-ही-साथ दूसरा खून का तालाब तैयार हो गया होता।

उसी दिन बाबासाहेब को डाक बंगला खाली कर देना था। उन्होंने वह खाली कर दिया। वहां से वे गांव में सुरबा टिपणिस के घर दो दिन ठहरे। दंगे-फसाद की सारी जानकारी प्राप्त कर 23 मार्च को वे बम्बई वापस लौटे।

उन धर्मघातकी स्पृश्य गुंडों में से आठ गुंडों को पुलिस ने गिरफ्तार किया। उनमें से जिन्होंने चरम पशुता दिखायी थी, उन सात लोगों को न्यायाधीश ने 6 जून 1927 को हर एक के लिए चार महीनों की सश्रम कारावास की सख्त सजा मुकर्रर की। उस समय बाबासाहेब ने कहा कि, 'न्यायालय के मुख्य अधिकारी स्पृश्य हिन्दू होते, तो शायद हमें न्याय नहीं मिल पाता' यह नहीं कहा जा सकता कि, बाबासाहेब के उन विचारों में बिलकुल तथ्य नहीं है। बाबासाहेब ने यह भी कहा कि, 'पेशवाओं का राज्य होता तो इस तरह के सामाजिक विद्रोहियों को हाथी के पैरों तले कुचल दिया गया होता!'

गले में मिट्टी की गगरी और कमर में पेड़ की डाली बांधे बिना अस्पृश्यों को पेशवाई में पुणे में रास्ते से गुजरने की अनुमति नहीं थी। सुबह और शाम को जब छाया लंबी पड़ती है, तब तो उन्हें पुणे को यातायात के सभी मार्ग बंद हो जाते थे।[1]

अम्बेडकर के सुखरूप बम्बई पहुंचने पर रमाबाई ने चैन की सांस ली। वे अनन्यभाव से प्रभु की शरण में गई। दो दिनों से वे सो नहीं सकी थीं। अम्बेडकर के भाई बालाराम हल्के नशे की हालत में उनके पास एक बार आए और उन्होंने अम्बेडकर को पिता-सदृश उपदेश दिया

कि, 'बड़े आये दलितों का उद्धार करने वाले! इस तरह के संकटमय प्रसंग अपने जीवन में घसीटकर लाने की अपेक्षा अपने वकालत की ओर तनिक अधिक ध्यान दो।' उन्होंने अम्बेडकर के स्पृश्य हिन्दू मित्रों पर लाखों गालियों की बौछार कर उनका उद्धार किया। बाबासाहेब ने अपने बड़े भाई का उपदेश बिना प्रतिरोध के सुन लिया। बालाराम के निकलते ही वे अपने आप में कुछ बुदबुदाए–'यह मैं अच्छी तरह से जानता हूं कि मेरा हित समाज के हित में है या और किसी में!'

अस्पृश्यों द्वारा 'उच्छिष्ट किया हुआ तालाब कैसे शुद्ध किया जाए, इस संदर्भ में महाड़ के धर्ममार्तंड और दकियानूसी लोगों में काफी चर्चा हुई। इस अशुद्धि पर कौन-से उपाय सुझाए गए हैं, इस संबंध में वहां के विष्णु-मंदिर में चर्चा की गयी। सच्चे मानव धर्म का चिंतन न करते हुए उस धर्म का जिन्होंने पतन किया था, उन धर्मवीरों ने अस्पृश्य हिन्दुओं द्वारा स्पर्श किये हुए उस तालाब को जानवरों के मलमूत्र से शुद्ध कर लेने का शास्त्राधार ढूंढ़ निकाला। उस तालाब से एक सौ आठ गगरी पानी निकाला। उसमें पंचगव्य मिलाया और वेदमंत्रों के उद्घोष के बीच वह पानी फिर से तालाब में उड़ेल दिया और तालाब शुद्ध हो जाने की घोषणा की।

अस्पृश्य हिन्दुओं के पानी पीने के कारण मुसलमानों ने तो उस तालाब के पानी का बहिष्कार नहीं किया। उनका नित्यक्रम अबाधित था। तथापि तालाब की इस शुद्धिकरण की शक्ति या कृति को महाड़ के समस्त स्पृश्य हिन्दुओं का समर्थन नही था। परन्तु उनकी सहानुभूति की डुगडुगी उन अत्याचारी धर्म डुबाने वालों के नगाड़ों के सामने सुनाई नहीं दी। चवदार तालाब को सनातनियों द्वारा शुद्ध करने से पहले उस तालाब में महाड़ के उस समय के एक तरुण नेता बापूराव जोशी ने उसमें कूदकर स्नान किया। इसलिए सनातनियों ने बापूराव के खिलाफ पंचायत की। उन्हें ब्रह्मवृंदों ने क्रोध से बिरादरी से निष्कासित कर दिया। पुराणप्रियता सनातनी हिन्दुओं का एक विचित्र गुण है। उनकी रूढ़ि प्रियता इतनी अंधी और मजबूत है कि उन्हें सत्य की अपेक्षा रूढ़ि ही महान लगती है। देशकाल परिस्थिति का उन पर तनिक भी असर नहीं पड़ता।

इस तरह महाराष्ट्र के अस्पृश्य समाज के प्रथम खुली परिषद् का और अपने नागरिक अधिकार जताने के लिए उस समाज द्वारा किये गये पहले संघर्ष का अन्त हुआ। भारत में नये युग की शुरुआत होने की और हिन्दू समाज को जागृत करने वाली तुरही से बाहर निकली वह एक ललकार ही थी। राष्ट्र की सामाजिक पुनर्रचना का प्रवाह और अम्बेडकर के जीवन-प्रवाह को व्यवस्थित कर देने वाली वह अभूतपूर्व घटना थी। जिस प्रकार वंग-भंग का अभूतपूर्व आंदोलन, तिलक का सूरत संग्राम, सावरकर की मार्सेलिस की त्रिलोक में प्रसिद्ध छलांग, गांधीजी की डांडी यात्रा, खुदीराम बोस द्वारा फेंका गया पहला बम और सुभाष बाबू का अंतिम संग्राम आदि घटनाओं ने आधुनिक भारत के राजनीतिक इतिहास को महत्वपूर्ण मोड़ दिया। उसी तरह का मोड़ अकेले महाड़ संघर्ष ने भारत की सामाजिक पुनर्रचना के कार्य को दिया।

अनेक शतकों से स्पृश्य हिन्दुओं की दासता में जकड़ा हुआ अस्पृश्य समाज अपने मानवी अधिकार प्रस्थापित करने के लिए स्पृश्य हिन्दुओं के सामने लड़ने के लिए ललकारते हुए खड़ा हो गया। आज तक 'निर्माल्य' (अर्थात् देवता पर चढ़ाने के बाद मुरझाने से अलग किए फूलों) की तरह बेकार होकर पड़े हुए अंतःकरण वाला और झुकी हुई गर्दन वाला वह अस्पृश्य समाज अब स्वाभिमान, स्वावलंबन के निर्धारण से गर्दन ऐंठते हुए, अन्याय का विनाश करने के लिए अनेक युगों में पहली बार ही संघर्ष के लिए ललकारते हुए खड़ा हो गया, गुस्से की भाषा बोलने लगा। वह इस तरह से बोलने लगा कि, 'अन्यायी धर्म के बंधन, हमें स्वीकार नहीं।'

अस्पृश्यों के इस धर्मयुद्ध का अभूतपूर्व परिणाम हुआ। उनका स्वाभिमान जागृत हुआ। उन्हें यह मालूम पड़ा कि आत्मोद्धार के लिए संघर्ष करने से मनुष्य को मनुष्यता प्राप्त होती है। उन्हें यह भी स्वीकार होने लगा कि उन्नति और मानवता के अधिकारों के लिए दलितों का संघर्ष करना अटल है, आवश्यक है। यह समझ में आते ही उनके स्वाभिमान का खड्ग अधिक तेज होने लगा।

अस्पृश्यों के इस धर्मयुद्ध का अभूतपूर्व परिणाम हुआ। उनका स्वाभिमान जागृत हुआ। उन्हें यह मालूम पड़ा कि आत्मोद्धार के लिए संघर्ष करने से मनुष्य को मनुष्यता प्राप्त होती है। उन्हें यह भी स्वीकार होने लगा कि उन्नति और मानवता के अधिकारों के लिए दलितों का संघर्ष करना अटल है, आवश्यक है। यह समझ में आते ही उनके स्वाभिमान का खड्ग अधिक तेज होने लगा।

उन्होंने अपने नेता का उपदेश पूरी तरह से आचरण में लाना आरंभ किया। जानवरों को खींचना, मृत जानवरों का मांस भक्षण

करना, स्पृश्यों के घर रोटी के टुकड़े की मांग करना, इस तरह की जीवन-चर्या को उन्होंने छोड़ दिया। उन्हें यह मालूम होने लगा कि सार्वजनिक पनघट पर पानी पीना कोई गुनाह नही। जो काम-धंधा उन्हें मिल जाता, उसे वे करने लगे।

तथापि, उनके मन पर मुख्यतया अगर किसी का असर हुआ होगा तो संगठन और स्वावलंबन के तत्व का। जो स्पृश्य हिन्दू उनके जीवन की ओर हमदर्दी से देखते थे, उनका सनातनियों के सामने कुछ नहीं चलता था। इसलिए उन्हें हृदय से ऐसा लगने लगा कि अब हमें इंसानियत के लिए खुद ही लड़ाई और संघर्ष छेड़ना चाहिए। और हम ऐसा कर सकते हैं। अस्पृश्यों का आन्दोलन इस एक संघर्ष से पचास साल आगे बढ़ गया।

सचमुच, यूरोप में जैसा सुदृढ़ जर्मनी है, वैसा ही भारत में महाराष्ट्र! आधुनिक भारत में राजनीतिक और सामाजिक क्रान्ति का प्रारम्भ महाराष्ट्र में ही हुआ। अस्पृश्यों के इन स्वाभिमानी कार्यकर्ताओं के कार्य से सनातनी वृत्ति के स्पृश्य हिन्दुओं की एकाधिकारशाही को जबरदस्त सदमा पहुंचा। उनमें से कुछ मुखियों ने चाहे जैसे कारणों से महारों पर अभियोग दाखिल किये और महारों के मुखियों को कारावास में डाल दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने अस्पृश्यों के जीवन को बर्बाद करना तय किया। उन क्षुद्र व्यक्तियों ने कुछ लोगों को अपनी जमीन-जायदाद से निकाल दिया और उनका लेहनादारी का कार्य बंद किया।

इस प्रकार अस्पृश्य वर्गीय जनता भीषण दु:ख और कष्ट भोगते हुए महाड़ परिषद् द्वारा दिया गया आदेश अपने आचरण में लाने का प्रयास कर रही थी। महाड़ के मुक्ति-संग्राम की प्रतिध्वनि केवल महाराष्ट्र में ही नहीं, तो पूरे भारत में गूंज उठी। महाड़ के इस धर्मसंगर से इन्सानियत की पवित्र नींव भारत में डाली गयी। स्पृश्यों द्वारा अस्पृश्यों पर किये गये कायरतापूर्ण हमले का विरोध करने के लिए जगह-जगह सभाएं हुईं।

बम्बई के दामोदर सभागृह में रावबहादुर सीताराम केशव बोले की अध्यक्षता में एक सभा आयोजित की गयी। अपने ही देशभाइयों पर जलियांवाला बाग के अत्याचारों जैसे अत्याचार करने वाले क्रूरकर्मियों का सभा में बड़ा विरोध किया गया। 'ब्राह्मण-ब्राह्मणेतर' पाक्षिक के संपादक देवराव नाईक और प्रबोधनकार केशवराव ठाकरे के प्रक्षोभणपूर्ण भाषण हुए। सभा के संचालकों ने लोगों के आग्रह पर देवराव नाईक और प्रबोधनकार ठाकरे आदि नेताओं को महारों के हाथ का पानी पीने के लिए देकर उनकी परीक्षा ली। वे तत्ववीर सत्व का पालन करने में कामयाब हुए। पुणे की एक सभा में अण्णासाहब भोपटकर ने उस कायरतापूर्ण हमले का विरोध करके कहा, ''अस्पृश्य समाज के लोगों को, जहां हम जाते हैं, वहां न जाने देना बड़ी शरम की बात है। मेरे जीवन में एक दिन इस तरह उदित होगा, जिस समय स्पृश्यास्पृश्य भेद-विभेद नहीं रहेगा।''

कुछ समाचार-पत्रों ने यह कहकर नक्राश्रु बहाए कि जो हुआ सो ठीक नहीं हुआ। पुणे के कुछ हिंदुत्वनिष्ठ नेताओं ने इस प्रकरण की स्वतंत्र रूप से पूछताछ की। 'उस प्रकरण में 'शेटजी, भटजी' का साथ अस्पृश्य सेवक श्रीपाद महादेव माटे ने दिया। इसलिए जिस प्रकार कर्मवीर विट्ठल रामजी शिन्दे के बारे में अस्पृश्य कार्यकर्ताओं के मन में आमरण गांठ रही; वही माटे के साथ भी हुआ। इस तरह अनेक वर्षों की पुण्य कमाई एक अपकृत्य से डूब जाती है। इस सारे प्रकरण में अस्पृश्यों का साथ तहे दिल से अगर किसी ने दिया, तो वीर सावरकर ने ही। उन्होंने 'श्रद्धानंद' के माध्यम से साफ घोषित किया कि, 'अपने धर्म भाइयों को अकारण पशु से भी बदतर अस्पृश्य मानना केवल मानव जाति का ही नहीं, अपनी आत्मा का भी घोर अपमान करना है। हिन्दुओं को उस अन्याय्य और आत्मघाती रूढ़ि का निर्मूलन-आपद्धर्म के रूप में नहीं, तो धर्म के रूप में, लाभदायी रूप में नहीं, तो न्याय के रूप में, उपकारी के रूप में नहीं, तो मनुष्यता की सेवा के रूप में करने की जरूरत है। यह भावना तो और भी निंदनीय है कि, अपने धर्म और रक्त के हिन्दू मनुष्य की स्पर्श से पानी उच्छिष्ट होता है और वह पशु के मूत्र-सिंचन से शुद्ध होता है।'' अम्बेडकर का संघर्ष न्यायोचित है, यह घोषित करके उन्होंने उस संघर्ष को दिल से समर्थन दिया। तथापि, केवल धर्मांतरण से यह समस्या हल नहीं होगी-यह भी उन्होंने जताया।

अम्बेडकर पर आलोचकों के हमले होने लगे। समाचार-पत्रों से अपना मत प्रतिपादन करने और विरोधियों के मतों और टिप्पणियों का खण्डन करने की आवश्यकता अम्बेडकर को अब तीव्रता से महसूस होने लगी। इसलिए उन्होंने 3 अप्रैल, 1927 को 'बहिष्कृत भारत' नामक पाक्षिक बड़े उत्साह के साथ निकाला। ध्येयनिष्ठा से समाचारपत्र चलाने वाले समाचार-पत्र पर आजीविका के लिए निर्भर न रहें ऐसा हमें लगता है; इसलिए हमने वकालत का स्वतंत्र व्यवसाय शुरू किया। इस तरह पहले अग्रलेख में उन्होंने आत्मपरिचयात्मक निवेदन प्रस्तुत किया था। उनका पहले से ही यह मत हुआ कि समाज-सेवक की रीढ़ आर्थिक दृष्टि से मजबूत होगी तो वह अधिक अच्छी तरह से कार्य कर सकता है। उन्होंने यह पाक्षिक इस उद्देश्य से निकाला था कि अस्पृश्य समाज के हित की दृष्टि से देश की विविध घटनाओं की ओर ध्यान देते हुए उनकी शिकायतें, मत तथा प्रतिक्रियाएं सरकार के दरबार में दर्ज हो और भावी राजनीतिक सुधारों के समय अस्पृश्यों को अधिकार प्राप्त हों। उनका पहला समाचार पत्र 'मूकनायक' बंद पड़ गया था। वह समाचारपत्र ज्ञानदेव ध्रुवनाथ घोलप चलाते थे। सन् 1920 में बाबासाहेब लंदन गये। उस समय उन्होंने वह भटकर के हाथ सौंप दिया था। भटकर के बाद

सभी व्यवस्था घोलप के हाथ सौंप दी गई। तथापि, अव्यवस्था और चंदा दाताओं की कमी के कारण वह पत्र सन् 1923 के पहले ही बन्द पड़ गया। इसलिए बाबासाहेब ने यह तय किया कि 'बहिष्कृत भारत' नामक एक प्रकाशन संस्था स्थापित कर अस्पृश्यों को मानवी अधिकार दिलाने के लिए उनमें जागृति करने की आवश्यकता है और उसके लिए संघर्ष करने की भी जरूरत है। इसलिए बीस हजार रुपए चंदा इकट्ठा करने के लिए रामचंद्र कृष्णजी कदम, भवानी पेठ, पुणे को दिसम्बर, 1924 में नियुक्त किया गया था। दो वर्षो बाद कुछ चंदा इकट्ठा होते ही, 'बहिष्कृत भारत' पाक्षिक शुरू हुआ। बीच में, घोलप विधान परिषद् के नियुक्त सदस्य थे, उन्होंने पुनः 'मूकनायक' पाक्षिक निकाला; लेकिन वह पुनश्च बंद पड़ा, और फिर शुरू नहीं हो पाया। 'बहिष्कृत भारत' नाम कितना मार्मिक और समर्पक है! दो शब्दों में दो भारत! बहिष्कृत है, लेकिन भारत है! भारत है लेकिन बहिष्कृत है! 'बहिष्कृत भारत' के माध्यम से आंबेडकर ने स्वजनों को सलाह देना और आलोचकों पर हमला करना शुरू किया। उन्होंने तिलक की भांति सिंह गर्जना की-'पुनश्च हरि ॐ:।' पहली गर्जना 'मूकनायक' द्वारा हो चुकी थी। उन्होंने अब खुद ही होने वाली आलोचना का परामर्श लेने की शुरुआत की। इसलिए भारत का यथार्थ दर्शन दिखाई देने लगा।

हम ऐसा समझते है कि जब तक हम खुद को हिन्दू कहते हैं और आप हमें हिन्दू समझते हैं,तब तक मंदिर जाकर देवता के दर्शन करना हमारा अधिकार है। हमें किसी भी हालत में अलग मंदिर नहीं चाहिए। मंदिरों के बिना हमारा कुछ नही अड़ा है। जिन्हें देवता की भक्ति करनी हैं, उन्हें मंदिर चाहिए ही, ऐसी बात नहीं है। सामाजिक उपासना और सामाजिक सम्मेलन या एकता के लिए मंदिर की जरूरत होती है। हमें समाज में समान अधिकार चाहिए; वे अधिकार हम यथासंभव, हिन्दू समाज में रहकर और आवश्यकता पड़ने पर कौड़ी के मोल सिद्ध हुए हिन्दुत्व को लात मारकर प्राप्त करने वाले हैं और यदि हिन्दुत्व को छोड़ देने की बारी आई, तो निश्चय ही हम मंदिर के बारे में फिर से नहीं सोचेंगे। यह कहने की आवश्यकता है, ऐसी बात नहीं। इस तरह की एक छोर की घोषणा उन्होंने उस समय ही कर दी थी।

उन्होंने सरकार को बड़ी लगन से अनुरोध किया कि, सनातनियों और समाज सुधारकों का विरोध करने वाले प्रतियोगियों को सजा कर बोले-प्रस्ताव कार्यान्वित किया जाए और इसके लिए जरूरी कड़े उपाय भी प्रस्तुत किए जाएं। विचारक अपने विचार के अनुसार आचरण करें। सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से अस्पृश्यों को स्पृश्य हिन्दुओं के समान दर्जा मिलना चाहिए। 'हिन्दू धर्म का सिद्धान्त ईसाई और मुस्लिम धर्म के सिद्धान्तों की तुलना में कई गुना समता के तत्व के लिए परिपोषक हैं। मनुष्य ईश्वर की सन्तान है, इतने पर न रुकते हुए वे सब ईश्वर के ही रूप हैं, ऐसा बड़ी निर्भीकता से हिन्दू धर्म कहता है। जहां सब ईश्वर के ही रूप है, वहां कोई ऊंच, कोई नीच इस तरह का भेदभाव करना संभव नहीं। यह उस धर्म का महान, तेजस्वी तत्व है। इससे कोई भी इनकार नहीं कर सकता। समानता का साम्राज्य स्थापित करने के लिए इससे बड़ा दूसरा आधार प्राप्त होना मुश्किल है। ऐसा होने पर भी जो सामाजिक समता ईसाई और मुस्लिम राष्ट्रों में दिखाई देती है, उसका हिन्दू समाज में कोई नामोनिशान भी दिखाई न देता और उसे प्रस्थापित करने के लिए पवित्र प्रयत्न जारी होने पर हिन्दू-धर्मी कहलाने वाले लोगों द्वारा अड़ंगा लगाए जाने से वह दिखाई पड़ता है कि हिन्दू धर्मी लोगों को सच्चे हिन्दू धर्म की कितनी कम पहचान है।

'अगर वेदों में नीति के सिद्धान्त नहीं बताये गये हों, और व्यवहार में उस नीति और धर्म की जरूरत हो तो वेदप्रणीत धर्म व्यावहारोपयोगी नहीं; यह कहने की अपेक्षा कहना चाहिए कि उसे व्यावहारोपयोगी बनाने का धैर्य उन कमजोर लोगों में नहीं। अम्बेडकर ने पूछा कि, 'धारणाद्धर्मः यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः' मानने वाले लोग उसके अनुसार आचार और प्रचार क्यों नहीं करते? एक तरफ शुद्धि करके लोगों को हिन्दू धर्म में लेना दूसरी तरफ छल करके स्वजनों को परधर्म में डालना श्रद्धानंदप्रणीत शुद्धि न होकर बेसुध व्यक्ति का ही आचरण है। शुद्धि संगठन-आंदोलन के बारे में हमारा यह मत है कि हिन्दू लोगों को फिलहाल शुद्धि की अपेक्षा संगठन की विशेष जरूरत है।

''हिन्दू धर्म की शक्ति जातिभेद और अस्पृश्यता के कारण लुप्त हुई। अस्पृश्यों का विरोध कर अपने उज्ज्वल धर्म को कलंक लगाने वाले पापाचरणी धर्मांध लोगों को इस तरह के अधम कृत्य से दूर करना उनका कर्तव्य था। हिन्दू समाज में प्रवेश

हिन्दू धर्म की शक्ति जातिभेद और अस्पृश्यता के कारण लुप्त हुई। अस्पृश्यों का विरोध कर अपने उज्ज्वल धर्म को कलंक लगाने वाले पापाचरणी धर्मांध लोगों को इस तरह के अधम कृत्य से दूर करना उनका कर्तव्य था। हिन्दू समाज में प्रवेश बिलकुल बंद होकर उसमें हमेशा ह्रास हुआ है।

बिलकुल बंद होकर उसमें हमेशा ह्रास हुआ है।–यह खुली आंखों देखते हुए जो हिन्दू धर्म में रहे हैं, उनका छल करके लोक-विग्रह करने के बुरे प्रयासों को अड़ंगा लगा कर उनके साथ न्याय और समता से बर्ताव करके लोकसंग्रह का पाठ लोगों को इस समय पढ़ाने की आवश्यकता थी। ऐसा नहीं लगता कि उसे कोई नकारेगा। हिन्दू सभा के संगठन और शुद्धि दो कार्य हैं। इन दोनों में हमारे मत से संगठन ही अधिक महत्वपूर्ण कार्य है। हमारा यह मत है कि हिन्दू अपना संगठन करेंगे तो शुद्धि की कोई जरूरत नहीं होगी। हिन्दू चातुर्वर्ण्य समाज व्यवस्था खत्म करके एकवर्णी समाज स्थापित करें।''

यह सही नहीं कि अस्पृश्य अभक्ष्य मृत जानवरों का मांस खाते हैं, इसलिए उन्हें अस्पृश्य माना जाता है। अस्पृश्यों में से कुछ जातियां शाकाहारी हैं। उन्हें अस्पृश्य क्यों माना जाता है? गोभक्षक मुसलमानों को स्पृश्य क्यों समझा जाता है? चवदार तालाब सार्वजनिक है। सार्वजनिक का मतलब सरकारी–इतना संकुचित नहीं। जो सबके उपयोग के लिए है। चाहे वह सार्वजनिक व्यवस्था सरकारी हो या गैरसरकारी या अर्धसरकारी। ब्रिटिशों के बारे में कहा जाता है कि, वे लोगों की इच्छा के अनुसार राज्य चलाएं। अस्पृश्यों के बारे में महाड़ के दंगा-फसाद में तुम्हारी स्वराज्य विषयक नालायकी साबित हो चुकी है। तुम अल्संख्यकों के अधिकार स्वीकार करने के लिए राजी नहीं हों। गरीब, दुर्बल लोगों के साथ न्याय करने की तुम्हारी इच्छा नहीं है। इसलिए तुम्हारे मुंह से 'जनतंत्र', 'स्वराज' शब्द शोभा नहीं देते। अस्पृश्यता आजकल की नहीं, वह एक साल में कैसे नष्ट होगी? ऐसा अगर किसी ने कहा तो अम्बेडकर उससे पूछते कि, 'तुम्हारी राजनीतिक गुलामी अनेक शताब्दियों की है, वह एक साल में कैसे चली जायेगी? राजनीति के बारे में घोड़े की शक्ति की भांति दौड़ करनी चाहिए और सामाजिक और धार्मिक समता का प्रश्न उद्‌भुत होने पर घोंघें से भी धीमी!'

कुछ डरपोक नेता और पत्रकार अपनी बुज़दिली जनमत के बुरक़े के नीचे छिपा रखते थे। उनसे अम्बेडकर कहते कि, 'जनमत अनुकूल नहीं, इसलिए अगर अस्पृश्यता जल्द नष्ट नहीं होगी तो जनमत के न बनते स्वराज की घोषणा किसलिए? अन्याय की कोई परंपरा नहीं। वह चलता आ रहा है, इसलिए और चलता रहे यह विचारधारा जंगली मनुष्य की है। अगर न्याय की दखल लेनी हो तो यह रूढ़ि बंद करो। सौ में से किसी एक को राजसत्ता की तीव्रेच्छा होती है। उसका निर्मूलन करने के लिए तिलक ने उसका बहिष्कार कर डाला और अन्य लोगों ने अपनी गर्दन हिलायी। अस्पृश्यों की मनुष्यता जलकर भस्म हुई है। हमने ऐसी सलाह दी कि, इसके खिलाफ अस्पृश्य बहिष्कार करें, तो हमें दोष दिया जाता है-यह कहां का न्याय?

अगर तिलक जैसा कोई व्यक्ति बहिष्कृत वर्ग में पैदा हुआ होता और ब्रिटिश राजसत्ता के मन्वंतर का लाभ होने से उस व्यक्ति को वैसी ही उच्च शिक्षा प्राप्त हुई होती तो वह व्यक्ति 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' की गर्जना न करते हुए निश्चय से यह कह देता कि, 'अस्पृश्यता नष्टमूल करना मेरा कर्तव्य है।'[2] 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तां स्तथैव भजाम्यहम्' गीता का अपना यह प्रिय श्लोक आगे कर धार्मिक और सामाजिक अधिकार हासिल करने के बारे में, 'बाप दिखाओ नहीं तो श्राद्ध करो' ऐसा उच्चवर्णीय लोगों को उन्होंने खुला आवाहन किया होता।'

तिलक के बारे में अम्बेडकर का यह निदान पूर्णतया सही था। तिलक जैसा प्रखर स्वाभिमानी, दुर्दम्य इच्छाशक्ति वाला, स्वाभिमान से ज्वालामुखी की तरह दहकता पुरुष अगर अस्पृश्य समाज में पैदा हुआ होता तो उसने अपनी सारी ताकत सनातनियों के बालाई-किले उड़ा देने में लगा दी होती। स्वाभिमानी अस्पृश्य युवकों को उन्होंने वही दीक्षा दी होती।

आग की आंच को तुच्छ मानकर जीभ पर लेने वाले को जिस प्रकार से वह उसकी जीभ पर फोड़ा लाकर अपनी कदर करने के लिए विवश करती है, वैसे ही अस्पृश्य लोग यदि उन्हें अस्पृश्य कहने वालों की जीभ उखाड़ देते, तो उन्हें कोई अस्पृश्य नहीं कहता।

ब्रिटेन स्थित भारतीय छात्रों और दक्षिण अफ्रीका स्थित भारतीयों के साथ अपमानजनक बर्ताव किया जाता था; इसलिए ब्रिटेन और दक्षिण अफ्रीका के राज्यकर्ताओं का विरोध भारतीय नेता किया करते थे। बाबासाहेब उन्हें ध्यान दिलाते थे कि भारत में भारतीय लोग अस्पृश्यों के साथ कितना बुरा बर्ताव करते हैं। उनका विसंगतिपूर्ण रुख, स्वार्थता, ढकोसला और निगोड़ेपन को चौराहे पर लाकर उनका तीखे शब्दों में विरोध करते थे।

इस तरह के तेजस्वी और फड़कते विचार अम्बेडकर अपनी सुबोध, मुंह तोड़ और ओजस्वी वाणी में व्यक्त करते थे। अम्बेडकर स्वजनों को यह उपदेश करते थे कि, आग की आंच को तुच्छ मानकर जीभ पर लेने वाले को जिस प्रकार से वह उसकी जीभ पर फोड़ा लाकर अपनी कदर करने के लिए विवश करती है, वैसे ही अस्पृश्य लोग यदि उन्हें अस्पृश्य कहने वालों की जीभ उखाड़ देते, तो उन्हें कोई अस्पृश्य नहीं कहता। उन्हें यह लगना

चाहिए कि, अस्पृश्यता पालन यद्यपि धर्म है, तो भी वह जान पर खेलने के समान है। वे गुस्से में आकर यह उपदेश करते थे कि, 'मुसलमानों और स्पृश्य हिन्दुओं की दुश्मनी को पहचानना और उसका उपयोग कर लेना चाहिए। वह भी हिन्दुओं को ठिकाने लगाने का एक मार्ग है। 'दे ग बाई जोगवा' कहने से अधिकार नहीं प्राप्त होते। भिक्षा मांगकर अथवा अन्यों की धर्मबुद्धि पर निर्भर रहने से अपहृत किया गया स्वत्व वापस नहीं आता। उस काम के लिए अपना तेज प्रकट करना चाहिए। बलि बकरे की दी जाती है, सिंह की नहीं। तुममें तेज है, लेकिन तुम्हें इसकी पहचान नहीं है। तुम मुर्गी, बकरी जैसे मेष राशि के नहीं हो। तुम्हारे पुरखों की राशि सिंह थी। वैराटगढ़ जीतने वाले नागनाथ, खर्दे की लड़ाई में नाम कमाने वाले सिदनाक महार, रायगढ़ का किला अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाने वाले रायनाक बाजी महार की उन्होंने याद दिलाई। अम्बेडकर की सीख तेजस्वी और प्रेरणादायी थी; प्रखर और परिणामकारी थी। इस चेतना का प्रवाह दरों-घाटियों से झरझर प्रवाहित हुआ। इस सीख के कारण हर गांव में स्वाभिमान के धधकते अग्निकुंड प्रज्वलित हुए।

सरकार द्वारा अम्बेडकर की बम्बई विधान परिषद् में नियुक्ति के बाद नयी विधान परिषद् का कामकाज 12 फरवरी, 1927 को शुरू हुआ। अम्बेडकर का पहला भाषण दिनांक 24 को बजट पर हुआ। राज्य के कुल साढ़े-पंद्रह करोड़ रुपए लगान में से साढ़े नौ करोड़ रुपयों का कर कार्यकारिणी ने विधान परिषद् की सम्मति के बिना लगा रखा था। इसलिए बजट की परिणामकारी आलोचना करने की कोई गुंजाइश नहीं, इस संबंध में उन्होंने पहले ही खेद व्यक्त किया। लगान पद्धति की एक विशेषता यह है कि वह विश्वसनीय हो। प्रस्तुत बजट तो 'कर' देने वाली प्रजा की दृष्टि से अन्याय है, जो असमर्थनीय है। उत्पादन-कर और लगान वसूलने की पद्धति की वजह से गरीब किसानों पर बहुत बड़ा अन्याय हुआ है। जमीन छोटी हो या बड़ी, फसल पक जाए या ना पक जाए; किसान को विहित लगान देना ही पड़ता है। वैसी बात उत्पादन-कर भरने वालों को नहीं। जिसका उत्पादन कम हुआ हो, उसे कर भी कम करना पड़ता है। दूसरा फर्क यह कि एक निश्चित सीमा के कम उत्पादन होने वाले पर कर नहीं लगाया जाता। लेकिन किसानों से अत्यंत निर्दयता से 'कर' वसूल किया जाता है; चाहे वह अमीर हो या गरीब!'

नशाबन्दी योजना पर उन्होंने कड़ी टीका-टिप्पणी की। उन्होंने अपना मत व्यक्त किया कि, "इस संबंध में सरकार ने अपना रुख तय किया और उसे पूरा करने के लिए कुछ उपाय भी सुझाए; उनमें से एक राशन-पद्धति है। मुफ्त शिक्षा, औषधोपचार की सुलभता, जीवनोपयोगी वस्तुओं की सुलभता होने पर लोग शराब के व्यसन से मुक्त होंगे।" उन्होंने आशा व्यक्त की कि सरकार ये बातें करने के लिए तहेदिल से उत्सुक है।

विधान परिषद् में हुए अम्बेडकर के इस पहले भाषण से उनकी अध्ययनशीलता, किसान और दलित समाज के प्रति सहानुभूमि से भरा उनका दिल और सरकार की निर्भीकता से आलोचना करने की सामर्थ्य-ये गुण दिखाई देते हैं। यह पहला भाषण जानकारी से परिपूर्ण, विचार-प्रवर्तक और उद्बोधक रहा। मार्च 1927 में नशाबन्दी पर पुन: बोलते समय उन्होंने कहा, 'देशी शराब पर ज्यादा चुंगी लगाने से चोरी की शराब का उत्पादन बहुत बढ़ा और उसकी वजह से होने वाली आर्थिक हानि की पूर्ति हम कैसे करते है; इस पर नशाबन्दी की सफलता निर्भर है।' तथापि आगे इन दो कारणों से ही नशाबन्दी के बारे में अम्बेडकर का उत्साह कम होता गया।

शिक्षा के बारे में बोलते समय उन्होंने कहा, 'शिक्षा का प्रबन्ध इस तरह होना चाहिए कि साधारण जनता को शिक्षा सुलभता से प्राप्त हो। निम्न वर्ग के लोगों के लिए शिक्षा बहुत खर्चीली नहीं होनी चाहिए। दूसरी बात यह है कि निम्न वर्ग को उच्च वर्ग के स्तर पर लाने के लिए उन्हें सहूलियतें दी जानी चाहिए। पांच और दस अंकों को दो से गुणा करने से गुणन-फल दस और बीस आयेगा। इसलिए पांच को दो से गुणा कर, दस को एक से ही गुणा करना चाहिए। अत: निम्न वर्ग को काफी सुविधाएं देकर उन्हें उच्च वर्ग के स्तर पर लाना चाहिए। यह कहना ही समता है। इस तरह उन्होंने अपना मत स्पष्ट रूप से व्यक्त किया।

"शिक्षा एक पवित्र संस्था है। पाठशाला में मन सुसंस्कृत होते हैं। पाठशाला का मतलब है-नागरिक तैयार करने वाला पवित्र क्षेत्र! यह एक राष्ट्रीयता, मानवता तथा अज्ञानरूपी अंधकार दूर करने का उदात्त कार्य है। स्कूल में समबुद्धि वाले, उदात्त, नि:पक्षपाती और विशाल हृदय वाले अध्यापक होने चाहिए। अध्यापक वर्ग राष्ट्र का सारथी है क्योंकि उसके हाथ में शिक्षा की लगाम होती है। इसलिए समाज-सुधार की दृष्टि से देखने पर शिक्षक कौन हो जैसा महत्वपूर्ण दूसरा कोई प्रश्न नहीं है। ब्राह्मण निम्न वर्ग के लोगों का तिरस्कार करते हैं। उनकी बौद्धिक उन्नति के बारे में बेफिक्र रहते है। उन्हें जानवरों से भी बदतर समझते हैं। उन्हें

शिक्षा एक पवित्र संस्था है। पाठशाला में मन सुसंस्कृत होते हैं। पाठशाला का मतलब है-नागरिक तैयार करने वाला पवित्र क्षेत्र! यह एक राष्ट्रीयता, मानवता तथा अज्ञानरूपी अंधकार दूर करने का उदात्त कार्य है। स्कूल में समबुद्धि वाले, उदात्त, नि:पक्षपाती और विशाल हृदय वाले अध्यापक होने चाहिए।

हमेशा यह चेताया जाता है कि, अध्ययन करना तुम्हारा काम नहीं। तुम्हारा काम मेहनत, मजदूरी करना है। शिक्षा का काम ब्राह्मण ही करें। इसलिए ब्राह्मणों के हाथ में शिक्षा के सूत्र नहीं देने चाहिए।' यह सूचना उन्होंने सरकार को दी।

इसी मौके पर भारत को स्वतंत्रता की संजीवनी देने वाले छत्रपति शिवाजी महाराज के त्रिशत् संवत्सरी जयन्ती की महोत्सव महाराष्ट्र में मनाया गया। उस अवसर पर बदलापुर में शिवजयंती की जो सभा आयोजित की गई थी, उसका अध्यक्ष-पद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को दिया गया था। यह संयोग विशाल हृदय वाले और हिन्दू धर्म शास्त्र के अच्छे जानकार पांडुरंग भास्करशास्त्री पालये ने बड़ी कुशलता और धीरज से सम्पन्न कराया। उस विशाल जन-समुदाय के सामने शिवाजी महाराज के चरित्र, कार्य और सोच-विचार के बारे में गौरवशाली विचार व्यक्त करते हुए अम्बेडकर ने आगे कहा, शिवाजी द्वारा संस्थापित स्वराज्य-सामाजिक विषमता और पेशवाओं के राज्य के बारे में लोगों का जो तिरस्कार था-उसकी वजह से मिट्टी में मिल गया।'[3]

अम्बेडकर की विधान परिषद् में नियुक्ति के उपलक्ष्य में मार्च के दूसरे सप्ताह में खारा अब्राहम गांव में भीमजीभाई देसाई की अध्यक्षता में उनका अभिनंदन किया गया।

जून महीने के दरमियान मंदिर-प्रवेश के आन्दोलन के बारे में कुछ समाचार-पत्रों में विचार-विमर्श चल रहा था। उन्हीं दिनों यह समाचार छपा कि ठाकुर-द्वार में स्थित नया मंदिर तमाम हिन्दुओं के लिए खुला है। सामाजिक कार्यकर्ताओं से इस बात का भरोसा प्राप्त कर कि वह जानकारी सही है; बाबासाहेब ने मंदिर-प्रमुख के कार्यवाहक के साथ दूरध्वनि पर संपर्क करके वह मन्दिर देखने का दिन तय किया। निर्धारित दिन पर सीतारामपंत शिवतरकर के साथ वे उस मंदिर में पहुंचे। वहां कुछ विघ्नसंतोषी समाजकंटकों ने उन्हें देखते ही एकदम शोर मचाया। अम्बेडकर ने कहा, जिन्होंने हमें आमंत्रित किया है, वे जब तक हमसे जाने को नहीं कहते, हम यहां से नहीं हटेंगे।' गुडों के सामने वे कार्यवाहक गिड़गिड़ाने लगे। मंदिराधिपति तो जैसे गलित-गात्र हो गये थे। बड़े धीरज के साथ जमाव का मुकाबला कर अम्बेडकर और शिवतरकर मंदिर के बाहर निकले।[4] बेचारे मंदिराधिपति को गोमूत्र से मंदिर शुद्ध करते-करते नाक में दम आ गया। जो अम्बेडकर के पतित-पावन पैरों ने नहीं किया, वह पशु के मूत्र ने किया। धन्य वह मंगल देव और पवित्र धर्मराज! अन्य धर्मों के प्रचारक दूसरों से कहते हैं, 'यहां कोई भी आये, उसे देवदर्शन का लाभ होगा' हिन्दू धर्म के पुरोहित स्वजनों से कहते हैं, 'हट जाओ, तुम्हें देवदर्शन नहीं होगे।' यह संगठन है या घर डुबाना?

जुलाई के तीसरे सप्ताह में पुणे की मातंग बस्ती में चमारों की आलोचना को अम्बेडकर ने तीखा समर्पक उत्तर दिया। चमार समाज के कार्यकर्ताओं का कहना था कि अम्बेडकर महारों को आगे-आगे करके उनका ही हित देख रहे हैं। अन्य दलित समाज की ओर वे ध्यान नहीं देते। सभा का अध्यक्ष पद 'दीनबन्धु' पत्र के सम्पादक नवले ने विभूषित किया था। सभा में सूबेदार घाटगे, राजभोज, क.म. जाधव वराड़ के आनंदस्वामी, आर्य समाजिष्ट ओगले उपस्थित थे। हमारे द्वारा नासिक और जलगांव में चलाये गये आवास सारे दलित समाज के लिए खुले हैं, यह कहकर अम्बेडकर ने अपने आवेश पूर्ण भाषण में कहा, 'अगर ऐसा होता तो क्या मैं पी. बालू को बम्बई नगरपालिका पर नियुक्त कर लेता? क्या मैं अपने घर में मातंग के लड़के को विद्याध्ययन के लिए रखता? क्या मैं सभी दलित बन्धुओं में सहभोज करवाता? हमारा आन्दोलन अखिल समाज के उद्धार के लिए ही खड़ा किया गया है। दलितों के हित की रक्षा के लिए दलित समाज के कर्तृत्वशाली कार्यकर्ता का ही विधान परिषद् में जाना उचित था। वह किसी दलित जाति का है, यह देखना ठीक नहीं। मुझ जैसा पुरुष महार जाति में पैदा हुआ, यह महार जाति का भाग्य है। अगर चमार समाज में मुझसे श्रेष्ठ नेता होगा, तो वह मेरी जगह ले ले। मैं यह जगह छोड़ने के लिए तैयार हूं।

अपने अनुयायियों को इशारा कर उन्होंने स्वजनों का बड़ी आस्था से आवाहन किया कि, 'हमें यह खबरदारी लेनी चाहिए कि ब्राह्मणेतरों के खिलाफ इस्तेमाल करने के लिए हमारा उपयोग करने की इच्छा रखने वाले धूर्तों के हाथ की गुड़िया हमें नहीं बनना चाहिए। हिन्दू संगठनवादियों का प्रेम मायावी है। मुसलमानों के भय से वे तुम्हारे साथ मीठी बातें कर तुम्हें भुलाते रहे हैं, यह बात तुम्हारे ध्यान में कैसे नहीं आती? अपने अनुभव से मैं यह कहता हूं कि शिक्षा से अस्पृश्यता दूर नहीं होती। ब्राह्मण द्वारा बम्बई में चलाये जाने वाले एक होटल में मुझे 'कप' से चाय नहीं मिली, वह चाय मुझे गिलास से दी गई। अस्पृश्य वर्ग ने कभी चढ़ाई का रुख स्वीकार नहीं किया। आगे हम अपमानित जीवन व्यतीत नहीं करेंगे। यह बात अगर हम आचार, विचार और कार्य से सिद्ध नहीं करेंगे, तो हमारी बिलकुल उन्नति नहीं होगी। सार्वजनिक पनघट पर पानी भरने का और मंदिर-प्रवेश का अधिकार प्रस्थापित करने का अत्यावश्यक कार्यक्रम सम्प्रति साध्य करना चाहिए।'

शिवाजी द्वारा संस्थापित स्वराज्य-सामाजिक विषमता और पेशवाओं के राज्य के बारे में लोगों का जो तिरस्कार था-उसकी वजह से मिट्टी में मिल गया।

बम्बई विश्वविद्यालय का शिक्षा की दृष्टि से अधिक कार्यक्षम रूप में परिवर्तित करने के बारे में एक विधेयक चर्चा के

लिए जुलाई के अन्त में विधान परिषद् के सामने प्रस्तुत हुआ। बम्बई विश्वविद्यालय अध्यापन संस्था न होकर मुख्यतया वह शिक्षण संस्था संलग्न करने वाली संस्था है। इस तरह की आलोचना उस संस्था के बारे में उसके प्रारंभ से ही हो रही थी। उपर्युक्त विधेयक पर चर्चा करते समय डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''मेरे मत से महाविद्यालय और विश्वविद्यालय को अलग करना उचित मार्ग नहीं। स्नातक और छात्रों के पाठ्‌यक्रम में सांस्कृतिक प्रगति करने के लिए महाविद्यालय और विश्वविद्यालय एक साथ होकर समानता की भूमिका से इस कार्य में सहभागी हो, यही उत्तम मार्ग है।'' उन्होंने यह भी मत व्यक्त किया कि सैडलर समिति की सिफारिशें बम्बई विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त समिति की सिफारिशों से अधिक उपयुक्त है।

बम्बई विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी समिति की रचना के बारे में अपना मत व्यक्त करते हुए अम्बेडकर ने कहा, 'पिछड़े हुए और दलित वर्ग को उस पर प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए।' उस समय 'गुजरात-गुजरातियों के लिए ही' इस प्रकार की चुनाव के जाहिरनामे में गर्जना कर, हमें स्नातक वोट दें-ऐसा कन्हैयालाल मुन्शी कह गये थे। उन्हें अम्बेडकर ने बताया कि, 'जो लोग जातीयवाद की घोषणा कर चुनाव लड़े; उनका दलित वर्ग और पिछड़ी जाति की मांग का विरोध करना एक अचरज है। मुन्शी पर ऐसा आघात होते ही उन्होंने जोर-जोर से कहा, 'यह विधान पूरी तरह से गलत है।' उस पर अम्बेडकर ने उत्तर दिया, 'हां, हां, वह विधान बिलकुल सही है। राजनीति करने वालों की स्मृति कमजोर होती है।' यह चखचख रुकी नहीं कि अम्बेडकर ने कहा, 'हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे की ओर जातीय दृष्टि से देखते हैं।' इतने में विधान परिषद् -अरेरे, नहीं, सिद्ध करो!' इस तरह की गर्जनाओं से गूंज उठी। अम्बेडकर ने प्रत्युत्तर दिया, 'यह ढोंगबाजी है, इस तरह के नकार पर मेरा भरोसा नहीं।'

राज्य की सर्वांगीण उन्नति के बारे में विधेयक की चर्चा में हिस्सा लेकर भी अम्बेडकर आंखों में तेल डालकर दलितों के हित की रक्षा किया करते थे। दलितों पर कहीं कुछ अन्याय हुआ; इसकी धुंधली कल्पना भी आ गई तो वे उस संबंध में विधान परिषद् में सरकार से प्रश्न करके उसे तंग कर दिया करते थे। 'अमुक-अमुक नौकर को उसके लायक होते हुए भी अस्पृश्य समाज में पैदा होने के कारण पदोन्नति नहीं दी गई, क्या यह सच है? क्लर्क की नियुक्ति करने के लिए क्या कोई समिति अस्तित्व में है, या कैसे? सरकारी या अर्धसरकारी विभागों में अस्पृश्य समाज के कितने नौकर है? सरकार के किसी एक मुद्दे पर दो अलग प्रकार के फैसले देने वाले न्यायाधीशों के बारे में सरकार को कुछ जानकारी है या नहीं?'' इस तरह विविध प्रश्नों की सरकार पर झड़ी लगाते थे।

राज्य की सर्वांगीण उन्नति के बारे में विधेयक की चर्चा में हिस्सा लेकर अम्बेडकर आंखों में तेल डालकर दलितों के हित की रक्षा किया करते थे। दलितों पर कहीं कुछ अन्याय हुआ; इसकी धुंधली कल्पना भी आ गई तो वे उस संबंध में विधान परिषद् में सरकार से प्रश्न करके उसे तंग कर दिया करते थे।

अम्बेडकर ने सरकार से मांग की कि सरकार यह जानकारी दे कि प्रत्येक गांव की जनसंख्या कितनी है और उसमें महार कितने हैं? महारों को इनाम के रूप में दी गई जमीन की कितनी उपज है? बलूते के रूप में कितनी और सरकारी तनख्वाह के रूप में कितनी आमदनी होती है? सभी काम-धंधों से महारों को कुल कितना वेतन मिलता है? अम्बेडकर के प्रश्नों पर उन्हें यह उत्तर दिया गया कि ऐसी जानकारी प्राप्त करने के लिए काफी परिश्रम और प्रयास करने होंगे। इसलिए वह काम असाध्य है। एक दिन प्रश्नोत्तर के समय उनकी तत्कालीन गृहमंत्री हॉटसन के साथ विधानसभा में चखचख छिड़ गई। अम्बेडकर ने उनसे पूछा, 'अस्पृश्यवर्गियों की पुलिस में भरती न हो ऐसा कोई नियम है क्या?' हॉटसन ने उत्तर दिया, 'वैसा कोई नियम नहीं।' उस पर अम्बेडकर ने पूछा, 'वैसा नहीं है तो बम्बई पुलिस आयुक्त (कमिश्नर) अस्पृश्यवर्गियों को पुलिस दल में भरती करने से इनकार क्यों करते हैं? जाल में फंसे हॉटसन गुस्से में आकर कहने लगे, 'यह प्रश्न काफी उलझा हुआ है। उससे एक बड़ा मामला उद्‌भूत होगा। मुझे यहां इतना ही कहना है कि, 'उसमें कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां हैं। वे मान्यवर सदस्यों को मालूम है। पुलिस विभाग में अस्पृश्यों की बड़ी संख्या में भरती करते समय वे कठिनाइयां रुकावट डाल रही हैं। तथापि, पुलिस विभाग में अस्पृश्यों को रोक जैसी कोई बात नहीं है। ■

संदर्भः-

1. Ghurye, Dr. G.S., Caste and Class in India, P. 11
2. अग्रलेख, बहिष्कृत भारत, 21 जुलाई 1927
3. बहिष्कृत भारत, 20 मई 1927
4. बहिष्कृत भारत, 1 जुलाई 1927

(पॉपुलर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित धनंजय कीर की लिखी पुस्तक डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र से साभार)

(शेष अगले अंक में)

चौका-बर्तन

■ वंदिता कमलेश्वर

पिछली सर्दियों में ठंड से मां की सांस क्या उखड़ी कमबख्त उखड़ती ही चली गई। बीमारी से घर क्या उजड़ा रुपये भी हवा में खुली गड्डी से फर्र-फर्र उड़ रहे थे। उस पर भरे-पूरे परिवार का खर्च और नाते-रिश्तेदारों का आना-जाना।

घर का काम करते-करते कलेजा मुंह को आ गया था। इससे पहले मां के ठीक रहते पढ़ाई के सिवाय चूल्हा-चौका, कपड़े-धोने को हाथ तक न लगाया। कभी स्कूल की छुट्टी, तो कभी घरेलू काम-काज। तीन-चार महीने से सब कुछ झाड़ू की खुली सींक-सा बिखर चला था। उस पर फर्स्ट ईयर की पढ़ाई।

ठंड के कारण उंगलियां मटर-सी फूल गई थीं। सूजन से उंगलियां लाल क्या हुई, मरे मुर्दे-सी अकड़ भी चली थीं, लेकिन कर भी क्या सकती थी। घर में सबसे बड़ी, उस पर मां को तकलीफ।

डैडी सामाजिक कार्यकर्ता के साथ-साथ साहित्यिक भी हैं। जिसके कारण आने-जाने वालों का न टूटने वाला क्रम बना रहता। कभी चाय, कभी पानी, फिर बर्तनों को साफ करने की खटर-पटर। सुबह पांच-छह बजे उठती, रात को ग्यारह-साढ़े गयारह बजे से पहले सोने का नाम ही नहीं। लेकिन डैडी भी क्या अजीब आदमी हैं कि सब कुछ न होने के बावजूद भी चेहरे पर शिकन या चुभन तक महसूस न करते अपने विराट चेहरे पर, जबकि पिछले दिनों छत से गिरने के कारण पीछे की दो पसलियां चटक चली थीं और उनके चोट का दर्द बना रहता, मगर खुद की चोट से ज्यादा मेरी मां की बीमारी का एहसास उनके जहन में बना रहता। अधेड़ उम्र में एक का खिसकना तबाही से कुछ कम नहीं लगता, वह प्रत्येक मंगलवार को सबसे छोटे भाई को छोड़कर मजबूरी में पटेल चैस्ट इलाज को ले जाते। बड़े भाई से ज्यादा छोटा भाई तीन-साढ़े तीन साल का था जो रोने या पीछे पड़ने का नाम तक न लेता और घर के कोने में बैठा-बैठा खिलौनों से अकेला खेलता रहता।

आखिर एक दिन डैडी की निगाह सूजी उंगलियों पर पड़ी और घरेलू काम करने वाली की तलाश में जुट गए।

बगल में ही काम करने वाली आती। एक दिन बड़ा भइया पूछ ही बैठा- ''अरे माई काम करोगी क्या?''

''कहां घर है?''

''इसी गली में,''

''क्या काम है?''

''चौका-बर्तन और कपड़े! ठीक है,'',

''घर आकर देख लूंगी।''

घर आकर भइया ने मां को बताया, परन्तु वह हफ्ते तक न आई लेकिन पड़ोस की दुकान से कभी-कभार सौदा लेती रहती थी। दुकान वाली को काम वाली के लिए पहले से कह रखा था। एक दिन दुकानदारनी ने पूछा- ''अरी काम करेगी क्या?''

''कहां बहनजी?''

''यहीं पड़ोस में।''

''कौन बिरादर है?''

''तुझे क्या लेना-देना बिरादरी से, फिर भी जाटव हैं, बैंक में नौकर हैं।''

एक पल मौन तोड़कर वह बोली ''बहनजी! मैं तो बामन-बनियों के यहां काम करती हूं।''

तभी दुकानदारनी का माथा ठनका और बोली ''अरी तू कौन बिरादरी है।''

उसने बड़े गर्व से कहा- ''धोबिन हूं।'' मानो मिसरानी हो।

एक दिन दुकानवाली ने घर आकर यह सब घटना मेरी मां को बताई, 'हरामजादी ऐसे-ऐसे...कह रही थी।' उसके माथे पर पड़ी सलवटें देखने लायक थीं। आजादी के पचास वर्ष बाद भी दिमाग से ऊंच-नीच का भेद न निकल पाया जबकि वह भी...।

एक दिन डैडी ने अपने मित्र को यह समस्या बताई जो उन्हीं के साथ बैंक में नौकरी करते हैं। वैसे वो अंकल हैं बड़े खुले विचारों के, जैसे मेरे डैडी। तभी तो दोनों में खूब छनती थी। दोनों घंटों बैठे-बैठे दुख-सुख की बतियाते।

अचानक! एक दिन उन्होंने एक नौकरानी को अपने बच्चों के साथ घर भेजा। मेरी मां उससे बात कर ही रही थी कि इतने में डैडी भी बैंक से आ पहुंचे थे। मां ने बिस्तर पर पड़े-पड़े कहा- ''पांच सौ रुपये की कह रही है।''

डैडी मजबूरी में पांच सौ, क्या हजार भी देने को राजी थे। वही काम करने वाली अपने साथ एक लड़की को भी साथ लेकर आई। देखने में बंगाली मुसलमान लग रही थी। पान की जुगाली से उसके ओंठ लाल हो चले थे। लिपिस्टिक की लाली भी शरमा चली थी। पान की लालिमा के आगे।

बातें चल ही रही थीं। तभी डैडी ने

सिर के ऊपर हाथ रखकर पूछा ''क्या नाम है बेटा।''

''जी, सलमा!''

डैडी का अंदाजा गलत न था। तभी सलमा से पूछा ''तुम्हारी बहन, जी नहीं। ये तो मेरी बेटी है।''

कद और काठी से मां-बेटी बहन लग रही थीं। और मां-बेटी में भेद न कर सके। अभी बातें चल ही रही थीं कि मैं एक प्लेट में खाने के लिए खजूर लेकर आ गई। सर्दियों में खजूर का स्वाद ही कुछ और होता है और ऊपर से ताकतवर औषधि। जब उसे खाने को कहा तो वह अनमने स्वर में ना-नू करने लगी और अंतत: प्लेट से दो-तीन खजूर खाने को उठा ली-

काम के लिए हां करने पर भी मुड़कर वापिस न आई।

जितनी चिंता हमें थी, उससे कहीं ज्यादा उनके मित्र को, उनकी पत्नी भी दमे से पीड़ित थी। उस पर दोनों सरकारी नौकर। सुबह घर से निकलते, शाम को थके-हारे घर लौटते उनके घर में पहले से ही दो-दो नौकरानियां काम कर रही थीं।

सोचा हमारे घर का काम निबटा कर वहां भी काम कर लेगी। लेकिन बात न बनी। एक दिन उन्होंने दूसरी काम करने वाली को घर भेजा और टेलीफोन पर हिदायत दी कि आप पैसा-पाई की बात मत करना, हम सब कुछ तय कर देंगे। मां ने बिस्तर पर पड़े-पड़े ही हां कर दी। अगले दिन से वह काम पर आने लगी, देखने में सीधी-सादी लेकिन बातों में बड़ी बत्तो। थापी से कपड़े पीटते-पीटते साबुन के झाग-सी बातें उठाती चलती। एक दिन बातों-बातों में डैडी ने घर पर कहा कि वह बाल्मीकि है। शायद वह हमारे मन की टोह लेना चाह रहे थे। लेकिन हमें मालूम था कि हमारे डैडी सामाजिक कार्यकर्ता होने के साथ-साथ बौद्धिक जागरण के लिए दलित बस्तियों में जाकर शिक्षा के प्रति रुझान पैदा करते और लड़की-बच्चों के हाथों से झाड़ू-पंजर छोड़ने को उत्साहित करते। बहुतों ने तो अपने बच्चों को कमाने लाना बंद कर दिया था।

उनकी एक कहानी 'और वह पढ़ गई' हिंदी दलित साहित्य में काफी चर्चित हो चुकी थी। बाल्मीकि भाई तो उस कहानी को पढ़कर फूले न समाते और कहानी की फोटो कापी लेकर चले जाते और चौपाल पर जाकर सुनाते।

हमारा परिवार अम्बेडकरवादी बुद्धिस्ट है, जो भी घर में आता। उसके साथ सम-व्यवहार करते। फिर हम बौद्धों में जात-पांत का भेद-भाव ही नहीं होता तभी तो सोफे पर बैठ डैडी के साथ सभी हुक्का गुड़गुड़ाते।

एक दिन फिर अपने मित्र के सामने दोहराया ''भीम बताना सविता कौन है?''

और वह सकते में आ गए।

आखिर यह प्रश्न क्यों कर बैठे?

सहसा कहने लगे-''वह तो भंगिन है।''

''अरे अंकल उस धोबन से तो अच्छी है। जो...। गली मोहल्ले में झाड़ू-पंजर से गंद उठा, सिर पर ढोने से तो अच्छा है कि घर के चौका-बर्तन कर गुजारा कर ले। इस गंदे काम से छुटकारा तो मिलेगा।''

प्रतिदिन सविता काम पर आती रही।

एक दिन काम निबटाकर बोली- ''अंकल कल नहीं आऊंगी।''

''क्यों।''

''बस ऐसे ही कुछ काम है।''

''सब ठीक-ठाक तो है।''

''हां!''

''फिर क्यों नहीं आएगी?''

छुट्टियां हफ्ते में दो-एक वो कर ही लेती थी।

''बस कुछ काम है।''

''अच्छा ऽ ऽ ऽ, कल बाल्मीकि जयंती है।'' डैडी ने कहा।

सविता की हवा टायर के पंचर-सी निकल गई।

कुछ घबराते और गहरी सांस छोड़ते हुए बोली ''अंकल आपको कैसे पता कि हम...।'' और वह फर्श पर खड़ी-खड़ी पैर के नाखून से लकीरें खींचने लगी। मानो मनु की पीठ को पैर के नाखुन से खरोंच-खरोंच कर लहू-लुहान कर देना चाहती हो।

तभी डैडी ने कहा- ''मुझे सब पता है, तुम्हारे परिवार के बारे में।''

विस्मय भाव से व्यथित होकर बोली ''अंकल, हम तो उस काम को छोड़ना चाहते हैं इसीलिए घर से दूर-दराज चौका-बर्तन कर लेते हैं। लेकिन क्या करें, जब किसी को पता चलता है तो काम चुपके से छोड़ना पड़ता है।''

''क्यों?''

''हमारी बिरादरी का काम थोड़े ही है यह सब कुछ करना। हम तो घर-आंगन में भी नहीं घुस सकते। किसी के चौका-बर्तन तो अलग, उन्हीं के गू-मूत ढोये और उन्हीं की नफरत की आग में झुलसे।'' कहते-कहते उसके नथुने फड़फड़ाने लगे, मानो अपने हृदय की सारी आग उड़ेल देना चाहती हो। जाति का ठप्पा ऐसा लगा है जैसे कागज पर सरकारी मोहर लगी हो।

''उन अंकल के आस-पड़ोस में पता चला तो उनके घर-पड़ोसियों ने आना-जाना तक छोड़ दिया, गली-मोहल्ले में काना-फूसी होती सो अलग, लेकिन वो भी कितने पक्के थे। मैंने काम छोड़ने को कहा परन्तु वो अपनी जिद पर अड़े रहे जबकि मैं उनके घर झाड़ू-पोंछा ही करती हूं। आज भी आप दोनों के घर काम करने आती हूं।'' गर्व से सविता का सीना फूल गया।

''अच्छा अंकल कल मैं नहीं आऊंगी,'' महीने की तनख्वाह ले, कहती हुई घर से आंधी के वेग-सी निकल गई। ■

सामाजिक न्याय

■ दीपक कुमार

जुल्म–ओ–सितम की इंतहा, कितनी आम हो गयी,
कोई घर से न निकला, जब शाम हो गयी।

अपना ही देश लगने लगा, गैरों का वतन,
जब चूल्हे की चिंगारी फैली, बदनाम हो गयी।

इस शहर की हर गली में, किसी के नाम का पत्थर,
दुनिया किस ने बनायी, किस के नाम हो गयी।

घेर ली जमीन ना वाकों ने, कर के बदमासियां
जिंदगी इस तरह दो दानों की, गुलाम हो गयी।

कब कौन सी भूख भड़क के, शोला बन जाए,
चलो आज इसकी भी, पहचान हो गयी।

कौन सा नाम लेकर, पुकारूं मैं तुम्हें,
आज सवालों में बाप–बेटे से, बड़ी जात हो गयी।

हम कल फिर धर्म–ओ–रिवाज से, बड़ी इंसानियत बनाएंगे,
भले चाह आज काफी कोशिश, नाकाम हो गयी।

दिल की बात होठों पर, लायी न गई।
इसे अंधेरे में शमां, जलायी न गई।

दर्द में लिपटा रहा, आंसुओं का कतरा,
राहत अब तक उन्हें, पहुंचायी न गई।

खुद को मुफलिसी में, सम्भाल पाओगे तुम,
दोज़ख भी यहां है, बात बताई न गई।

फिक्र उन्हें है, ईलाही होने और दिखने का,
दो चार जियाले दें, तो तबीयत छिपाई न गई।

उनके वादे पर भरोसा है, वफाओं की कसम,
सब सच हैं मगर, वक्त पे निभाई न गई।

कह दे अगर जो, तो बह जाए उधर गंगा,
और उनसे लगी आग, अब तक बुझायी न गई।

हम कब तक सम्भाले रहते, जुनून–ए–सरफरोशी को,
अब कौन बचा, जिसकी टोपी उछाली न गई।

मनुष्य नश्वर है, वैसे ही विचार भी नश्वर हैं। एक विचार को प्रसार की ठीक वैसी ही आवश्यकता होती है जैसे एक पौधे को सिंचाई की जरूरत होती है। अन्यथा दोनों ही कुम्हल कर मर जाएंगे।

–डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

Men are mortal. So are ideas. An idea needs propagation as much as a plant needs watering. Otherwise both will wither and die.

–Dr. B.R. Ambedkar

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

'बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वाड्.मय'

Collected Works of Babasaheb Dr. B.R. Ambedkar (CWBA)

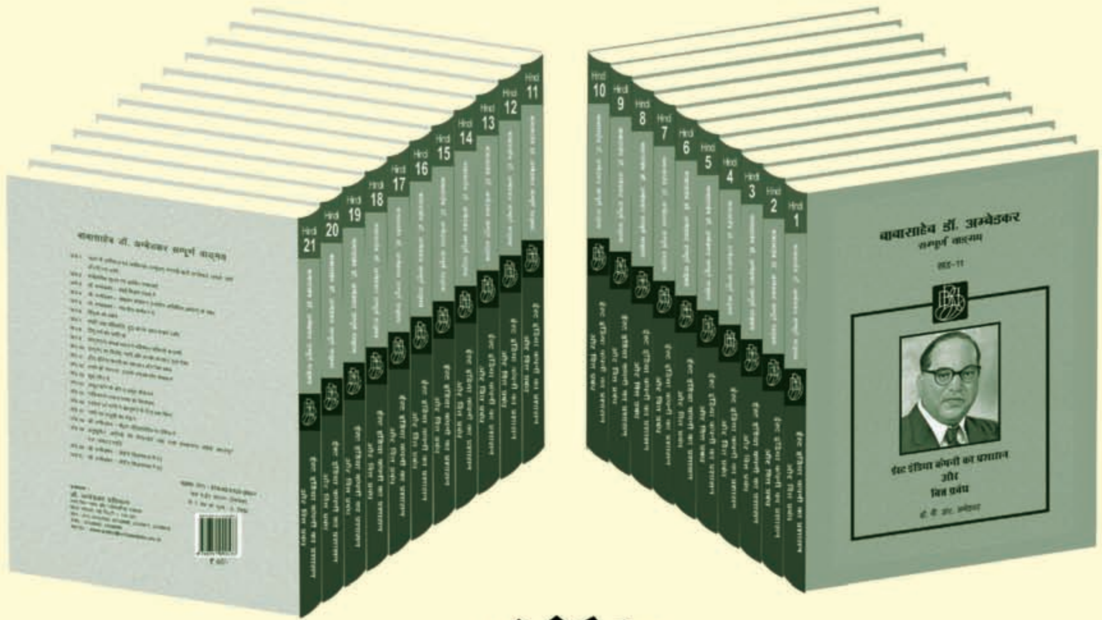

Offer Price
Rs. 671/-* Per set
(A Set of 21 Books)

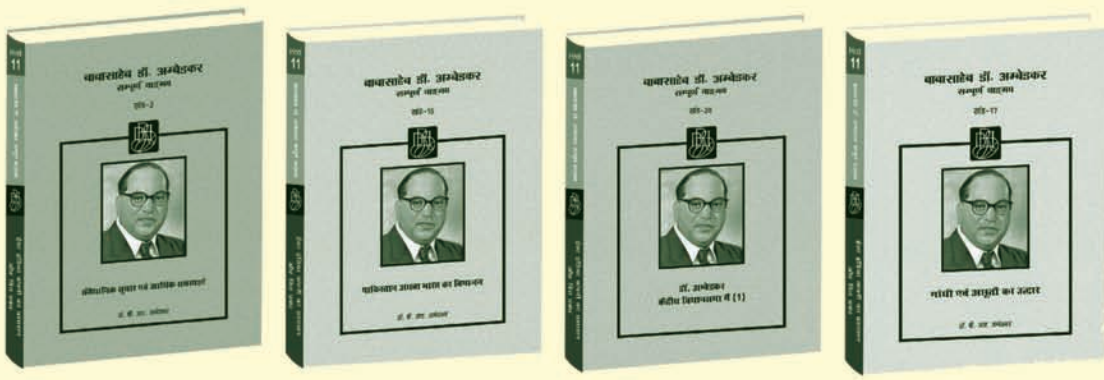

स्वयं पढ़े एवं दूसरों को पढ़ने के लिए प्रेरित करें।

15, जनपथ, नई दिल्ली-110001, फोन नं. 011-23357625, 23320589, 23320571, 23320576, फैक्स: 011-23320582
Website: www.ambedkarfoundation.nic.in

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
Dr. Ambedkar Foundation
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार
Ministry of Social Justice & Empowerment, Government of India

15, जनपथ, नई दिल्ली-110001,
फोन नं. 011-23320588, 23320589, 23320571, 23320576,
फैक्स: 011-23320582
Website: www.ambedkarfoundation.nic.in

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

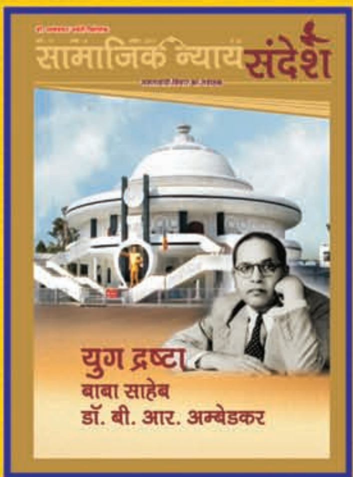

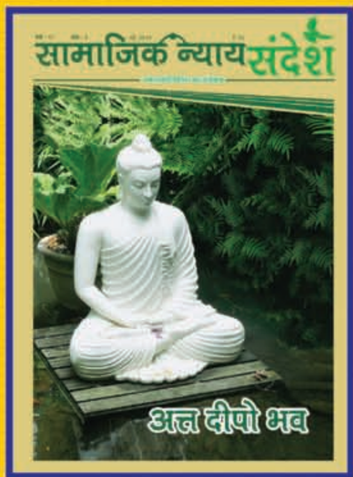

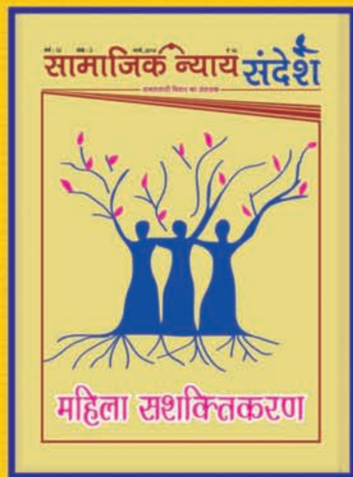

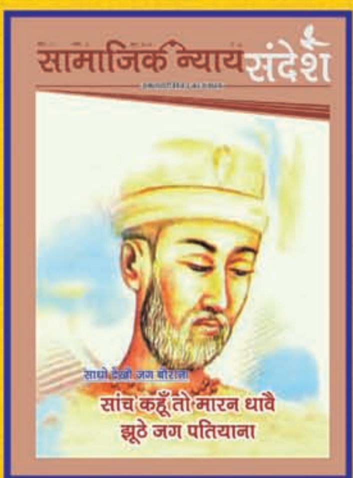

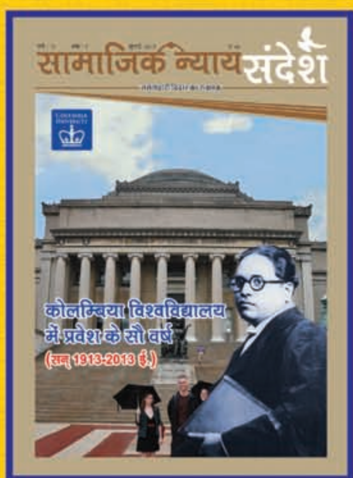

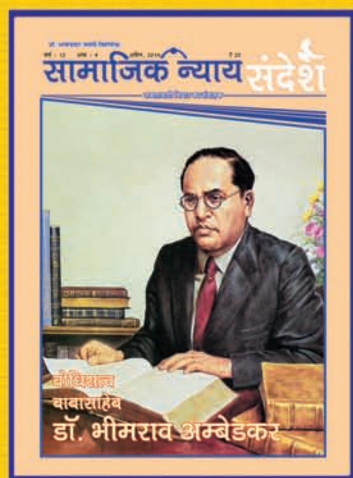

स्वयं पढ़े एवं दूसरों को पढ़ने के लिए प्रेरित करें।

15, जनपथ, नई दिल्ली-110001, फोन नं. 011-23320588, 23320589, 23320571, 23320576, फैक्स: 011-23320582
Website: www.ambedkarfoundation.nic.in

सामाजिक-आर्थिक व सांस्कृतिक सरोकारों की पत्रिका

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन द्वारा प्रकाशित सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सरोकारों की पत्रिका *'सामाजिक न्याय संदेश'* का प्रकाशन पुनः आरम्भ हो गया है। समता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व एवं न्याय पर आधारित, सशक्त एवं समृद्ध समाज और राष्ट्र की संकल्पना को साकार करने के संदेश को आम नागरिकों तक पहुँचाने में सामाजिक न्याय संदेश की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। 'सामाजिक न्याय संदेश' देश के नागरिकों में मानवीय संवेदनशीलता, न्यायप्रियता तथा दूसरों के अधिकारों के प्रति सम्मान की भावना जगाने के लिए समर्पित है।

'सामाजिक न्याय संदेश' बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर के विचारों व उनके दर्शन तथा फाउन्डेशन के कार्यक्रमों एवं योजनाओं को आम नागरिकों तक पहुँचाने का काम बखूबी कर रहा है।

सामाजिक न्याय के कारवां को आगे बढ़ाने में इस पत्रिका से जुड़कर आप अपना योगदान दे सकते हैं। आज ही पाठक सदस्य बनिए, अपने मित्रों को भी सदस्य बनाईए, पाठक सदस्यता ग्रहण करने के लिए एक वर्ष के लिए रू. १००/-, दो वर्ष के लिए रू. १८०/-, तीन वर्ष के लिए रू. २५०/-, का डिमांड ड्राफ्ट, अथवा मनीऑर्डर जो **'डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन'** के नाम देय हो, फाउन्डेशन के पते पर भेजें या फाउन्डेशन के कार्यालय में नकद जमा करें। चेक स्वीकार नहीं किए जाएंगे। पत्रिका को और बेहतर बनाने के लिए आपके अमूल्य सुझाव का भी हमेशा स्वागत रहेगा।

– सम्पादक

सामाजिक न्याय संदेश सदस्यता कूपन

मैं, डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'सामाजिक न्याय संदेश' का ग्राहक बनना चाहता /चाहती हूँ/
शुल्कः वार्षिक सदस्यता शुल्क रू. 100/-, **द्विवार्षिक सदस्यता शुल्क** रू. 180/-, **त्रैवार्षिक सदस्यता शुल्क** रू. 250/-।
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)
मनीऑर्डर/ डिमांड ड्राफ्ट नम्बर..दिनांक.......................संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/मनीऑर्डर 'डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन' के नाम नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

....पिन ....

फोन/मोबाईल न.....................................ई.मेलः ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित निम्न पते पर भेजिए :

डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन

15 जनपथ, नई दिल्ली-110 001 फोन न. 011-23320588, 23320589, 23357625

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के 59वें महापरिनिर्वाण दिवस पर संसद भवन के प्रांगण में आयोजित कार्यक्रम में पुष्पांजलि अर्पित करने के उपरांत बौद्ध भिक्षुओं को उपहार भेंट करते हुए सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री एवं डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री थावरचंद गेहलोत

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर की महापरिनिर्वाण भूमि 26, अलीपुर रोड़, दिल्ली में 6 दिसम्बर की शाम को आयोजित धम्म पूजा के उपरांत मंत्रालय के संयुक्त सचिव एवं प्रतिष्ठान के सदस्य सचिव श्री संजीव कुमार, प्रतिष्ठान के निदेशक डॉ. देवेन्द्र कुमार धोदावत बौद्ध भिक्षुओं के साथ।

RNI No. DELHIN/2002/9036

प्रकाशक व मुद्रक जी.के. द्विवेदी, द्वारा डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान के लिए इण्डिया ऑफसेट प्रेस, ए-1, मायापुरी इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-1, नई दिल्ली-110064 से मुद्रित तथा डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, 15 जनपथ, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित।
सम्पादक : सुधीर हिलसायन